घोर तपस्वी कर्नाटक गजकेसरी

श्री गणेशलालजी म. सा.

का

जीवन - चरित्र

लेखिका –

सर्वशास्त्र–पारगता पंडितरत्ना प्रवर्तिनिजी
क्षमामूर्ति पूज्य श्री १००८ श्री मानकंवरजी महासतीजी मा सा की
सुशिष्या– बा. ब्र. सिद्धान्ताचार्य साहित्य–रत्न

प्रभाकुँवरजी म. सा.

प्रकाशक—
पन्नालाल जोरावरमल रेवासनी
सिवरल (पुसद)

मुद्रक
द म रानडे
आशा मुद्रण
अकोला

सौ० फुलाबाई रेवासणी की अठाई की
तपश्चर्या के अुपलक्षमें सविनय सप्रेम भेंट

प्रथमावृत्ती
१९००

वीराब्द २४८९
विक्रमाब्द २ १९
ख्री सन १९६३

मूल्य
अनुकरण
५ अपराध

ॐ गुरुदेवाय नमः

समर्पण

जिन महा दिव्य ज्योतिने ज्ञानका प्रकाश देकर जीवनको प्रकाशमय बनाया, पंच महाव्रतरूपी अमूल्य रत्न देकर दारिद्र आत्माको राजा महाराजाओंकी वंदनीय बनाओ, त्यागका मार्ग, मोक्षका सुपथ दर्शाकर कृतार्थ किया, मेरे जीवन-वाटिकाके फूलोंमें सद्गुण-रूपी सौरभ भरा, सद्गुरुनाथका जीवन-चरित्र लिखनेकी प्रेरणा दी, ऐसे परमपवित्र प्रवर्तनी पदालंकृत सर्वशास्त्र-पारगत पंडित रत्ना –

पूज्य श्री गुरणीजी मानकुंवरजी महासतीजी के चरण-कमलोंमें सादर समर्पण।

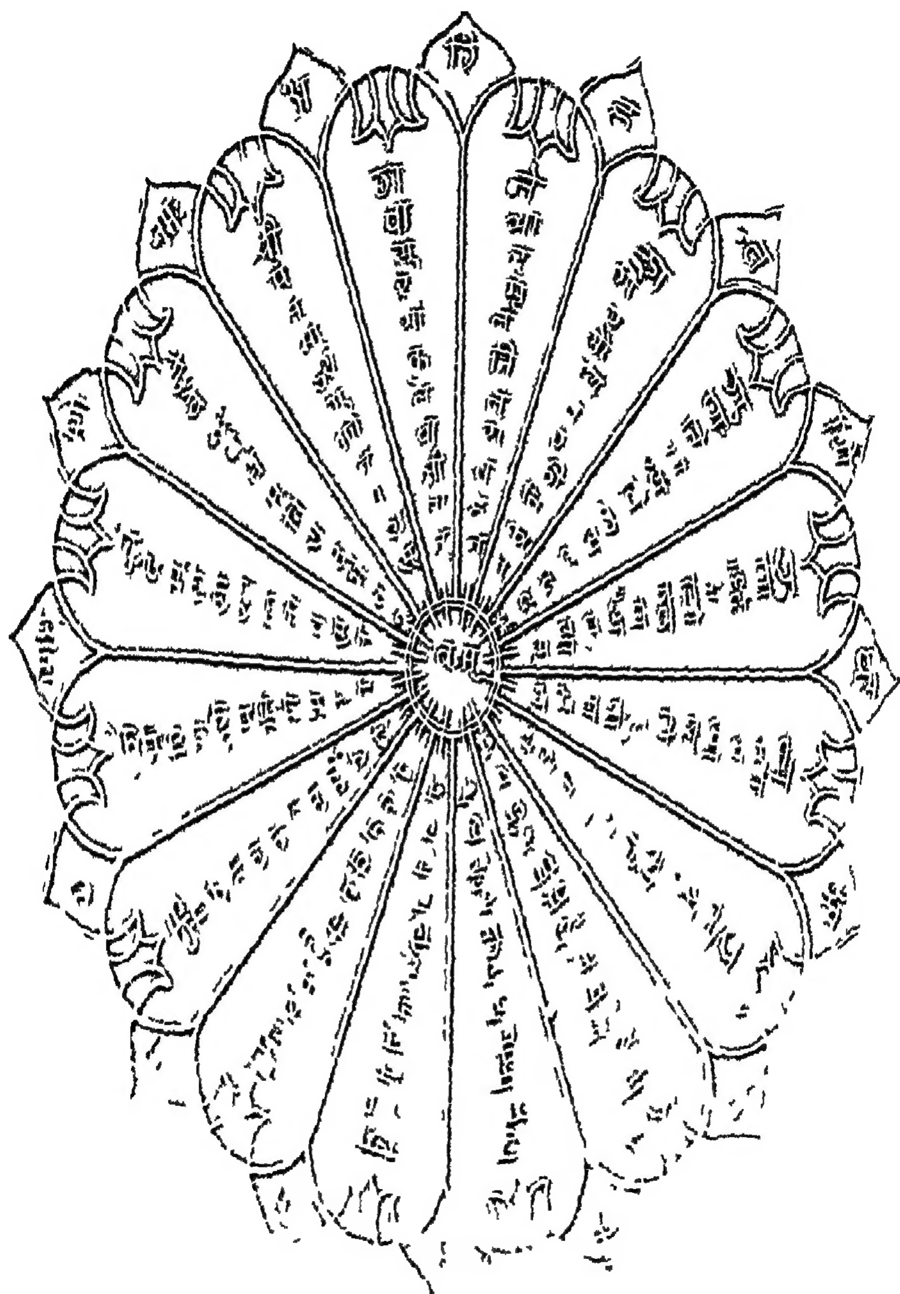
बा ब्र. म. प्रभाकुमारी
जैन-सिद्धान्ताचार्य, सा० रत्न, विशारद.

श्री गणेश अष्टक

मरुधर सुवीरं वीरभूमो अत्र मत्, सुकुल ललवाणी मातुमूली सुकुक्षी
रवनिधतुर्यमि पूण चंद्रो पिताश्री अवतरित भीलाडापूरी पावित्र्य क्षेत्रे ॥१॥
सतत तपातापाद्दीन तापापहारी असम वसन शुद्धिरेषणा इष्टकारी ।
तव चरण धुलिरष्ट कर्मापहारी गणपति गणश' यच्छतु वांछित मे ॥२॥
निरत सतत ध्याने ज्ञान सम्यक्त्व दृष्टि तिमिर गलनदी पोखड पाखडकारी
कलीमल कुदष्टिर्ध्वतु अर्कोऽद्वितीय' ववतु ज्योतिर्ज्योतिदाता गणेश ॥३॥
उदयति यदि तारा एक्षकोटयेसख्या न किमपि तमिर्श दूरी कतु समर्थ'
गगन सघन ध्वान्ते पूर्ण चद्रोभवत ददतु ददतु सौख्य सौख्यदाता गणेश ॥४॥

श्रीमंतमीडयां गुणिन प्रशस्तम्
गुर्वा सुरक्षां कृतवाञ्छितान्तम्
नेत्रादमूतं नितरा वहन्तम्
शरीर–सौम्य धर कीर्तिकान्तम ॥५॥
गुण निकाय्यं विलसत् हृदन्तम्
रुणद्धि अशिष्ट पथ प्रयान्तम
वक्ता सुस्पष्टं विवुधा महन्तम्
स्वराज तेजं च चिद्दुल्लसन्तम ॥६॥
सुव्वसक्षमा धुव्व गुणान् धरन्तम्
स्तलभयं शांति वधू वहन्तम
व्याख्यान मुव्वद दुरित हरन्तम
पचेषु मुख्यारि गणं जयन्तम ॥७॥
कर्पूर भासा यशसा स्फुरन्तम
जगारि पूज्य प्रतिभ भदन्तम्
वन्दे मदा सौख्य करा वसन्तम्
देवेन्द्र वद्य मनिराड भवन्तम् ॥८॥

इत्थं सस्तुति मागमज्वल गण-ग्रामाभिराम स्फुरत्
कीर्तिस्त्व गमितो गणेश मुनिराड विघ्नान विनष्टु क्षय'
मूर्धस्य स्वकनाम पोडन दर्श्नोजन भक्त्या मया
हे कर्नाटक केसरीन्यि जय देहीति मे प्रार्थना ॥९॥



श्री गणेश अष्टक का भावार्थ

हरिगीत

वीरोकी है जो खान, ऐसी मरुस्थली सु-भूमिमें।
ललवाणी कुल उज्वल किया मात घूली कुक्षीमें ॥
पूर्णचन्द्र पिताश्री, रजनि चतुर्थ याममें।
अवतार लिना आपने, परम विलाडा ग्राममें ॥१॥

लेके दीक्षा तपतेजसे, दीनोके दुख हरते रहे।
आहार-वस्त्र-एषणामें, निशदिन सजग रहते रहे॥
आपके चरणोकी रज, अष्ट कर्म हरती सदा।
हे सघ नायक गणेश गुरु, मुझे दीजिए वाछित मुदा ॥२॥

शुक्ल धर्मध्यान अरु, सुदृष्टि सम्यकज्ञानमें।
मिथ्या तिमिर हरण, दीपक दक्ष पाखड निरासमें ॥
कलिकालमें कुदृष्टि मेटन सूर्य सदृश आप थे।
दीजिए श्री गणेश सुखको, सौख्य दाता आप थे ॥३॥

लाखो करोडो तारिकाएँ, उदय होती आकाशमें।
समर्थ हो सकती नही, स्वल्प तिमिर नाशमें ॥
चद्रसम थे आप श्री, जैन मत प्रकाशमें।
दीजिए श्री गणेश मुझको ज्ञान ज्योति कलिकालमें ॥४॥

काति अरु कीर्तिसे युक्त, गुणियोमें श्रेष्ठ आप थे।
गौओकी रक्षा करन तत्पर, रहते हरदम आप थे ॥
-सुदर सुनेत्रोसे सदा, अमृत झरता आपके।
-सौम्यता काति हमेशा, देहसे झलकती आपके ॥५॥

आप हृदयमें गुणोंका वास अहर्निश करता रहा।
कुमार्ग गामी व्यक्तियोंको सुमार्गपर लाता रहा॥
स्पष्टवक्ता आप और विद्वानभी महान थे।
चित्त रहता था प्रसन्न और तपसे कांतिमान थे॥६॥

शांति क्षमादि धर्मदशको पालते शुद्ध भावसे।
ज्ञान दर्शन चारित्रत्रयको रखते प्रण प्राणसे॥
संयम सु-गहमें वास करते शांति वधू रहे साथमें।
इंद्रिय विषयको जीतके अरु ध्यान रहता मोक्षमें॥७॥

श्वेत कर्पूरसम शुभ्र यशसे आप दैदिप्यमान थे।
देवताके वंदनीय गुरुराज आप महान थे॥
सुख लतामें वास करते कर नाश पापोंका सभी।
वंदन मैं करती आपको आनंद मगन होकर अभी॥८॥

इस तरह स्तुतिमार्गसे शुभगुण प्रकाशित हो रहे।
विघ्न विनाशक श्री गणेश मुनिराज प्रसिद्ध हो रहे॥
शुद्ध भक्तिसे मन कमलमें नाम अंकित है किया।
हे कर्नाटक गज केसरी तेरा शरण मैंने लिया॥९॥



इस ग्रंथके प्रकाशक –



दानवीर सेठ श्रीमान् पन्नालालजी सा रेदासणी

प्रकाशक की ओर से

प्रिय सज्जनो,

जब पृथ्वीपर अनाचार फैल जाता है तब लोग धर्मको भूलकर अधर्म को अपनाते हैं। सम्यक्त्व को छोड मिथ्यात्व को अपनाते है। ठीक अिसीसमय महापुरुष वहाँ पधारकर भूले हुवो को मार्गदर्शन करते है।

अिसी अनुसार हमारे पिछडे हुये विभाग में गुरुदेव की कृपासे सर्वशास्त्रपारगता पडितरत्ना प्रवर्तिनिजी क्षमामूर्ति व पूज्य श्री १००८ श्री मानकँवरजी महाराजसाहब का आगमन हुवा। आपने ज्ञानरूपी अमृत पिलाकर समाजमें जागृति निर्माण की। आपकी गुणोसे युक्त शिष्य मडली सेवाभावी सरलस्वभावी श्री धन्नकँवरजी महाराजसाब, बाल ब्रह्मचारी शास्त्रविशारद विदुषि मधुरव्याख्यानी श्री पुष्पाकँवरजी महाराज साहब, ज्ञानअभ्यासी श्री धिरजकँवरजी महाराजसाहब, बाल-ब्रह्मचारी सिद्धान्ताचार्य साहित्यरत्न श्री प्रभाकँवरजी महाराजसाब, विद्याभिलापि जैनसिद्धान्तप्रभाकर श्री प्रमोद कँवरजी महाराजसाब आदि सती वृंदने लोगोको योग्य मार्गदर्शन कर, अुनको जैनत्व का असली परिचय करवाया। और साथहि बाल ब्रम्हचारी सिद्धान्ताचार्य साहित्यरत्न श्री प्रभाकँवरजी महाराजसाबने गुरुदेव का चरित्र यहाँपरहि लिखना-प्रारभकर सम्पूर्ण किया। आप बडी विद्वान तथा शास्त्रपारगता है। आप कअी भाषाअें जानती है। जिनमेंसे हिन्दी, मराठी, सस्कृत, इग्रजी, प्राकृत, गुजराथी और थोडी अुर्दू आदि। आपने आयु के चौदहवे वर्षमेंहि दीक्षा अगीकार की। आपने बहुतसे जैन तथा अजैन शास्त्रोका अध्ययन किया है। आपकी व्याख्यानशैली असामान्य है। नामके अनुसारही जनताको प्रभावित कर देती है।

अैसे महान् विभूति द्वारा लिखा हुवा चरित्र पाठकोके करकमलोमें देते समय हमें बहुत हर्ष हो रहा है। आशा है कि यह चरित्र पढकर पाठकगण श्री गुरुदेव का आदर्श तथा शिक्षा अपनायेंगे। सतीयाजीको हार्दिक बधाई है।

तिवरंग
दिनाक २८-१२-६२ }

विनम्र
भवरलाल बोथरा, प्रकाश बडेरा.

प्रकाशक का संक्षिप्त परिचय

विश्ववाटिकामें असंख्य फूल खिलते है। और ऐसेही खिलते रहेंगे। और अन्तमें ये सब फूल धरतीमाँके गोदमें समा जाते हैं। लेकिन जो पुष्प अपने जीवनकी परवाह न कर अन्यों के उपयोगमें आते हैं लाखोंकी मुक सेवा करते है अपने आपको दुसरोंकी भलाईमें अर्पण कर देते है उन्हींका जीवन सार्थक होता है।

और जो पुष्प दुसरोंकी कुछभी भलाई नहीं कर सकते दुसरोंके निराश जीवनमें उत्साह नहीं भर देते जिसकी पवित्रता अन्योंकि दुःखके दाग नहीं धो सकती उन पुष्पोका जीवन निरर्थक है।

यही बात मनुष्यके विषयमें कही जा सकती है। जो मनुष्य दुसरोंकी भलाईके विषयमें कुछ सोचता हो दुसरोकी भलाईके साथ साथ जिसके द्वारा अपने जातिकी कुछ भलाई हो अपना वंश गौरवशाली कुलका नाम उंचा हो ऐसे कृत्य करता हो उसी मनु[illegible] सार्थक है।

मनुष्यका जीवन फूलकी तरह विकसित हुवा है। [illegible] परिपूर्ण है। परन्तु यदि इन सब गुणोंका उपयोग अन्य [illegible] नहीं किया तो उसका जीवन [illegible]

दानवीर सेठ श्रीमान् पन्नालालजी सा. रेदासणी की आदर्श पत्नी



श्रीमती फूलबाई रेदासणी

अैसे महानुभावोंका जीवन धारण करना कुछ सार्थक होता है। हम यहांपर जिनके जीवनकी साधारण कल्पना आपको देनेका प्रयत्न कर रहे हैं, उनका जीवन भी उक्त आदर्शोंसे परिपूर्ण है।

आअीए, अैसे गुणोंसे परिपूर्ण प्रकाशक महोदयको मैं आपसे परिचित करवा दूं।

दानवीर, श्रद्धेय, श्रीमान सेठ पन्नालालजी सा रेदासनी, स्थानकवासी जैन समाजके सुश्रावकने सवत १९४८ सन १८९१ को तिवरग (महाराष्ट्र) श्रीम ग्राममें जन्म लेकर रेदासनी कुलको अुज्वल किया। आपके पिता श्रीमान स्व सेठ जोरावरमलजी भी महान धार्मिक तथा उच्च आदर्शोवाले व्यक्ति थे। आप मूल निवासी राजस्थानमें 'पी' (थावळा) के है।

स्व पूज्य श्री गणेशलालजी म सा. के आप अनन्य भक्तोमेंसे एक है। आपने सर्व शास्त्र पारगता, पडितरत्ना, प्रर्वतिनीजी, क्षमामूर्ति, पूज्य श्री १००८ श्री श्री मानकुंवरजी म सा. आदि ठाणा ६ का शेवाल पीपरी में अद्वितीय चातुर्मास करवाकर समाजको ज्ञानरूपी लाभ दिलवाया। तिवरगमेंही चातुर्मास करवानेकी आपकी वडी इच्छा थी, परतु कुछ नैसर्गिक आपत्तियोसे वह पूरी नही हो सकी। अुसकी पूर्ति शेवाल-पीपरी चातुर्मास करवाकर की। आप बडे सरल स्वभावी, दयालु तथा परोपकारी है। किसीका दु ख अपनाही समझकर अुसे निवारण करते है। आपने अपने जीवनमें ऐसे अनेक सत्कार्य किए जिनका यहाँ वर्णन करना मेरे लिए असम्भव है। कुछ मुझे ज्ञात है वह यहाँ देता हू।

दगड धानोराके (१९३०) के डकैती केसमे डाकुओके गीरोहको पकडवानेमें आपने पुलीसकी वहुत सहायता की जिसके उपलक्षमें पुलीसकी ओरसे सर्टिफिकेट (प्रशस्तिपत्र) प्रदान किया गया।

सन १९४७–४८ में जब भारत और पाकिस्थान विभाजित हुए-
अुस समय हिंदु और मुसलमानोंमें जातीय दंगल मच गया था। निझाम स्टेटके हिंदुओंपर मुसलमान (रझाकार) बडा अत्याचार कर रहे थे। अुस समय आपने निझामस्टेटके बहुतसे हिन्दु परिवारोंको आश्रय दिया।

आपका लक्ष्य दानधर्मकी ओर पहलेसेही है। सिवरग मे खेतमें एक जगह पक्षियोंके लिए आप अनाज डलवाते है।

आपका हृदय बहुत कोमल है। दुःखियोंको देखकर जल्दी द्रवित हो जाता है। देहाती गरीब लोगोंको हरदम अन्न, वस्त्र तथा जाडेमें ओढनेके कम्बल देकर आप अुनकी सहायता करते है। आपने कुछ विद्यार्थियोंको विद्या प्रदानकर उन्हें उपकृत किया है।

आपने दो निरपराध गरीब व्यक्तियोंको प्रयत्नोंकी पराकाष्ठा कर उन्हें फांसीकी शिक्षासे मुक्त किया। अुनमेंसे अभी भी एक व्यक्ति जीवित है। और आनंदसे जीवन व्यतीत कर रहा है।

बहुतसे धार्मिक कार्योंमें आप अपना सहयोग देकर उन्हें पूर्ण करते है। आप अपने जीवनमें दानादि कार्योंमे हरदम अग्रसर रहे है। और बहुतसा दान दिया है। आपने बारह व्रतोंको व्रतरूपमें ग्रहण नही किया है फिर भी सुचारु रूपसे पालन कर रहे है। आपकी व्यवहारिकता सादगी तथा उदारता हमारे लिए अनुकरणीय है।

आपकी आदर्श धर्मपत्नी श्रीमती फूलबाई जिन्होने देवालगांवकें 'रायसोनी' परिवारमें जन्म लेकर दोनों कुलोंको उज्वलित किया है। आपमें सेठ साहबके अनुकूल सब गुण पाय जाते है। धर्ममें आप अच्छी रुची रखती है। आप नामानरूप फूलके समान हरदम संतुष्ट नजर आती है। आप स्थानीय महिला समाज मे प्रमुख अग्रणीय है। श्रावकोंके बारह व्रतोंका आप पालन करती है और उनको व्रतरूपमें अंगीकार भी किया है। आप आदर्श श्राविका है। आपकी आयु आज ६५ वर्षकी

होने परभी आप अपने सब कार्य स्वय करके अन्योको प्रेरित करती है। और इस आयुमेंभी पूज्य गुरुणीजीके सानिध्यमें आपने अठाइकी तपश्चर्या की है। आप विवेकशील, व्यवहारकुशल एव धर्मनिष्ठा है। आपको एक पुत्ररत्न तथा एक कन्यारत्न प्राप्त हुवा था, परन्तु प्रकृतीने उनसे सुख प्राप्त करनेका अवसर नही दिया। फिरभी विगतकी शोकपूर्ण घटनाओको कभी न दोहराकर आप हरकार्यमे उत्साहसे भाग लेती है।

आज ऐसीही महिलाओकी समाजमे आवश्यकता है। आपकी धर्माभिरूची एव ज्ञानरुची अनुकरणीय है।

अन्तमें, मै अुन महानुभावोका आभारी हूँ जिन्होने मुझे अैसे पुण्यात्माओके बारेमे दो शद्ब लिखनेका अवसर दिया।

आकोला
२६ जानेवारी ६३

विनम्र
धरमचद बडेरा, बी. कॉम.

सन १९४७–४८ में जब भारत और पाकिस्थान विभाजित हुए, अुस समय हिंदु और मुसलमानोंमें जातीय दंगल मच गया था। निझाम स्टेटके हिंदुओंपर मुसलमान (रझाकार) बडा अत्याचार कर रहे थे। अुस समय आपने निझामस्टेटके बहुतसे हिन्दु परिवारोंको आश्रय दिया।

आपका लक्ष्य दानधर्मकी ओर पहलेसेही है। तिवरंग मे खेतमें एक जगह पक्षियोंके लिए आप अनाज डलवाते है।

आपका हृदय बहुत कोमल है। दुःखियोंको देखकर जल्दी द्रवित हो जाता है। देहाती गरीब लोगोंको हरदम अन्न वस्त्र तथा जाडेमें ओढनके कम्बल देकर आप अुनकी सहायता करते है। आपने कुछ विद्यार्थियोंको विद्या प्रदानकर उन्हे उपकृत किया है।

आपने दो निरपराध गरीब व्यक्तियोंको प्रयत्नोंकी पराकाष्ठा कर उन्हें फांसीकी शिक्षासे मुक्त किया। अनमेंसे अभी भी एक व्यक्ति जीवित है। और आनंदसे जीवन व्यतीत कर रहा है।

बहुतसे धार्मिक कार्योंमें आप अपना सहकार्य देकर उन्हें पूर्ण करते है। आप अपने जीवनमें दानादि कार्योंमे हरदम अग्रसर रहे है। और बहुतसा दान दिया है। आपने बारह व्रतोंको व्रतरूपमें ग्रहण नहीं किया है फिर भी सुधार रूपसे पालन कर रहे है। आपकी व्यवहारिकता सादगी तथा उदारता हमारे लिए अनुकरणीय है।

आपकी आदर्श धर्मपत्नी श्रीमती फूलबाई जिन्होने बेबालपीपरीके "रायसोनी" परिवारमें जन्म लेकर दोनों कुलोंको उज्वलित किया है। आपमें सेठ साहबके अनुकूल सब गुण पाये जाते है। धर्ममें आप अच्छी रुची रखती है। आप नामानुरूप फूलके समान हरदम संतुष्ट नजर आती है। आप स्थानीय महिला समाज मे प्रमुख अग्रणीय है। श्रावकोंके बारह व्रतोंका आप पालन करती है और उनको व्रतरूपमें अंगीकार भी किया है। आप आदर्श श्राविका है। आपकी आयु आज ६५ वर्षकी

होने परभी आप अपने सब कार्य स्वयं करके अन्योको प्रेरित करती है। और इस आयुमेंभी पूज्य गुरुणीजीके सानिध्यमें आपने अठाइकी तपश्चर्या की है। आप विवेकशील, व्यवहारकुशल एव धर्मनिष्ठा है। आपको एक पुत्ररत्न तथा एक कन्यारत्न प्राप्त हुवा था, परन्तु प्रकृतीने उनसे सुख प्राप्त करनेका अवसर नही दिया। फिरभी विगतकी शोकपूर्ण घटनाओको कभी न दोहराकर आप हरकार्यमे उत्साहसे भाग लेती है।

आज ऐसीही महिलाओकी समाजमें आवश्यकता है। आपकी धर्माभिरूची एव ज्ञानरुची अनुकरणीय है।

अन्तमें, मै अुन महानुभावोका आभारी हूँ जिन्होने मुझे अैसे पुण्यात्माओके बारेमें दो शब्द लिखनेका अवसर दिया।

आकोला
२६ जानेवारी ६३

विनम्र
धरमचद बडेरा, बी. कॉम.

" णमोत्थुण समणस्स भगवो महावीरस्य "

प्राक्कथन

सूरतसे कीरत बडी बिना पख उड जाय।
सूरत तो जाती रही कीरत कभू न जाय॥

कोटा सम्प्रदायके प्रवर्तिनीजी स्था० जन स्थवीर महासतीयांजी क्रिया पात्र आगम पारगत पंडितरत्ना तपस्वी गुणनिधी क्षमा मूर्ति श्री श्री १००८ मानकुंवरजी म० सा अपने अन्य सुशिष्यासहित इस क्षित्रमें विचरने लग, तब आपने यहांपर चातुर्मास करना निश्चित किया। एसा करनमें आपके प्रकृतिनभी साथ दी। आपके साथ सेवाभावी सरल स्वभावी श्री धनकोंवरजी म० सा० बालब्रह्मचारी शास्त्र विषारद विदुषी मधुर व्याख्यानी श्री पुष्पाकवरजी म० सा ज्ञान अभ्यासी श्री धिरजकुंवरजी म० सा, बालब्रह्मचारी सिद्धान्ताचार्य साहित्यरत्न श्री प्रभाकंवरजी म० सा० विद्याभिलापी जन सिद्धांत प्रभाकर श्री प्रमोद कंवरजी म० सा० है। वैसे तो सभी महसतीयाजी योगी, त्यागी सरलस्वभावी अणगार गुणोंसे परिपूण है। लेकिन श्री पुष्पाकवरजी म० सा० तथा श्री प्रभाकोंवरजी म० सा० के वाणीमें भिन्न भिन्न प्रकारका ओज है। श्री पुष्पा कोंवरजी म० सा० के वाणीमें जितनी मधुरता आती है उतनिहि विद्वत्ताकी प्रखरता श्री प्रभाकोंवरजी म० सा० के वाणीमें प्रगट होती है। श्रावकोंके बिनती को मान देकर श्री १००८ पूज्य प्रवर्तिनिजी गुरुणीजी म० सा० ने श्रावकोंकी इच्छा पूर्ति के लिये पूज्य स्व गुरुदेवका जीवन चरित्र लिखनेका भार अैसे प्रभावी वक्ता श्री प्रभाकवरजी म सा० को सौंपा।

अैसे तो किसी महापुरुषका जीवन चरित्र लिखना कठिन कार्य है। लेकीन धार्मिक महापुरुषोंका जीवन-चरित्र लिखना अति कठिण कार्य है।

कारण अैतिहासिक महापुरुषोके जीवन कार्यकी सुसबद्धता सुलभतासे प्राप्त हो सकती है। धार्मिक पुरुषोके बारेमे यह अति कठिन कार्य है। यह कार्य महा० लेखिकाने पूर्ण करके स्वर्गीय गुरुदेव के भक्तजनोपर महद् अुपकार किया है।

स्वर्गीय गुरुदेवका चरित्र यथार्थ रूपमें समझनेके लिये निम्न लिखित विषयोको सही तौरसे समझना होगा। आज गुरुदेवके जो अनुयायी है, अुनमें जो शकाये निर्माण हो रही है अुनका कारण यह है कि स्व. गुरुदेवके कार्यो को सही रूपमें समझाहि नही और स्व गुरुदेवने जो त्यागमय जीवनका अुपदेश दिया अुन तत्वोकोभी सही अर्थमें समझा नही अैसा जान पडता है। अिसके दो कारण हो सकते है। (१) गुरुदेव को अितना समय मिलाहि नही, अुनके पवित्र हृदयमें एकहि लगन थी कि अधिक से अधिक जैन जनता को सत् पथपर किस प्रकार लाऊँ, अिसलिये अुनके कार्यको विपद रूपसे समझानेको समय अपुरा था। (२) दुसरा यह कारण कि लोग गुरुदेव को शका या प्रश्न पूछनेमे बहुत डरते थे। यहाँतककि अगर कोई श्रावक गुरुदेव से प्रश्न, शकानिवारणार्थ पूछते थे तो अन्य श्रावक अुसे दबा देते थे। मेरेपरभी अैसाहि प्रसग गुजरा। स्वर्गवासके कुछहि महिने पूर्व गुरुदेव ढाणकी से विहार करते–करते यहाँपर पहुँचे। मिथ्यात्व, मुर्तिपूजा आदि विषयोपर मैने प्रश्न पूछे। जो श्रावक अुस समय उपस्थित थे, अुन्होने मुझे अैसा करनेसे रोकनेका प्रयत्न किया। लेकिन मनुष्य अगर पवित्र अत करणमे विनययुक्त होकर शका पूछे तो डरनेका कोई कारण नही रहता। स्व. गुरुदेव ने बडी उदारतासे शात चित्तसे मेरी शकाओका निरासन किया। यह चर्चा करिब्न २ घटेतक चली। हाँ, तो जिन विषयोको समझना जरुरी है वह यह है। (१) अुस समय समाजकी धार्मिक स्थिति (२) जैन धर्मका स्वरूप (३) जैन साधु (४) मिथ्यात्व (५) गुरुदेव का कार्य

(१) जिस समय स्व गुरुदेवने भगवती प्रवज्या पू महासत त्यागी श्री श्री १००८ प्रेमराजजी म सा के पास वी मवत १९७० मिगसर

सुध नवमी को की अुस समय श्वेतांबर स्था जैन समाजमें मिथ्यात्वका दौरा दौर था। जैन कहलानेवाले जैन धर्मके तत्वको अच्छी तरहसे जानतेहि नही थे। किताब पढते समय अिस बात का ज्ञान हो जाएगा कि कर्नाटक मराठवाडा अिस विभागके ओसवालोंको नवकार मंत्रभी पुरा नही आता था। वे जैन साधु सतोंको किस प्रकार आहार पाणी बहरावे यह ज्ञान कहांसे हो ! अधिकांश जैन जनता एकान्त धर्मकाहि पालन कर रही थी। उपवास करना और माला फेरना अितनाहि जानते थे। जैन जातिमें उत्पन्न होनसेहि वे लोग जैन कहलाते थे। आत्माभिमान तो नही के बराबर था। अैसी परिस्थितिमें और अिसी विभागमें स्वर्गीय गुरुदेवने अधिक प्रमाणमें अपना कार्य जारी रखा। और कर्नाटक केसरी के अुपाधि से जैन जनताने अलंकृत किया।

(२) हम खुदको जैन कहलाते है। लेकिन हमारा धर्म अन्य धर्मोसे वैदिक इस्लाम खिश्चन, पारसी वैशेषिक नैयायिक आदिसे किसप्रकार भिन्न है और हमारे क्या मूलतत्व है यह हम बहुत कम प्रमाणमें जानते है। जैन धर्म वैज्ञानिक आत्मवादी पुरुषार्थवादी विकासवादी कर्मवादी क्रियावादी लोकवादी है। अिन सभीका स्पष्टीकरण विचारपूर्ण आचारांग आदि अंगप्रविष्टोंमें किया है।— भगवान महावीर स्वामीने आजसे करीबन२५०० वर्ष पूर्व कहा था कि शब्दरूपी पुद्गलमय है और अिस तत्वपर रेडिओका शोध लगा है। विज्ञान तो यहांतक ढूंढनेका प्रयत्न कर रहा है कि २५०० वर्ष पूर्वके शब्द अेकत्रित करे। वनस्पतीमें तथा जल में जीव है यह सबसे बडी देन ससारको जैन धर्मावलंबियोनेहि दी है। जैन धर्मका कहना है कि अिस संसारमें रूपि और अरूपि अिन दो तत्वोंके सिवाय कुछ नही है। आगे इन्हींको जीवाऽजीवाय बंधो य पुण्णं पावाऽऽसवोतहा। संवरो निज्जरा मोक्खो संते य तहिया नव" ये नवतत्त्व सत्य है। अिस संसारका कारण बताते हुए तीर्थंकरोंने कहा कि जे गुणेसे मूल ठाणे से गुण तृष्णा हि संसार का मूल कारण है। और यह तृष्णा " आगास समा अणन्तिया है अिसलिये इच्छाको तृष्णाको ताबमें रखनेके लिये अंतिम तीर्थंकर भगवानसे आगार-अणगार, धर्मकी प्ररूपणा

करते समय फरमाया कि क्रोध, मान, माया, लोभ अिन कषायोंपर विजय प्राप्त करो और विजय प्राप्त करनेका मार्ग आगारोंके लिये १२ व्रतोंका प्रतिपालन और निग्रन्थ, अणगारोंके लिये पचमहाव्रतका पालन। यह पालन बाह्य तथा अभ्यन्तर तपोसे होता है। जैन धर्मका अुपदेश आत्माको ससारके सभी बधनोसे मुक्त करना है। और वह किस मार्ग से मुक्त हो सकती है अुसका अगोपाग में बहुत विस्तारपूर्वक वर्णन है। अगर हम सागरको घागरमें समाना चाहते तो जैन धर्मोके तत्वोको भी चार "अ" में समाविष्ट कर सकते है। वह यह-अहिसा अस्तेय अपरिग्रह और अनेकान्त। लेकिन अिन सब विषयोको निश्चय तथा व्यवहार-नयसेहि समझना चाहिये। नहि तो अुस विषयका अेकान्तहि स्वरूप दृष्टि-गोचर होगा और एकान्त जैन दृष्टिमें मिथ्यात्व है। अिसीलिये तो आधुनिक तत्ववेत्ता जैन धर्मको "समन्वयवादि" कहते है। भगवान महावीर स्वामिने अुस समयके नास्तिकवादको, ब्रम्हवादको "तज्जीव तच्छरीर वाओ" को "अक्रियावाद को," 'स्कधवादको' 'नित्यवादको' 'नियतिवादको' 'धातुवाद' को 'जगत् कर्तावाद' को, आदि ३६३ मतोका समन्वय किया और फरमाया कि यह सभी वाद किसी अेक अपेक्षासे कुछ हदतक सही है। लेकिन यह सभी वाद एकान्त होनेसे अपूर्ण है। (देखो सूयगडाग सूत्र) अिस प्रकार जैन धर्मका सक्षेपमें स्वरूप है।

(२) जैन साधुत्व:- अिस ससारमें कई जातीके साधु सत, पाद्री, मौलवी आदि नजर आते है। लेकिन जो त्याग, सयम तत्त्वपालन निष्ठा जैन श्रमणोमें मिलेगी वह अन्य किसी जातीके साधुओमें नही मिलेगी। कारण जैन साधु जब दीक्षा लेते तब अुनका सपूर्ण लक्ष आत्मोन्नतीके तरफ, मोक्ष मार्गके तरफ रहता है। लेकिन अिसका यह अर्थ नही है कि जैन साधु अराष्ट्रीय साधु रहते है। अिस लिये छह काय के हिंसाको टालनेका अधिकसे अधिक प्रयत्न करना पडता है। जैसे सचित्त आहार नही लेना, कच्चा पानी नही पीना, किसीभी वाहनमें बैठकर या अपना सामान लादकर प्रवास नही करना। किसीभी स्थानमें चातुर्मास छोडकर

अधिकसे अधिक २९ दिनसे अधिक नही रहना। आदि नियमोंका पालन पालन अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त बडी बडी तपश्चर्या कर्मोकी निर्जरा करनेके लिये करते है।

जिस संसारमें दो प्रकारके मुनि पाये जाते है। अेक द्रव्यसे दुसरा भावसे। लिंग मात्रको धारण करनवाले द्रव्य मुनि और भावको धारण करनेवाले भाव मुनि। द्रव्य और भावके भेदसे चार प्रकारके मुनि पाये जाते है। (१) द्रव्यसे सुप्त लेकिन भावसे जागृत (२) भावसे सुप्त लेकिन द्रव्यसे जागृत (३) द्रव्यसे जागृत व भावसे जागृत (४) और द्रव्यसेभी सुप्त और भावसेहि सुप्त—हमारे स्वर्गीय कथानायकजीकी गणना तीसरे प्रकारके मुनिमें होती है। कारण स्व गुरुदेव भावसेभी जागृत थे और द्रव्यसेभी। द्रव्यसे तो यहांतक जागृत थे कि स्वयं अप्रमादी व स्वावलंबी थे। लेकिन जो श्रावक आपके धर्म परिषदमें भी आपसे मिलनेकी इच्छासे आना चाहा तो असके मुहपर स्था जैनियोंका चिन्ह सदोर मुँहपत्ती होना अनिवार्य था। आगे चलकर आपने अैसा नियम बना दिया था कि जो भारतीय शुद्ध खादी के पोषाखमें हो उसपर ज्यादा ख्याल न हो अुससेहि बात करना। भावसे तो वे हरदम जागत रहते थे। आचारांग सूत्रके अध्याय ३ उद्देश १ सूत्र १ में भगवानने फरमाया है " सुत्ता अमुणि सयामुणिणो जागरन्ति " मुनिने सदा जागृत रहना चाहिये। मोक्षमार्गसे जो विचलित नही होता वह मुनि। मुनिने सभी कार्य यत्नपूर्वक करना चाहिये। हमारे स्व कथानायक अिन सभी आचरणोंमें अति जागत रहते थे। वे पांच समिती तीन गुप्तिके धारक थे। ४५ आगमका पूरा अध्ययन होनेके कारण निश्चय और व्यवहार नयकी योग्य स्थानपर योग्य नयकाहि अुपयोग करते थे। द्रव्यार्थिक नयकी जगह द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयकी जगह पर्यार्थिक नयका सदुपयोग करके जैन समाजको अजैन होनेसे बचाया। अजैनोंकोभी अुनके-अुनके धर्म श्रद्धा रखकर पालन करनेका आदेश देते थे। वस्तुका एकान्त रूपसे कभी प्रतिपादन नही करते थे। और यही बात बहुत कम मिथ्यात्व त्यागी श्रावकोंको समझी अैसा जान पडता है। कभी-कभी तो अैसा डर लगता है कि गुरु-

देवके भक्त कही एखादा नया पथ निकालकर न वैठ जाय। अिन सभी वातोपर श्री लेखिका महासतीजीने अुपमा अलंकार सहित प्रकाश डाला है।

स्व गुरुदेवके वारेमें एक प्रश्न जिसका कि लेखिका महासतीजीने अपने पुस्तकमें वर्णन नही किया है वह यह है कि वे एकाकी एकल विहारी थे। अपवादके लिये श्री तपस्वी साधक श्री वसतीलालजी मुनी सरीखे अुनके साथ कुछ समयके लिये रहे होगे। वह वात अलग है। लेकिन अधिक तौरपर वे एकल विहारी रहते थे। तो प्रश्न यह अुठता है कि आचाराग सूत्रके श्रुतस्कन्ध एक, अध्याय पाच, उद्देश चार, सूत्र दो में भगवानने फरमाया कि " अेय तेमा होऊ, येतत्ते मा भवतु " हे शिष्य, तू कभीभी एकाकी विहार करनेवाला नही होना। अैसी आज्ञा होते हुये भी महान् तपस्वी सर्व आगम पारगत क्रियापात्र " ज्ञान-क्रियाभ्याम् मोक्षमार्ग " के तत्त्वको जाननेवाले स्व पूज्य गुरुदेव एकल विहार क्यो करते थे? क्या अुन्हे पता नही था कि यह अकल्पनीय पथ है? लेकिन यह अैसा नही था। कारण अन्य साधुजन अुनके समान अुत्कृष्ट क्रियावाले और नियमोका पालन करनेमें असमर्थ रहे। अिसलिये जो मुनि अुनके पास जाता था वह कुछ समय वाद अुनसे अलग हो जाता था। सभी आचरणोको स्व गुरुदेव अच्छी तरहसे जानते थे। और जो ग्राह्य है अुसीको अंगीकार करते थे। जैन शास्त्रोके वारेमें अेक वात स्मरण रखना जरूरी है कि साधु यह श्रावक के आचरणके सभी नियम अेकहि सूत्रमें नही गुंथे गये। यद्यपि दशवैकालिक और आचाराग साधु धर्मके मुख्य सूत्र है, फिर भी ठाणांग सुयगडांग आदि सूत्रमें मुनियोके नियमोका वर्णन आता है। ठाणाग आदि सूत्रमें चार प्रकारके मुनि कहे है। (१) श्रुत आगमसे अव्यक्त है। तथा वैसेभी अव्यक्त (२) श्रुत आगमसे व्यक्त है, लेकिन वैसे अव्यक्त (३) श्रुत आगमसे अव्यक्त है, लेकिन वैसे व्यक्त है। (४) श्रुत आगमसे भी व्यक्त है और वैसे भी व्यक्त है। अिसमें चतुर्थ-भंगके साधुको एकल विहार कल्पता है। कारण चतुर्थ भंगवाला मुनि श्रुत आगमसे व्यक्त है। याने आगममें विद्वान है। तथा वयोवृद्ध है। वह आगमोसे सुसपन्न है, प्रतिमाओके धारक है। स्थविर कल्पि है तो

एकाकी विहार कल्पता है। असीमें किसी प्रकारका दोष नही लगता।" स्व पूज्य गुरुदेव में यह सभी गुण मौजूद थे। अिसलिय अुनको एकाकी विहार कल्पता था। क्योंकि—

"साधू भूख गिजराके और भाजन भूक नाथ
जो साधू भके भोजनके वो तो साधू नाथ।

भगवानने फरमाया है गुणहि साहू अगुणेहिऽसाहू ' गणसे साधु होता है अगुणसे असाधु। साधके लक्षण बताते हुअ दशवकालिक अध्याय ७ गाथा ४९ में कहा—

नाण—दशण सपन्न सजम य तवे रय।
एव गुण समा उत्त सजय साहू मालये॥

ज्ञान दर्शन तप अिन गुणोसे जो अलकृत है वह साधु है।

४ मिथ्यात्व – यह विषय अति जटिल है। मिथ्यात्वपर जितना लिखा जाय उतना थोडा हि है। पू स्व गुरुदेवने मिथ्यात्वको समलस उखाडनका झडा तो उठाया था लेकिन, कमकी गति औरहि कुछ थी। यह काय अपूण छोडकरहि गुरुदेव आयुष्य पूण कर देवलोकमें पधार गय। यह विषय जटिल कहनका कारण कि जिन लोगोंन मिथ्यात्व का त्याग किया अनके सामने कई ससारिक प्रश्न खड हो रहे है। जहांपर वे लोग निणय नही कर पाते वही सशयमें गिर जात। अिन सज्जनोमें कुछ लोग असे देखे गय कि 'मिथ्यात्व के सही अथको भी जानत नही लकिन, इतना जानते कि पत्थरकी मूतिको नही पूजना। कारण क्या तो असा करनेसे गुरुदेवकी कृपा होगी और धन सपत्ती बढगी। सही देखा जाय तो यह कल्पनाही मिथ्या है इस विषयपर लेखिका महासतिजीन बहुत लिखा है वह भी अधिकार वाणीस इस विषयपर जितन पन्ने लिख गय है अतन पन्ने शायदहि अन्य किसी एक विषयपर लिख गये होंगे। फिरभी म भी मेरे कुछ विचार आपक सामन रखू।

सम्यक्त्व और मिथ्यात्व एकमेकक विरोधी तत्व है। जैसा कि लेखिका महासतिजीन सम्यक्त्व पोणिमाकी रात है मिथ्यात्व अमाव-

स्याकी " वैसाही, लेकिन मिथ्यात्व का अर्थ क्या और सम्यक्त्वका अर्थ क्या ? मिथ्यात्व याने झूटा तत्त्व याने जिस वस्तुमे जो भाव नही है, अुस वस्तु मे वह भाव मानना । सक्षेपमें अरिहन्तके वचनोपर पूर्ण रूपसे श्रद्धा नही करना याने 'तत्त्वार्थ श्रद्धा' का त्याग । यह त्याग जिस प्रमाणमे अधिक होगा उतनाही मिथ्यात्व का जोर अधिक समझना । मिथ्यात्व यह अभाव (NEGATIVE) वाचक शद्ब नही यह भाव (POSITIVE) वाचक शद्ब है । अगर यह अभाव वाचक होता तो इस क्रियासे पापभी नही लगता था और पुण्यभी नही लगता था । लेकिन भाववाचक शद्ब होनेसे और पापमय मनोवृत्तिके तरफ लेजानेवाला होनेके कारण इसका त्याग करना अति आवश्यक है । यहाँ तक कि मिथ्यात्वी जीव कभी भी मुक्ति प्राप्त नही कर सकता। लेकिन मिथ्यात्व-त्याग कैसे किया जाय ? सम्यक्त्व ग्रहण करनेसे। सम्यक्त्व तो तभी ग्रहण हो सकता जबकि मिथ्यात्व का त्याग हो, यह एक बडी उलझन है और इस उलझन को सामर्थ्यवान गुरुका मार्गदर्शनहि हल कर सकता है। अिसी लिये गुरुदेव गर्जना करके फरमाते थे ।

"धम्मो मगल मुकिठ्ठ अहिसा सजमोतवो ।"
देवा वित नम सति जस्स धम्मे सया मणो ।। १ ।।
ससारमि अणते, जीवा पावति दुख्वई ।
जाव न करती धम्म, जिणवर भासिय पयत्तेण ।। २ ।।

" अहो श्रावको, इतना श्रेष्ठ धर्म तुम्हारा है कि जिसको देवताभी नमस्कार करते है । फिर यह पत्थरके देव, देवीयाँ, भेरु, भोपा, यह सब मिथ्यात्वी देव तुम क्यो पूजते हो ? वे देव तुम्हे क्या देनेवाले है जो स्वय असमर्थ है । सिर्फ जिनवरकाहि मार्ग अैसा है जो ससार भव से पार उतार सकता है । अैसा प्रचार करने का बडा भारी कारण था वह यह है कि जैनीयोने जैनत्व छोडकर तथा वीतराग प्रणित धर्मके आचरण को त्यागकर व्यवहारमे जैनधर्म सिद्धात विरोधी तत्त्वको अपनाने लगे । घरघरमें भेरु, भोपा, गणेश, हनुमान आदिकी मूर्तियाँ, पूजाअर्चा दिखायी देने लगी थी । यह परिस्थिति देखकर गुरुदेव का अत करण कपायमान हुवा । और गुरुदेवने सब प्रकारके परिषह सह करके सम्यक्त्व

के प्रचारका अभिग्रह किया और जिसप्रकार समिकाजीन लिखा ' मेरू-मोषा गुरुदेव के इर्दगीर्द पड रहते थ ' अुस प्रकार परिस्थिती निर्माण हो गयी। भुले हुय जनी फिर वीतराग प्ररूपित मागपर आने लग गये। लेकीन समय को यह बरदास्त नही हुवा और गुरुदेव को अपना कार्य अधूरा छोडकर जाना पडा। गुरुदेवकी कथनी और करनी सरिखी थी। इसीलिय समाजमें वे इतन पूजनीय हुये। कथन तीन प्रकारका होता है। हेय उपादेय नय यान त्यागन योग्य ग्रहण करने योग्य, और जानने योग्य। भव्य प्राणीयोंके उद्धार के लिये निगण्ठ नाय पुत्तन इन सभी तत्वोंका समज भरणोमें उपदेश दिया। कारण सम्यक्त्वबिना मोक्ष नहीं। सम्यक्त्व यान सच्चा ग्यान। जो वस्तु जैसी है उसको सम्यक दृष्टीसे देखना सम्यक बुद्धिसे जानना और सम्यक चारित्रसे आचरणमें अुतारना। संयमका मूल पाया सम्यक्त्व और संयमको जानने के लिये जीव अजीव को जानना प्रमुन फरमाया है।

जो जीवेवि न जाणई अजीवेवि न जाणई
जीवाऽजीवे अयाणतो कह सो नाहिईसंजमम

यह जाननके लिय सच्चा देव सच्चा गुरु और सच्चे धम पर श्रद्धा होना। लेकिन अधश्रद्धा जन धममें पुण्यके शिवाय पाप का माग है।

इस विषयमें और एक बात ध्यानमें रखनकी है। वह यह है कि गुरुदेवने जिन-जिन मार्गीयों को मिथ्यात्व त्यागके सौगन दिय अुनको जन तीथकर प्रतिमाका तिरस्कार करो असा नही फरमाया। वे तो पू गुरुणीजी महासतीजी के शब्दोंमें –

जीन प्रतिमा जीन सारखी कहे सो मिथ्या लोक प्रतिमाने प्रतिमा कहे माटी कहे सो भ्रष्ट अैसा गुरुदव कहते थ अगर मिथ्यात्वको हम सही अथमें समझ जाय तो आज जो प्रश्न निर्माण हो रहे है वे आपहिसे आप हल हो जाएग।

हमारे कथानायक कट्टर ग्यानीप्रमी थे। आपन जगह जगह शोधाकार्यों मुल्यावर ओयोगी रगा की। इस वज्ञानिक युगमें चमत्कारोंपर कोई विश्वास करे या न कर लेकिन लेखिका महासतिजीन अैसी कई सत्य घटनाओंका उल्लेख किया है जो अेक चमत्कार मालम होता है।

जीवनी सपूर्ण पढनेसे पाठकोको भलीभाँती ज्ञात हो जाएगा कि अिसमें गुरुदेवके जन्मसे अततक सभी विषयोपर लेखिका महासतिजीने पूर्ण रूपसे प्रकाश डाला है। किसीभी व्यक्तीका जीवन-चरित्र पढ़ते समय मन एकाग्र नही रहता। लेकिन विद्वान लेखिकाने सरल, सुगम प्रसादगुण युक्त शैलीसे जीवन-चरित्र लिखा है कि पढनेवाला अुपन्यास सरिखा पढतेहि जाता है। उपमा अलकारो के वगैर एखादहि पन्ना खाली जाता होगा। जगह जगह योग्य सस्कृत तथा अग्रेजी कहावते देकर अुस विषयको अधिक प्रभावित और स्पष्ट किया है, यह लेखिका महासतिजीकी अेक विशेषता है। और यह स्वाभाविक है। जब लेखिकाजीके गुरुणिजीहि अैसे है तब लेखिका महासतिजी अैसे क्यो न हो? क्योकि गुरुणिजीकि सुशिष्या! हिरोकि खदानमेंसे हिरेहि निकलेगे। आमके पेडको स्वादिष्ट आमहि लगेंगे। चद्रसे शीतल किरणेहि निकलेगी। अैसे वदनीय महासतिजी गुरुणिजीके अैसीहि सुशिष्या होगी। अैसे विद्वान प्रभावी लेखिकाके हाथसे अैसे महापुरुषकी जीवन-कहानी लिखी गयी अिसके लिये प्राक्कथन या प्रस्तावना लिखनेके लिये अुतनेहि योग्यताका विद्वान लेखक चाहिए था। मै न तो लेखक हूँ और न धर्मतत्ववेत्ता! लेकिन यह जीवनी अिसी ग्राममें पूर्ण लिखी गयी। अिसलिये पू० गुरुणिजीने मुझे आदेश दिया कि मै प्रस्तावना लिखूं। इसिलिये यह लिखनेका धैर्य किया है। मालूम नही अिसमें कितनी तृटियाँ होगी। अतमे –

Lives of great men all remind us,
We can make our lives sublime
And departing, leave behind us,
Foot-prints on the sands of time

– Long Fellow.

इसलिये महापुरुषोके जीवन-चरित्र लिखे जाते है।

सेवाल पिंपरी (विदर्भ)
दिनाक ७।१०।६२

विनीत,
चदनमल सोनी वकील
B A LL B.

के प्रचारका अभिग्रह किया और जिसप्रकार लखिकाजीने लिखा भक्-भोपा गुरुदेव के इदगीद पड रहते थे अस प्रकार परिस्थिती निर्माण हो गयी। भुले हुये जैनी फिर वीतराग प्ररूपित मार्गपर आने लग गये। लेकीन समय को यह बरदास्त नही हुवा और गुरुदेव को अपना कार्य अधूरा छोडकर आना पडा। गरुदेवकी कथनी और करनी सरिखी थी। इसीलिय समाजमें वे इतने पूजनीय हुये। कथन तीन प्रकारका होता है। हेय उपादेय ज्ञेय यान त्यागन योग्य ग्रहण करने योग्य, और जानने योग्य। भव्य प्राणीयोके उद्धार के लिये निगण्ठ नाथ पुत्तने इन सभी तत्वोंका समग्र चरणोमें उपदेश दिया। कारण सम्यक्त्वबिना मोक्ष नहीं। सम्यक्त्व याने सच्चा ज्ञान। जो वस्तु जसी है उसको सम्यक दृष्टीसे देखना सम्यक बुद्धिसे जानना और सम्यक चारित्रसे आचरणमें अुतारना। सयमका मूल पाया सम्यक्त्व और सयमको जाननेके लिये जीव अजीव को जानना प्रमुख फरमाया है।

जो जीवेवि न जाणई अजीवेवि न जाणई
जीवाऽजीवे अयाणतो कह सो नाहिईसजमम

यह जाननके लिय सच्चा देव सच्चा गुरु और सच्चे धर्म पर श्रद्धा होना। लेकिन अधश्रद्धा जन धर्ममें पुण्यके शिवाय पाप का भाग है।

इस विषयम और एक बात ध्यानमें रखनकी है। वह यह है कि गुरुदेवने जिन–जिन भाईयो को मिथ्यात्व त्यागके सौगन दिय अुनको जन तीथकर प्रतिमाका तिरस्कार करो असा नही फरमाया। वे तो पू गुरुणीश्री महासतीजी के शब्दोंमें --

जीन प्रतिमा जीन सारखी कहे सो मिथ्या लोक प्रतिमाने प्रतिमा कहे भाटो कहे सो भ्रष्ट असा गुरुदेव कहते थ अगर मिथ्यात्वको हम सही अथमें समझ जाय तो आज जो प्रश्न निर्माण हो रहे है वे आपहिसे आप हल हो जाएग।

हमारे कथानायक कट्टर सारीप्रेमी थे। आपने जगह जगह गौशालायें खुलवाकर जीवोकी रक्षा की। इस वज्ञानिक युगमें चमत्कारोपर कोई विश्वास करे या न करे लेकिन लेखिका महासतिजीने अैसी कई सत्य घटनाओंका उल्लख किया है जो अेक चमत्कार मालुम होता है।

जीवनी सपूर्ण पढनेसे पाठकोको भलीभाँती ज्ञात हो जाएगा कि अिसमें गुरुदेवके जन्मसे अततक सभी विषयोपर लेखिका महासतिजीने पूर्ण रूपसे प्रकाश डाला है। किसीभी व्यक्तीका जीवन–चरित्र पढते समय मन एकाग्र नही रहता। लेकिन विद्वान लेखिकाने सरल, सुगम प्रसादगुण युक्त शैलीसे जीवन–चरित्र लिखा है कि पढनेवाला अुपन्यास सरिखा पढतेहि जाता है। उपमा अलकारो के बगैर एखादहि पन्ना खाली जाता होगा। जगह जगह योग्य सस्कृत तथा अग्रेजी कहावते देकर अुस विषयको अधिक प्रभावित और स्पष्ट किया है, यह लेखिका महासतिजीकी अेक विशेषता है। और यह स्वाभाविक है। जब लेखिकाजीके गुरुणिजीहि अैसे है तब लेखिका महासतिजी अैसे क्यो न हो? क्योकि गुरुणिजीकि सुशिष्या! हिरोकि खदानमेंसे हिरेहि निकलेगे। आमके पेडको स्वादिष्ट आमहि लगेंगे। चद्रसे शीतल किरणेहि निकलेगी। अैसे वदनीय महासतिजी गुरुणिजीके अैसीहि सुशिष्या होगी। अैसे विद्वान प्रभावी लेखिकाके हाथसे अैसे महापुरुपकी जीवन-कहानी लिखी गयी अिसके लिये प्राक्कथन या प्रस्तावना लिखनेके लिये अुतनेहि योग्यताका विद्वान लेखक चाहिए था। मै न तो लेखक हूँ और न धर्मतत्त्ववेत्ता! लेकिन यह जीवनी अिसी ग्राममे पूर्ण लिखी गयी। अिसलिये पू० गुरुणिजीने मुझे आदेश दिया कि मै प्रस्तावना लिखूं। इसिलिये यह लिखनेका धैर्य किया है। मालूम नही अिसमें कितनी तृटियाँ होगी। अतमें –

Lives of great men all remind us,
We can make our lives sublime.
And departing, leave behind us,
Foot-prints on the sands of time.

– Long Fellow.

इसलिये महापुरुषोके जीवन-चरित्र लिखे जाते है।

सेवाल पिंपरी (विदर्भ)
दिनाक ७।१०।६२

विनीत,
चदनमल सोनी वकील
B A LL.B.

चरित्र ग्रंथ प्रारंभ -

अ नु क्र म णि का



प्रकरण १ ला

मङ्गल निवेदन

विघ्नहरण मगलकरण जिनवाणी सुखदाय।
जीवनकथा गुरुदेवकी पढो सभी चित लाय।
वीर सर्वं सुरा सुरेन्द्रमहितो, वीर बुधा सश्रिता।
वीरेणाभिहत स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्य नम ॥
वीरात्तीर्थमिद प्रवृत्तमतुल, वीरस्य घोर तपो।
वीरे श्री-घृति-कीर्ति-काति-निचय, श्री वीरभद्र दिश ॥१॥

अज्ञानतिमिरान्धाना ज्ञानाञ्जल शलाकया।
चक्षुरुन्मिलित येन, तस्मै श्रीगुरवे नम ॥२॥

नाभेयादि जिनेश्वरा· त्रिभुवने ख्याताश्चतुर्विशति।
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ॥३॥

ये विष्णु प्रति विष्णुलागलधरा सप्ताधिकाविंशती।
त्रैलोक्याऽभयदा त्रिषष्टि पुरुषा कुर्वन्तु मे मगलम् ॥४॥

मगल

" मा विघ्नान् गालयतीति मगलम् " सब विघ्नोका नाश करता है असे मगल कहते है। जिन महापुरुषका हम चरित्र लिखने जा रहे है वे स्वत हि मगलकारी है। अुनका नाम भी मगलकारी है। किन्तु यह आस्तिक लोगोकी परपरा है। अत अुस परपराका पालन करना परम आवश्यक है। अिस उद्देश से यहाँपर मगल का उदाहरण दिया गया है।

दुर्लभ सस्कृत वाक्य दुर्लभ क्षेमकृत सुत।
दुर्लभा सदृशी भार्या तपस्वी दुर्लभो जन ॥१॥

संस्कृत का पठन मिलना दुर्लभ है। सेवाभावी पुत्र मिलना दुर्लभ है, सुलक्षणी भार्या मिलना दुर्लभ है, वैसाहि सच्चा तपस्वी मिलना भी दुर्लभ है।

अिस सृष्टिमें मुख्यत दो तत्व है। अेक चेतन और दुसरा जड। आत्मा अनंत शक्तीशाली है। अुसकी शक्ती अप्रतिहत है। वह स्वतन्त्र है। अिसलिये अुसको किसीकी आवश्यकता नहीं है। जड पदार्थ अनंत शक्तीमान होते हुए भी वह स्वतंत्र कुछ नहीं कर सकते। चैतन्य सिवाय वह निरुपयोगी है। परंतु वीसवी सदीकी जनता जड पदार्थोंकी चकाचौंधमें पागल बनती जारही है। वह आत्म-तत्वकी तथा शक्तीको प्रगट करनाभी नही चाहती है। पौद्गलिक पदार्थोंके चक्करमें फँसी हुयी है। अत अुसको महापुरुष त्यागी महात्माका जीवनचरित्र सर्च लाइट का काम करेगा आत्मशक्ती जागृत करनेको सहाय्यक बनेगा। पाश्चात्य कवि लॉग फेलोन कहा है कि —

Lives of greatmen all remind us
We can make our lives sublime

यहाँ भोग योगका संघर्ष चल रहा है वहाँ आत्मतत्वके विरोधमें विचारधारा बहती है। जो योगप्रधान भारतवर्ष था वह भोगप्रधान बनता जा रहा है। भोग जड व पौदगल पक्षपाती है। और योग चैतन्यको चमकानेवाला है। भोग क्षणिक है। और योग अचल है। भोग विषमय भूषण है तो योग अमनकी कुपिका है। महायोगी महातपस्वी का जीवन त्याग और तपसे लबालब भरा है। जिनके जीवनका कोई क्षण असा नही है, जहाँ त्यागकी ज्योति नहीं जगमगाती हो। प्रकाशमय जीवनहि जीवन है। वर्ना काको रि जीयनि चिरं च बलिञ्च भुङ्क्ते अैसे जीवनमें कोई सार नही है।

मानव प्रकृतिसे अनुकरणशील है। वह प्राय दुसरोंका अनुकरण करता है। अत जनताके सामने अध्यात्मिक, पारमार्थिक तथा त्यागमय जीवन बितानेवाले महापुरुषोंका जीवनचरित्र रखनेसे अुनके जीवनमें

त्यागकी तरगे तथा तपका तेज चमके और वह अपने जीवनको जीवन बनाये। महापुरुषका जीवन-चरित्र इस लोक तथा परलोक का सच्चा सुखका मार्गप्रदर्शन करनेके लिये सच्चे शिक्षक का काम करता है। मनुष्य के जीवनमें कई वार अैसी आपत्तियाँ आती जिससे मानव किंकर्तव्यमुढ बन जाता है। हिम्मतवान बहादुरभी हिम्मत हार जाते है। बुद्धिवान व्यक्तीकी बुद्धि हतप्रभ हो जाती है। वह आपत्तिरूपी महारण्यमें अिधर अुधर भटकता है। अुसे कहीभी मार्ग तथा आपत्तिसे मुक्ति नही मिलती। अुस समय महापुरुषोका जीवन एक ज्योतिका काम करता है।

अुपरोक्त बातोसे जीवनचरित्रकी महत्ता पाठकोके ध्यानमें आगयी होगी। किन्तु फिरभी जिज्ञासु व्यक्तीके हृदयमें स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि जीवनचरित्र किसका लिखना चाहिये, किसके लिये लिखना चाहिये और लिखनेसे क्या फायदा? यह तीन प्रश्न सहज उठते है। अतः असपरभी हम थोडासा विचार करे।

अिस अपार ससारमें अनत प्राणी जन्मते है और मरते है। परन्तु न कोई गिनती है न कोई नाम। जीवनचरित्र अुन्ही महापुरुषोका लिखा जाता है कि जिन्होने दुनियामें आकर कुछ परोपकार किया हो तथा अगरबत्तीके समान खुद जलकर अन्योको सौरभ प्रदान की हो। वृक्षके समान खुद शीत तापको सहन करके औरोको मधुर मिष्ट फल प्रदान किये हो अैसेहि महापुरुषोका जीवन चरित्र लिखना सार्थक है।

जीवन चरित्र लिखनेका प्रयोजन यह है कि भव्य आत्मा अैसे महान गुणोको धारण करके स्वर्ग तथा मोक्ष को प्राप्त करे। जीवनको सफल बनायें। क्योंकि कहा है, "कारणमनुद्दिश्य मदोपि न प्रवर्तते" कारण के विना मूर्खभी कार्यमें प्रवृत्त नही होता। अत महान आत्मकल्याण प्रयोजनको सामने रखकर अिस ग्रथकी रचना की जारही है। पुस्तकोकि कमी नही है। परतु "घासलेटी साहित्य" दुर्गन्ध फैलाकर जीवनको दुर्गन्धमय बना देता है अैसे साहित्यको लिखकर लेखक समय और बुद्धिकी वर्वादी करता है। और साथमें पाठकोकोभी हानी पहुँचाता है।

सच्चा साहित्य जीवनको हीत पहुँचाता है। त्याग तपके झरणोंसे जीवनका मल धोकर साफ सुथरा तथा आदर्श रूप बना देता है। बस यही इस ग्रंथका प्रयोजन है।

व्यक्ति स्वभावसेही लाभका इच्छुक है वह प्रत्यक कार्यका फल चाहता है। ज्ञाता सूत्रमें प्रभुने फरमाया है तपस्वीका गुणग्राम करता हुआ जीव कर्मोंकी कोडी खपाता है, उत्कृष्ट रसायन आवे तो तीर्थंकर गोत्र बांधे। अत नरसे नारायण जीवसे शीव तथा आत्मासे परमात्मा बननेका मार्गही महापुरुषोंका जीवन है। महापुरुष चंद्रमाके समान संसार पापतापोंको हारकर सब जीवोंके लिये अपना जीवन प्रदान कर देते है। उच्च वैराग्य और घोर तपश्चर्या निश्चल मनोवृत्ति अनुरूप सहनशीलता कथानायकजीमें अलौकिक थी। तपस्वीजीका जीवन भव्य जीवोंके हृदयपर महान असर डालनेवाला है।

प्रकरण २ रा

प्राचीन इतिहास और गुरु परंपरा

चलती चक्की देखकर दिया कबीरा रोय।
दोनों पाटक बीचमें साबित बचा न कोय॥

कबीरजीने उपरके दोहेमें कालकी निर्ममताका वर्णन किया है। काल सबको निगल जाता है कालरूपी चक्की के पाटमें सभीका चूरा होता जारहा है। यह देखकर कबीरजीको रोना आगया। कुछ विचार करके दुसरा दोहा कहते हैं —

चलती है तो चलने दो पीस पीस चूरा होय।
लग रहो घरकीलको बाल न बांका होय॥

इस कालरूपी चक्कीसे बचनेके लिए एक महान सहारा है। वह है धर्मरूपी कील। जिसका आधार लेनेसे व्यक्ति अवश्य बच जाता है। भलेही नश्वर शरीर नाश हो जाय पर उसका नाम अमर हो जाता है। ऐसेही अमर आत्माओंका यहांपर दिग्दर्शन कराया जारहा है।

अिस परम पवित्र भारत भूमिमें अीस अवसर्पिणीकालमे श्री ऋषभदेव भगवानसे लेकर श्रमण भगवंत महावीर स्वामितक चोवीस तीर्थंकर हुए है । (चरम अतिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामि हुए हैं । अुनका वर्तमानमे शासन चल रहा हैं) ।

भगवानका महावीर स्वामिका जन्म आजमे २५८९ वर्ष पूर्व (इ. स ५९९ वर्षपूर्व) पूर्वस्थित विहारप्रानके कुडनपूर नगरके क्षत्रिय कुलभूषण ज्ञातवशी, काश्यप गोत्री सिद्धार्थ राजाके यहा हुवा था । माताका नाम त्रिशलादेवी था । प्रभू गर्भमे आतेही धनधान्य तथा राज्यकी वृद्धी होने लगी । अत मातापिताने अुनका नाम 'वर्धमान' रखा । तप, सयममें महान पराक्रम करनेसे बादमे 'महावीर' नामसे प्रख्यात हुए ।

यौवनावस्थामें आनेपर महावीर स्वामिका विवाह "यशोमति" नामकी सुदर कन्यासे हुवा । जिससे प्रियदर्शना नामकी सुदर पुत्री हुयी । प्रभु ससारमें जल कमलवात् रहे । अुस समय यज्ञ याज्ञादिक का बहुतही जोर बढ रहा था । धर्मनिमित्तसे हिंसा दिन दूनी रात चौगुनी बढ रही थी ।

" नर पशुओकी धर्म नामपर खुलकर हिंसा होती ।
मानव की दानवता आगे, मानवता थी रोती ॥
प्रगटे कोओी अवतारी हो ऽऽ महिमडलमे अवतारी ॥१॥ "

प्रभुने राज-पाटथाट को ठुकराकर तीस वर्षके वयमे दीक्षा ग्रहण की । दीक्षा लेकर प्रभुने बारह वर्ष साडे छह महीनोतक कठीन तप करके केवलज्ञान प्राप्त किया । तदनन्तर अुपदेश देना प्रारभ किया । गौतमस्वामि आदी १४ हजार साधु शिष्य हुए । चदनबाला आदि ३६ हजार साध्वीया शिष्या हुयी । प्रभू तीस वर्षतक केवली रहे । अनेक स्थलोमें विचरण करके भरत भूमिको पावन किया । अतिम चातुर्मास प्रभुने पावापुरीमें किया । वहा हस्तिपाल महाराज की राजसभा गृहमें दो दिनका अनशन व्रत करके प्रभु 'अुत्तराध्ययन' फरमाते फरमाते मोक्ष पधारे । वह कार्तिक वदि अमावश्याकी रात्री थी । जहापर १८ देशके राजा

प्रभुका अंतिम अुपदेश श्रवण करनेको आये थे। वे पौषधमें बैठे हुए थे।
प्रभुका संपूर्ण आयुष्य ७२ वर्षका था।

१ सुधर्मा स्वामि—

भगवान मोक्ष पधारे अुस समय सिर्फ २ ही गणधर मौजूद थे। ९ गणधर प्रभुके निर्वाणके पहलेही मोक्ष पधार गये थे। गौतम स्वामिको भगवान मोक्ष पधारनेके बाद तोभ्रही केवल ज्ञान प्राप्त होगया। अत प्रभुके पाटपर सुधर्मा स्वामि विराजे। सुधर्मास्वामि विचरते विचरते राजगृह नगरीमें पधारे।

राजगृह नगरमें ऋषभदत्त नामका एक धनवान सेठ रहता था। अुसके जम्बुकुंवर नामका एक सुपुत्र था। असको आठ कन्याओंके साथ सगायी की हुओ थी। और विवाहकी तयारी थी। जम्बु कुंवरको सुधर्मा स्वामिका अपदेश श्रवण कर वैराग्य अुत्पन्न होगया। अत माता-पितासे आज्ञा मागने लगे। मातापिताने विवाह करनेका अनुरोध किया। विवाह करके जिस रात्रीमें घर आये असी रात्रीमें प्रभवादी ५० चोरोने चोरीके लिए घरमें प्रवेश किया। अिधर जम्बु कुंवरने स्त्रियोंको अपने दीक्षा लेनेकी भावना प्रदर्शन की। स्त्रियां संसारके तरफ खिंचनेका प्रयत्न कर रही थी। और जम्बु कुंवर वैराग्य रसका झरना बहाकर वैराग्य का रंग चढानेका प्रयत्न कर रहे थे। इनका संवाद सुनकर प्रभवादि ५० चोरोको वैराग्य अुत्पन्न होगया। ५२७ व्यक्तियोने सुधर्मा स्वामिके पासमें एक साथ दीक्षा ग्रहण की। अुस समय जम्बुजीकी आयु सोलह वर्षकी थी। प्रभुके निर्वाणसे १२ वे वर्षमें सुधर्मा स्वामिको केवल ज्ञान अुत्पन्न हुवा। सौ वर्षकी पूर्ण आयुष्य भोगकर सुधर्मा स्वामि मोक्ष पधारे।

२ जम्बुस्वामि—

सुधर्मा स्वामिके पाटपर जम्बुस्वामि विराजे। वीर निर्वाणसे बीस वर्ष बाद जम्बुस्वामिको केवल ज्ञान अुत्पन्न हुवा। ८ वर्षकी आयु पूर्ण

करके मोक्ष प्राप्त की । अिस तरहसे ६४ वर्षतक केवलज्ञान रहा, बादमें विच्छेद होगया । क्योकि पचम कालके जन्मे हुएको केवलज्ञान नही होता ।

३ प्रभवस्वामि-

जम्बुस्वामिके पाटपर प्रभवस्वामि विराजे । ८५ वर्षकी आयु भोगकर स्वर्ग सिधारे । अुस समय वीर निर्वाणको ७५ वर्ष हो चुके थे ।

४. शय्यभव स्वामि-

शय्यभव स्वामि वीर निर्वाण संवत ९८ मे स्वर्ग पधारे । (५) शय्यभव स्वामिके पाटपर यशोभद्र स्वामि विराजे । वे वीर निर्वाणके १४८ वर्षमे स्वर्ग सिधारे । (६) वे पाटपर सभूतिविजय स्वामि वे वी स १५६ वर्षमें स्वर्ग सिधारे । (७) वे पाटपर भद्रबाहू स्वामि वीर निर्वाणसे १७० वे वर्षमें स्वर्ग सिधारे । (८) वे पाटपर स्थूलीभद्र स्वामि वीर निर्वाणके पश्चात २१५ वे वर्षमें स्वर्ग पधारे । (९) वे पाटपर आर्य महागिरी १० वे वलिसिहजी ११ वे सोवन स्वामि १२ वे वीर स्वामि १३ वे सडिल स्वामि १४ वे जिवनधर स्वामि १५ वे आर्यसमेत स्वामि १६ नन्दील स्वामि १७ नागहस्ती १८ रेवत स्वामि १९ सिहगणीजी २० स्थडीलाचार्य २१ हेमवन्त स्वामि २२ नागजित स्वामि २३ गोविंद स्वामि २४ भूतदीन स्वामि २५ छोह गणिजी २६ दुसह गणिजी २७ देवर्धि गणिक्षमा श्रवण हुए । जिन्होने वीर निर्वाण स ८९० वर्ष तथा वि स ५६० मे वल्लभीपूरमें शास्त्र लेखन का कार्य किया ।

देवर्धिक्षमा श्रवणके पाटपर २८ वे अनुक्रमसे वीरभद्र २९ सकरभद्र ३० यशोभद्र ३१ वीर सेन ३२ वीर सग्राम ३३ जिनसेन ३४ हरीसेन ३५ जयसेन ३६ जगमल ३७ देवर्षि ३८ भिमऋषी ३९ कर्म ऋषि ४० राजऋषि ४१ देवसेन ४२ सकरसेन ४३ लक्ष्मीलाभ ४४ रामऋषि ४५ पद्मसुरि ४६ हरि स्वामि ४७ कुशल स्वामि ४८ अुवणी ऋषि ४९ जयसेन ५० विजय ऋषि ५१ देवसेन ५२ सुरसेन ५३ महासूरसेन

५४ महासेन ५५ गजसेन ५६ जयराज ५७ मिश्रसेन ५८ विजयसिंह ५९ सिवराजजी ६० लालजी ऋषिजी ६१ ग्यानजी ऋषि। ग्यानजी ऋषिजीके पासमें जो शास्त्र थे अुसको दीमक लग गयी थी। परंतु लिखनेकी फुरसत कहा? क्योंकि अुस समयमें साधु प्रमादि और आडम्बरमें पड गए थे। शुद्ध चारित्र्यके लक्ष्यको भूलकर मान बढाओके दलदलमें फस गये थे। सं १५० में एक महान धर्म सुधारक गुजरातके पाय तखत अमदाबाद शहरमें ओसवाल जातीमें अुत्पन्न हुए। अुनका नाम लोकाशाह था। जौहरी का धंदा करते थे। लोकाशाहके अक्षर बहुतही सुंदर थें। धर्मपर श्रद्धा बहुत थी। वे ज्ञानजी ऋषिके पास आते जाते थे। ज्ञानजी ऋषिने सूत्रकी प्रतिलिपी करनेको कहा। लोकाशाहने महा अुपकारका काम समझकर अीस कार्यको स्वीकार किया। जबसे सूत्र लिखने लगे तो अुन्हें सूत्रके वचनोंमें और अुस समयके साधूओंकी प्ररूपणा तथा आचरणमें जमीन अस्मानका अंतर दिखाओी दिया। तब अुन्होंने सब सूत्रोंको लिखकर सत्यधर्मका प्रचार करना शुरू किया। सत्यरूपी सूर्यसे भव्य आत्मायें आकर्षित होकर आने लगी। लोकाशाहने ४५ जनोंको दीक्षा देकर सत्यधर्मका प्रचार करने लगे। लाखों शुद्ध श्रद्धावाले जैनी बनाये। वि स १५३१ में यह लोकागच्छ नामसे प्रख्यात हुए।

६२ मानजीऋषि ६३ रूपजी ६४ जिवराजजी ६५ तेजराजजी ६६ कूंवरजी ६७ हरजी ६८ गोधाजी ६९ परशुरामजी ७ लोकपालजी ७१ महारामजी स्वामि ७२ दौलतरामजी ७३ लालजी महाराज ७४ रामारामजी म ७५ गोविंदरामजी म० १९०२ कोटामे स्वर्गवास ७६ फत्तेचंदजी म १९११ कोटाके रामपूरमे स्वर्गवास हुआ। ७७ ज्ञानचंदजी म० १९२६ राणीपूरमे स्वर्गवास हुआ। ७८ बलदेवजी म ७९ छगन लालजी म वि स १९५४ मे आकोदमे स्वर्गवास हुआ। ८० रोडमलजी ८१ प्रमराजजी म ८२ कर्नाटक गजकेसरी गणेशलालजी म ८३ मिश्री लालजी म० ८४ संपतलालजी म०

कोटा सम्प्रदाय

पू श्री दौलतरामजी म अपने शिष्य परिवार सहित कोटा पधारे। वहांपर धर्मका शुद्ध स्वरूप जाननेवाला कोई नही था। और न कोअी

सन्तोकी अमृतमय वाणी सुननेको तैयार था। अतः वे अपने शिष्य समुदायको सन्मुख बैठाकर उपदेश देते थे। ऐसा करनेमे आपका उद्देश यह था कि किसी न किसी प्रकारसे जनता धर्मका शुद्ध स्वरूप समझे। उपदेशामृतका लाभ उठानेके लिये जनता ईकठ्ठी हो जाती थी। चाणाक्यने कहा है--

"श्रुत्वा धर्मं विजानाति, श्रुत्वा त्यज्यति दुर्मतिम्"

सुननेसेहि धर्मको जानता है सुननेसेही दुर्बुधिको त्यागता है। जनता सत्य उपदेशको श्रवण करके आकर्पित होने लगी तथा धर्मको अगीकार करने लगी। जब तक सूर्योदय नही होता है तबतक अन्धकारमे ठोकरें खानी पडती है। ज्ञान प्रकाश होनेपर अधेरेमें कोअी रहना नही चाहता। पू श्री दौलतरामजी म० ने बहुतसी कठीनाइयाँ, धर्म प्रचारके लिये सही। वहाँपर जैन साधूके आचार विचारको नही जाननेसे शुद्ध अशन-पानादिकका योग नही लगता था,

"मनस्वी कार्यार्थी न गणयति सुख नाऽपि दु खम्"

कर्तव्य परायण व्यक्ती सुख दु ख को कुछ नही समझता। कअी दिन तो चने खा खाकर निकाले। कहते थे, एक समय कोयी दातार ने चने दिये तो प्रत्येक सन्तके १७, १७ चने हिस्सेमें आये, सत्रह चनोपर दिन काटा, कअीवार कच्चा आटा पानीमे मिला कर पी जाते। अिस तरहसे परिषह सहन कर जीनवाणी का प्रचार किया। सेकडो घर शुद्ध धर्मके धारक बनाये। जिस कोटामें एकभी घर शुद्ध धर्मको जाननेवाला नही था, अुसी कोटामें वर्तमानमें हजारोकी सख्यामें घर है"। ११ धर्म स्थान है। अीसी शहरके नामसे यह सम्प्रदाय प्रसिद्ध होगयी।

पूज्य श्री दौलतरामजी म० तथा श्री अजरामरजी म० ये दोनो महात्मा समकालीन थे। पू दौलतरामजी म० ने वि. स. १८१४ मे दीक्षा ग्रहण की थी। और अजरामरजी स्वामिने वि भ १८१९ में दीक्षा ग्रहण की थी। पु दौलतरामजी म० अति समर्थ विद्वान, और सूत्र सिद्धान्तके पारगामी थे। वे मालवा मारवाड प्रदेशमें विचरते थे। आपके असाधारण ज्ञान सपत्तीकी प्रशसा श्री अजरामरजी स्वामिने

सुनी। अजरामरजी स्वामिका ज्ञानभी बडा चढा तो था ही पर सूत्र ज्ञानमें अधिक उन्नती करनके लिये पू श्री दौलतरामजी म० के पास अभ्यास करनेकी इच्छा हुअी अत लिंबडी श्री संघने एक खास मनुष्यके साथ पू दौलतरामजी म० की सेवामें प्राथना-पत्र भेजा। आचाय प्रवर श्री दौलतरामजी म० अुस समय कोटा बुंदि विराजते थे। अुन्होंने इस विज्ञप्तीको सहर्ष स्विकार करके काठीयावाड की ओर शिघ्र ही विहार किया। वह भेजा हुआ मनुष्य अहमदाबाद तक पूज्य श्रीके साथ आया। वहाँसे वह मनुष्य लिंबडी संघको पू श्री अहमदाबाद पधार गय की बधाई देने लिंबडी आया। अुस समय लिंबडी संघ आनन्द विभोर हो उठा और अुस बधाई देनेवाले मनुष्यको १२५० रु भेंट स्वरूप दिये। पू श्री लिंबडी पधारे तब वहाँके संघने अुनका अनुपम तथा अत्यंत आदर सत्कार किया। लिंबडी श्री संघकी अनुपम भक्ति देखकर पूज्य श्री दौलतरामजी महाराज सानंदाश्चय हुये। पंडीत अजरामरजी स्वामिको पूज्य श्री दौलतरामजी महाराज खुले दिलसे सूत्र सिद्धान्त का रहस्य समझाने लगे। दोनो मानो केशी गौतमसे प्रतीत होते थ। सबमें अलौकिक आनंद छा रहा था।

अुसी समय समकित सारके कर्ता श्री जेठमलजी महाराज इस समय पालनपूर विराजते थ। वे भी शास्त्र अध्ययन के लिये लिंबडी पधारे और वे भी ज्ञानवृद्धि करते हुय अपूर्व आनंदका अनभव करने लग। जिस प्रकारके साधुओमे अुस समय कितना प्रेमभाव था और साधुओंमे ज्ञान पिपासा कितनी तीव्र थी वह जिसपरसे सिद्ध होता है। पंडित श्री दौलतरामजी महाराजके साथ कितनही समयतक विचरकर पंडित अजरामरजी म नें सूत्र ज्ञानमें अपरिमित अभिवृद्धि की थी। और पूज्य श्री दौलतरामजी म के आग्रहसे श्री अजरामरजी म एक चातुर्मासभी जयपूरमे सामील किया था। जिस तरह बहुतसे क्षत्रोंको पावन करके वि स १८७० मे अणीयारेमे स्वगवास हुवा।

७३ वे पाटपे श्री लालचंदजी म विराजे। ७४ वे पाटपर श्री गोविंदरामजी म विराजे। ये बहुत विद्वान तथा क्रियापात्र संत थ।

अुन्होने धर्मका प्रचार खूब किया। वि. स १९०२ को कोटामें स्वर्गवास हुवा। ७५ वे पाटपर श्री फत्तेचदजी म विराजे थे। पूज्य श्री फत्तेचदजी म टोकके क्षत्रिय जातिके थे। "क्षतात् त्रायते इति क्षत्रिय." दीन दु खीयोको दु खसे छुडाता वही सच्चा क्षत्रिय है। पूज्य श्री दीन दु खीयोके दु खको निवारण करनेके लिए संसारके सुखोको त्यागकर वीरप्रभुके मार्गपर निकल पडे थे। अुन्होने जनकल्याणके लिए अपने जीवनको न्योछावर कर दिया था। अुन्होने वि सं १९११ में कोटेके रामपुरेमें स्वर्गारोहण किया। ७६ वे पूज्य श्री ज्ञानचंदजी म यथा नाम तथा गुणधारी थे। ज्ञानदानमें तत्पर रहते थे। वे अुस समयके अद्वितीय विद्वान थे। अुन्होनें धर्म प्रचार खूब किया। वे अतमे सलेहणा सथारे सहित राणीपूरमें वि स १९२६ मे स्वर्ग सिधाये। ७७ वे पाटपर पूज्य श्री वलदेवजी म विराजे थे। ७८ पाटपर श्री छगनलालजी म थे। आप दो सगे भाई थे। वि स १९११ में दोनो भाईयोने लघुवयमे साथमें दीक्षा ग्रहण की थी। दोनो ही बाल व्रम्हचारी थे। अुनको आज्ञा लेते समय वहुतसे अुपसर्गोको सहन करना पडा था। परतु अटल वैरागी किसी तरहके प्रलोभनमें नही आये। अतमे दीक्षा लेकर वहुतसे सूत्रोका अल्प कालमें अभ्यास किया था। पाखडी लोगोका मद गालनेमे सिहके समान थे। शास्त्रोके रहस्य वहुत जानते थे। दोनो का नामभी पूज्य श्रीने तुक मिलाते हुए एकसाही रखा था। छगनमुनी और मगनमुनी दोनो भाइयोने साथमेंही अभ्यास प्रारभ किया था। अल्प समयमेंही शास्त्राध्यापन करके निपुण बन गये थे। छगनमुनी वडे होनेसे तथा आचार्यके गुणोसे अलकृत होनेसे पूज्य श्री गोविंदरामजी म ने आचार्य पदसे विभूपित किया।

आचार्य प्रवर श्री छगनलालजी म जिनवाणीका प्रचार करनेके लिए अनेक अुपसर्गोको सहन किये थे। दक्षिण प्रदेशमें सर्व प्रथम श्री तिलोक ऋषिजी म और आचार्यवर श्री छगनलालजी म दोनों महासत पधारे थे। रास्तेमें दोनो महामुनीओने परीपहोपसर्गोको सहन करके धर्म प्रचार किया था। आचार्य श्री छगनलालजी म. और तिलोकऋपिजी

म दोनों समकालीन थ । दोनों महापुरुष थ । पू य श्री छगनलालजी म साथन बबई में चातुर्मास किया था । बबई जसे विशाल क्षेत्रका उद्घाटन का श्री गणश करनवाले महापुरुष श्री छगनलालजी म ही थ । आप प्रकांड विद्वान अद्वितीय वक्ता और गुणाक भडार थ । आपक शिष्य मंडलीमेंसे २ शिष्य विशेष उल्लेखनीय थ । अुनमें घोर तपस्वी श्री देवीलालजी म थे । आपकी तपश्चर्या पढकर पाठकोंको आश्चय होगा और आपका वराग्य कसा दढ और शिघ्र प्राप्त हुआ यह कोअी कम आश्चर्यकारक नही है ।

आपका ज म तो दिगबर जैन वगेर बाल वयमे हुआ था । आप आचार्य प्रवरको पहुचाने लिए साथमें पधारे थ । रास्तेमें सत्सगतीका प्रभाव एसा पडा कि एक कविन कहा है –

लोहेको सुवण करे वह पारस है कच्चा ।
लोहेको पारस करे वह पारस ह सच्चा ।।

आचाय प्रवरकी सगतीसे आपके हृ यमें वराग्यका झरना फूट पडा । आपन आचाय श्रीसे पूछा कि आप मुझ दीक्षा दे सकते हो । आचाय श्रीन फरमाया ' आपको क्यो नही दे सकते आप तो जैन हो भगवान महावीर स्वामिक वीरपुत्र हो यहां तो हरीकशी जसे चाडाल भी दीक्षित हुये ह । आपकी भावना हो तो हमे किसी प्रकारकी बाधा नही है । यदि ऐसाही है तो आप मुझ दीक्षा देकर शीघ्रही कृतार्थ कीजिए । आचार्य श्रीजीन फरमाया भाई दीक्षा बहुत कठीन है सोच लेना ' । परतु वरागीजी तो श्वेत वस्त्र थ । रग एकदम पक्का चढ गया था स्थायी भवति चात्यन्तं राग शक्लपट यथा । अुनका वैराग्य का झरना तो नदीका रूप धारण करके श्रमण सघरूपी समुद्रमें मिलनेक लिए तत्पर हो गया था । अु होंने आचार्यश्रीसे फरमाया मझे आजही अर्हत प्रव्रज्या देकर कृताथ कीजिए " । शुभस्य शीघ्र शुभ कार्यमें देरी नहीं करना चाहीए । एसी कहावत ह ।

आचाय श्रीने योग्यता देखकर असी दिन अुन्हें भगवती दीक्षा दे दी थी । दीक्षा सिहक समान वीरतासे ली और सिंहके समान वीरतासे पालन

करने लगे । तपोवीर महामुनिजी चातुर्मासमे छह छह महिनेकी तपश्चर्या छाछ के आछके आधारसे करते थे । उसमेंभी छाछका आछका आधार छोडकर अन्य तपश्चर्याभी करते थे । ग्रीष्मऋतुमें एक बजेसे तीन घटे तक धूपकी आतपना लेते थे । तपके प्रभावसे वचन सिद्धी प्राप्त हो गयी थी ।

' तपसा किं न सिध्यते–' तपसे क्या नही सिद्ध होता है ? अर्थात सब कुछ प्राप्त होता है । तपसे कर्ममल जलकर आत्मा पवित्र बन जाती है । यदि महा मुनिजीके अचानक सरल स्वभावसे कोअी वचन निकल जाता वह बराबर होकेही रहता था । आपके शारिरीक पुद्गलोमें भी औषध कीसी शक्ति उत्पन्न होगयी थी ।

एक सफेद कुष्ठ रोगी महामुनिजीके दर्शनार्थ आया । अुसकी महामुनिपर महान श्रद्धा थी । तपस्वी महामुनिजी लघुनिती करके परठाके आये थे । पिछेसे इस श्वेतकुष्ठीने जाकर वह गिली मिट्टी अपने शरीर पर लगाई और मागलिक श्रवण करके रवाना होगया । इसका सारा रोग जाता रहा । और कचनवर्णसी काया बन गयी ।

महामुनिजीके शारीरिक पुद्गलोमें ऐसी शक्ति प्राप्त होगयी थी, जिससे महारोग जैसे रोगभी नष्ट हो जाते थे । धन्य है ऐसे महामुनिको जिन्होने छाछकी आछ मात्रका शरिरको भाडा देकर जन कल्याणका कार्य किया ।

पूज्य गुरुवर श्री आचार्य प्रवर छगनलालजी म० का वि० स० १९५४ मे ' अलोदमे ' सहलेखना सथारा सहित स्वर्गारोहण हुवा । जैन समाजका चमकता सितारा स्वर्गको सुशोभित करने लगा ।

पडित आचार्य प्रवर छगनलालजी म० के स्वर्गारोहणके बाद अुनके पाटपर रोडमलजी म० विराजे थे । पूज्य श्री रोडमलजी म० कठीनसे कठीन अभिग्रह लेते थे । तपमे बहुत वीर थे । चार प्रकारके वीर कहे है । १. दानवीर २ युद्धवीर ३. कर्मवीर ४ धर्मवीर

दानवीर कर्ण के समान मरते दमतक दान देते रहते हैं। युद्धवीर युद्धमें प्राणोंको दे देते हैं। परन्तु पिछे नहीं हटते। कर्मवीर अर्जुनके समान। धर्मवीर धर्मके लिए प्राणोंका मोह नहीं रखनेवाले। चतुर्थ नंबरमें पूज्य श्री रोडमलजी म० थे। तपमें अपनी आत्माको हमेशा लगाई रखते थे। आपके अभिग्रह ऐसे कठिन होते थे जिनको सुनकर आश्चर्य उत्पन्न हुये बिना नहीं रहता।

एक समय पूज्य श्री रोडमलजी म० उदयपूर शहरमें विराजमान थे। आपने अभिग्रह लिया था कि यदि हाथी लड्डू बहराय तो भोजन ग्रहण करना। भिक्षाचरीके समय रोजाना उठते थे। जनता विविध प्रकारकी वस्तुओंको लेकर आमंत्रणा करती। परन्तु महा तपस्वी वस्तुओंको देखकर लौट जाते थे। एकके बाद एक इस तरह पचालीस दिन बीत गये। महातपस्वी तपमें दृढ थे। जनता कभी प्रकारके संकल्प विकल्प करती थी। देह एकदम कृश हो गया था। गुरुदेव कब पारणा करेंगे पारणा क्यों नहीं करते हैं अभीग्रहमी हो तो क्यों नहीं फलता इस तरह जनता कभी प्रकारके विचार करती थी। आपका तेज फैल रहा था। पूज्य श्री तपमें मग्न थे।

पचालीस दिनके बाद महाराणा का हाथी अचानक मदमें आजाता है। और बंधन तोडकर गजशालासे भाग जाता है। शहरमें चारों ओर हल्ला मच जाता है। हाथीसे भयभीत होकर जनता इधर उधर दौडधूप करती है। हाथी गुलगुलाट शब्द करता हुआ चौक और बाजारोंमें घुमने लगता है। राज कर्मचारी उसे पकडनेके लिए अनेक प्रयत्न करने लगे। परन्तु वह पकडमें नहीं आरहा था। इधर हाथी दौडता जाता उधर दौडो दौडो की आवाज आती थी। कहीं किसीको नुकसान न पहूचा दे। हाथीको देखतेही जनता प्राणोंको बचानेके लिए घरोंमें जाकर छुपती थी।

एसे समयमें 'जिमिया समरण भय विप्प मुक्के' पूज्य श्री हाथमें झोली और भिक्षा पात्र लेकर भिक्षाचरीको निकले। तपस्वीजी शांत

मुद्रासे इरियासमिति पूर्वक शास्त्र मर्यादानुसार चल रहे थे। दशवैका-लिक सूत्रमे श्रमण भगवान महावीर स्वामिने फरमाया है– ' दवदवस्स् न गच्छेज्जा भासमाणो अगोयरे। हासतो 'नाभि गच्छेज्जा कुल उच्चावयं सया ' साधुको भिक्षाचरि को जाते समय बहुत जल्दी जल्दी नही चलना चाहीए। बातोके सपाटे मारता हुवाभी न जावे, हसता हुवा न जावे। ऊच नीच और मध्यम कुलमें भिक्षाचरीको जावे। बस, इसी तरह महामुनि तपस्वीजी भिक्षाचरीको निकले। ज्योही राजकर्मचारीयोने देखा कि चिल्लाने लगे 'अरे! तुम अीधर मत आवो, यह हाथी तुम्हे मार डालेगा'। परतु श्री तपस्वीजी आगेही आगे बढते जा रहे थे। कोइ कहते थे 'मरनेदो, नही मानता है तो'। परतु वे भोले प्राणी क्या जाने ? अिन महातपस्वीके प्रभाव से नगरका सारा उपसर्ग टलेगा और अिनका अभिग्रहभी फलेगा। हाथीके नजदीक ज्योही कठिन अभिग्रहधारी श्री महातपस्विजी रोडमलजी म पहुचते है त्योही हाथी का मद उतर जाता है। कहा भी है –

"साधु चंदन बावना, शितल ज्यारो अग।
लहर उतारे भुजगकी, दे दे ज्ञानको रग॥"

महा तपस्विजीकी दृष्टी पडतेही हाथी शात हो जाता है। अुस बाजारमें एक हलवाइकी दुकान थी। हलवाइ हाथीको देख डरके मारे घरमें भाग जाता है। दुकान खुली रहती है। अुसमेसे हाथी सुडमे लड्डु लेकर मुनिके सन्मुख करता है। मुनिजी भिक्षापात्र सामने करते है। हाथी उसमे लड्डु वेहराता है। बस फीर तो राज कर्मचारीयोके आश्चर्य का पारही नही रहता है।

जनताभी यह दृश्य देख रही थी। राज मार्ग म महा तपस्विजी और हाथी यह दोनो थे। गजराजका लड्डु वेहराना और मुनिराजका पात्रमे लेना यह दोनो दृश्य अद्वितीय थे। हाथी और मुनिराजका समागम सबको आश्चर्यचकित कर रहा था। महातपस्वी मुनिराजका अभिग्रह पूर्ण होनेकी बात विजलीकी तरह सारे शहरमें फैल गयी। चारो ओर जयनादकी पुकारे अुठाने लगी। महामुनिने जो अभिग्रह

चिठ्ठीमें लिख रखा था वह सबके सामने प्रकाशित कर दिया गया। जैन धर्मका महान प्रभाव बढा। हाथीने भी अपन गजशालाका रास्ता पकड लिया। मुनिराज धर्मस्थानमें पधार गये। धन्य है ! ऐसे महा तपस्विको।

ऐसे कठीनसे कठीन अभिग्रह धारणकर मुनि श्री महा तपस्वि श्री रोडमलजी म जन समाजमें प्रकाश फैलाकर करीब तीनमें पतालीस दिनका संथारा करके स्वर्गवास हुये। आजभी संसारमें अुनका नाम रौशन है। एसे तपोपुंज मुनि तपकी ज्योतिसे सोये संसारको जगा जाते है। समाज अुनका ऋणी है।

अुनके बादमें धर्मप्रेमकी प्रेरणा बहाते हुये श्री प्रेमराजजी म पाटपर विराजे। यह भी महान तपस्वी थे। अच्छे विद्वान महा परोपकारी तथा नम्र प्रकृतिके सरल स्वभाववाले थे। आप स्वसमय पर समय के ज्ञाता थे। आप हिंमत बहादूर और निडर थे। जो दिलमें करना चाहते वह करके दिखाते थे। आप विघ्न बाधाओंके लिए खुद विघ्न बाधा बन जाते थे। आपका यथा नाम तथा गुण था। आप स्वयं धर्मरूपी सरोवरमें प्रेमके गोते लगाते थे। और आनेवाले भव्य प्राणीयोंको भी प्रेममें सराबोर कर देते थे।

तपस्वी श्री प्रेमराजजी म साबके पास हमारे चरित्र नायकजीसे पहिले तीन चार शिष्य हो चुके थे। परंतु अुन्हे और एक रत्न प्राप्त होनेवाला था। अतः पूज्य श्री विहार करते हुये नाशिक जिल्हेको पावन कर रहे थे। उस समय उन्हे एक अद्वितीय रत्न प्राप्त हुआ था। जिसका वर्णन आगे चरित्ररुपमें किया जानेवाला है। वे गुरु चरणमें आतेही पूज्य श्री प्रेमराजजी म के प्रेमगंगामें नहाने लगे। पूज्य श्री तपस्विजीने उस रत्नको चमकानेके लिए ज्ञानका रंग चढाने लगे। कुछ अंकुर तो हमारे चरित्रनायकजीके हृदयमें पहिले तो था ही। परंतु पूज्य श्रीके उपदेशरूपी पर्यासे और भी दृढ बन गया। कुछ दिन रत्नको परखकर नगरसूलमें दीक्षा देकर कृतार्थ कर दिया। पांच महाव्रत रूपी अमूल्य रत्नोंको लेकर

और भी रत्नकी कीमत बढ गयी थी । आगे जाकर अमूल्य रत्न लेकर समाजके एक देदिप्यमान सूर्य निकले थे । कभी प्राणियोको अभयदान दिया था । ' खादीवाले तपस्वी श्री कर्नाटक गजकेसरी ' गणेशलालजीके नामसे सारे देशमें प्रसिद्ध हुये । श्री गणेश सचमुचही श्री गणेश थे । अुनके खेमचदजी म ,अमरचदजी म ,राजमलजी म ,तथा मिश्रीलालजी म. चार शिष्य हुये थे। चार शिष्योमेसे वर्तमानमें सिर्फ तपस्वी श्री मिश्रीलालजी म विराजते है । आपके भी तीन शिष्य है । बा ब्र सपतराजजी म., रतनलालजी म तथा नवदीक्षित बा ब्र खुशालचदजी म । तिनो शिष्य मडलीसहित तपश्चर्या करते हुये गुरुवर की गादी दीपा रहे है ।

प्र क र ण ३ रा.

परमपूज्य गुरुदेवका बाल्य काल

मानुष्ये सति दुर्लभा पुरुषता, पुस्त्वे पुनर्साधुता ।
साधुत्वे वहु विद्वताऽनिगुणता विद्यावतोऽर्थज्ञता ।।
अर्थज्ञस्य विचित्रवाक्यपटता, तत्रापि लोकज्ञता ।
लोकज्ञस्य समस्तशास्त्रविदुषो धर्मे मतिदुर्लभ ।।१।।

" मानुस्सखसुदुल्लहम् " मनुष्य भव महान दुर्लभ है । परतु कवि कहता है मनुष्य भव मिलनेपर भी पुरुपत्व मिलना बहुत कठिन है । पुरुपत्व भी मिल जाता है पर विद्वान गुणवान बनना दुर्लभ है । विद्वान बननेपर भी यथार्थ तत्वके ज्ञाता बनना कठिन है । अुससेभी वचनकी चतुराई प्राप्त करना सुदुर्लभ है । वाक्पटुतासेभी लोगोके मनोगत भावोको समझना मुश्किल है । अुससे भी समस्त शास्त्रोमे पारगत होना कठीन है । अुपरकी सब बाते मिलनेपर भी धर्ममें बुद्धि रहना अति दुर्लभ है ।

धर्मके रगमें रमे हुये परमपूज्य श्री तपस्विजीका जन्म, मारवाड प्रदेशके " भावी विलाडा " पुरीमें हुवा था । मारवाडको साधारण

बोलचालकी भाषामें कहा जाता है कि मारवाड माँ का पेट है"। मारवाड याने मारके आडी वाड। अर्थात हिंदुस्थानपर जितने भी हमले हुये वे मारवाडकी तरफसे हुये। परन्तु यहाँ की जनता हमलेखोरोंके सामने वाडके समान डटकर रही। और सारे देशकी रक्षा की। अिसलिये अिस प्रदेश का नाम मारवाड पडा। यहाँके रहनेवालोंको मारवाडी कहते है। यह प्रदेश राजस्थानके नामसे भी प्रसिद्ध है। राजाओंका मुख्य स्थान होंनसे वीर प्रसवाभूमिने कई वीर-धीर महान व्यक्तियोंको जन्म दिया है। जहाँकि वीरांगनाओंने विजयलक्ष्मी प्राप्त करनेको स्वपतियोंको सजाकर रणभूमिमें सहर्ष भजा है। जहाँके रजकण सुवर्ण कांतिके सदृश्य चमककर यह बताते है सुवर्णमय जीवन बितानेवालेकी यही शान है।

अैसे वीर भूमिके भावी भिलाडा नामक सुन्दर धर्मप्रधान क्षेत्रमें पुनमचंदजी नामके सेठ रहते थे। सेठजी श्रेष्ठ गुणोंसे सुशोभित थे। वर्तमानके सेठोंके समान नही थे। कलीकालके सेठोंका वर्णन करता हुआ अेक कवि कहता है -

> अचा मकान फिका पक्वान मोटासा पेट लवसे कान।
> केशरका तिलक कपुरकी माला छोटासा कपाट मोटासा ताला।
> पाँचसोकी पुंजी साठ सौ का दिवाला।

अैसे बाह्य आडंबर करनेवाले नही थे। सेठजी अत्यंत सादगीमय जीवन बितानेवाले थे। सेठजीको न्यायनीति प्राणोंसेभी प्यारी थी। वर्तमानमें धनके गजसेहि सेठोंको नापा जाता है। परंतु पहिले श्रेष्ठ गुणोंसे युक्त व्यक्तिकोहि सेठ कहा जाता था।

धन दो तरह का होता है। (१) द्रव्यधन (२) भावधन। द्रव्यधन क्षणिक है। आलस्य प्रमाद तथा अभिमान को उत्पन्न करता है। दुसरोंके अिर्षाका कारण बनाता है। कारण वह परिग्रह है। परन्तु भावधन इन दूषणोंसे रहित है। चरित्रनायकजी के पिता श्री पुनमचंदजी द्रव्यधनकी अपेक्षा भावधनसे अधिक धनवान थे। दिलके उदार,

स्वाभिमानी, धर्मश्रद्धामय, अटल तथा श्रमणोपासक श्रावक थे। सेठजीके घरको सुभोशित करनेवाली सेठानी श्री "धूलीदेवी" क्षमा में सचमुच पृथ्विके सदृष्य थी। रूपमे सुदर, शीलमें आभूपणोसे सुसज्जित तथा पतिव्रता थी। कविने कहा है —

" सति सुरूपा-सुभगा विनीता प्रेमाभिरामा, सरल स्वभावा।
सदा सुआचार-विचार-दक्षा सा प्राप्यते पुण्यवशेन पत्नी "।

पुण्य विना योग्य स्त्री प्राप्त होना महान मुष्कील है। सती, स्वरूपवान, सौभाग्यशाली, नम्र, पतिसे शुद्ध प्रेम करनेवाली, सरल स्वभावी, सदाचारी तथा विचार विमर्श करनेमें चतुर अैसी स्त्री पुण्यसेहि प्राप्त होती है। वर्ना एक कवि कहता है —

आजकलकी नारीयाँ मुफ्तकि विमारीयाँ।
काम कुछ करती नही और लडनेकी तैयारीयाँ॥

अैसी स्त्रीयोसे गृहवास नरक की तरह बन जाता है। अिसी तरह की स्त्रियाँ, क्या समाज और कुलको सुशोभित करनेवाली सतति पैदा कर सकती है? अर्थात कभी नही।

मिट चुकी वो क्षत्राणियाँ, खुटी रत्नोकी खाण।
प्रेम पुतलियाँ रह गयी, प्रसव रही पाषाण॥

यह तो हुअी वीसवे सदीकी स्त्रियोकी बात। परतु चरित्र नायकजी की मातोश्री श्री धुलीदेवी महान कार्य पारायण थी। वह पतिको साह्य करनवाली थी। कभी भी निकम्मी नही वैठती थी। गृहकार्यसे थोडाभी समय मिलाकी झट चरखा कातने वैठ जाती थी। सामाइक सवर, पौपध, तप तथा जपमेंभी तत्पर रहती थी। कहाभी है —

" As is the father so is the son "

जैसे मातापिता होते है वैसीही सतती होती है। अिस कहावतके अनुसार धार्मिक और पवित्र दम्पत्ति आनदमे गृहस्थाश्रमका पालन करते थे। अुस समयमें माता धुलीदेवीके कुक्षिमें एक पुण्यशाली महान

आत्मा अवतरित हुयी। पुण्यशाली जीवके गर्भमें आतेहि माता शुभ भावना भाने लगी। माताको अत्यंत आनंदका तथा सुखका अनुभव होने लगा। होनहार बीरवानके होत चिकने पात। तथा कहते है पुत्रके लक्षण पालने और बहुके लक्षण बारने। आंग्ल कवि मिल्टन ने कहा है---

The child hood shows the man as the morning shows the day ' लेकीन ज्ञानी कहते है, पुत्रके लक्षण गर्भसेहि प्रगट हो जाते है। जिसप्रकार भगवान महावीर स्वामिके गर्भमें आतेहि धनधान्यकी वृद्धि हुयी।

माताके उपरही गर्भके संस्कारोंकी जबाबदारी रहती है। पुरानी बहने अक्षर ज्ञानसे अनभिज्ञ होनेपरभी मातृत्वके गुणोंको जानती थी। अपनी जबाबदारी का पालन करती थी। जीव्हापर आंखोंपर तथा अपनी सब इंद्रियोंपर संयम रखकर संततिको समाजका देशका धर्मका लाल बनाना चाहती थी। समाज देश तथा धर्मकी धरोहर समझती थी। वर्तमानकी बहने पढीलिखी ज्ञानमें तो पुरुषोंकी बराबरी करने जा रही है पर संततीको तो एक बोझा समझती है। वे यहांतक जितनी स्वार्थी बन गयी है कि बच्चोंको दूध पिलानाभी नहीं चाहती। कहती हमें कमजोरी आती है। जब की सामने आनेपरभी दूध पिलाना नहीं चाहती तो गर्भका क्या तो अच्छी तरह पालन करेगी और क्या संस्कार डालेगी ? डिब्बेका तो दूध पिलाती है, स्कूलमें पढनेको भेज देती है खानेको होटलमें। फिर माता पिताओंके संस्कार संतती में कहांसे आये ? चरित्र-नायकजी के माताने गर्भसेहि अच्छे सुंदर संस्कार डाले कि — जिससे आगे आकर असी धर्मकी क्रांती फैलानेवाले महात्मा बने।

माता असा पुत्र जन के दाता के शूर।
नहि तो रहिये बांझडी मती गमाज नूर ॥

माता चलीम्बीने संवत् १९१६ कार्तीक शुक्ल ६ को रात्रीके चतुर्थ प्रहरमें जैसे सूर्यको पूर्व दिशा जन्म देती है, असेहि देदिप्यमान

तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। जन्म होतेहि चारो ओर आनद की लहरें उठने लगी। माता पुत्रके मुखकमल को देखकर प्रसूति वेदनाओको भूल जाती है। और अपने जन्म को सफल मानती है। परतु अुसी माताका जन्म सफल है, जिसका पुत्र कुलवशको प्रकाशित करता है, जैसा –

किं तेन जातु जातेन मातुर्यौवनहारिणा।
नारोहति न च स्वस्य वशस्याग्रे ध्वजो यथा॥

अुस पुत्रके जन्मनेसे क्या जो कि सिर्फ यौवनका हरण करता है, किंतु कुलकी, वशकी ध्वजाके समान उन्नति नहि करता है। चरित्र नायकजीकी आकृति, सौदर्य, तथा तेज देखकर मातापिता धन्य हो गये। चरित्र नायकजीकी भव्य ललाट, लबी भुजाये, तेजस्वी नेत्र, सुतीक्ष्ण नाक, गौरवर्ण, काली भुवाएँ और सुदर लक्षणोसे युक्त सुकोमल हाथ-पाव भविष्यको बता रहे थे कि, यह कोई सोये हुये जगको जगानेवाली महान आत्मा है।

लबी ललाट, लबी भुजा, लबा नेत्र सिरेह।
क्या देखो ऐ ज्योतिषि ! बैठा राज करेह॥

मातापिताने सूर्यदर्शन पूजनादि कार्य करके, नामकरणके समय पहली ही सतती है, तथा सपूर्ण विघ्नोका नाश करनेवाली महान पुण्यशाली आत्मा है "अत श्री गणेशमल" नाम रखा। माता अपने सुपुत्रपर सुसस्कार डालनेमें प्रतिक्षण सावधान रहती थी। पहला शिक्षक सततिके लिये तो माताहि होती है। मातायें सततिको, चाहे जैसा बना सकती है। जैसे कुभार गिली मिट्टीसे चाहे जैसे वर्तन बना सकता है, या किसान छोटे पौधेको चाहे जिधर झुका सकता है, वैसेहि छोटे बच्चोमें जैसेभी सस्कार भरना चाहो वैसे सस्कार माता भर सकती है। दुसरा शिक्षक सततिका पिता है। वहुतसे पिता प्यारमे सततिको विगाड देते है। लडकी होती है तो कहते है "वाई तेरे विंद कैसे लाना ?"। तव पहले सिखाई हुयी वच्ची कहती है 'गोरा गोरा'। यदि लडका हुवा तो कहते "जा तेरे माँकी चोटी खीचकर आ, मैं तुझे चार आने दूँगा"।

तो जिधर माता कहती जा तेरे पिताके सरके बाल खिचकर आ मैं तुझे आठ आने दूंगी । इत्यादि गंदी मजाकसे बच्चोंपर बुरे संस्कार पड जाते है। मातापिता अैसी मजाक करके आनंद मनाते है पर आग खाकर आँसू बहान पडते है। जबकी वे भोले बच्चे न तो लग्नमें समझते हैं न पसेमें परतु अुनके आत्मापर अैसे भद्द संस्कार जरूर पड जाते है।

चरित्रनायकजीके पिता श्री भी बहुत विवेकवान गुणवान तथा सुसस्कारी थे। वे वैसाहि अपने पुत्रको बनाना चाहते थे। एक समय चरित्रनायकजीने अगरबत्तीको सिसा लगवाया। तो पिताश्रीने गालपर चपट लगाकर कहा क्या चोरी करना सिखना है ? अिस छोटेसे अुदाहरणसे पिताश्रीकी धर्मनिष्ठा और सुसस्कारिता की झलक दिखाई देती है। दुसरे व्यसन तो लगाहि कैसे सकते थे ?

माता रिपुपिता शत्रुर्बालोयाभ्यां न पाठ्यते ।
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा ॥

अर्थात जो मातापिता अपनी संततिको नही पढाते है वे मातापिता शत्रु कहलाते है। अुनकी संतति सभामें सुशोभित नही होती। जैसे हंसोंक बिचमें बगला। वर्तमानमें मातापिता द्रव्य शिक्षण काफी देते है। पर चारित्रकी तरफ बहुत कम ध्यान देते है। अक्षर ज्ञानकोहि शिक्षण समझते है। परतु चारित्र्य क बिना साक्षर ज्ञान मनुष्यको राक्षस बना देता है। चरित्रनायकजीके पिताश्रीने हमारे कथा नायकजीको वयमें आतेहि शिक्षण देना शरू कर दिया।

शिक्षण भलेहि डिग्रीकी अपेक्षा थोडाहि हुवा हो पर सच्चा ज्ञान हृदयपर अंकित हो गया था। तथा बुद्धीकी तीव्रताके कारण तेलका बुन्द पानीमें जैसे फैल जाता है वैसी तरह बुद्धिका विकास होता जारहा था। मातापिता सुपुत्रकी बुद्धि विचक्षणता तथा स्वाभिमानताको देखकर फुले नहीं समाते थे।

घुली देवीने पाच वर्षवाद और एक पुत्रको जन्म दिया, जिनका नाम 'शोभाचन्द्र' रखा। दोनो पुत्रोका अति प्रेमसे पालन कर रही थी। दोनो भाई मानो रामलक्ष्मणसी जोडी थी। दोनो साथमें क्रीडा करते, एक दुसरोकी सहायता करते और आनदमें मग्न रहते थे।

प्रकरण ४ था

वज्रपात

चरित्रनायकजीने पद्रह वर्षको पार करके सोलहवे वर्ष में पैर रखा था। छोटाभाई १० वर्षका था। अैसे समयमे निसर्गको मानो अिनका आनद सहन नही हुवा। अत. अचानक अघटित घटना घटी। जिसका सपनोमें भी खयाल नही था। वच्चोका सर्वस्व ज्यो माता होती है, अुसीके अुपर कालचदजीकी क्रूर दृष्टी पडी, और वे अुसे ले गये। अर्थात माताका स्वर्गवास हो गया। दोनो वच्चे विलखने लगे। हृदयसे करुणास्रोत वहने लगा। सेठ पुनमचदजी के दु खका तो पारही नही रहा। क्योकि पहले एक पत्नि चल वसी थी। और दुसरीभी चली गयी। साथमें दो छोटे-छोटे फूलसे वच्चोको छोड गयी थी। अत. वच्चोको देख-देखकर सेठजी अधिक वैचन होने लगे। कुटुम्व परिवार काफी था। फिरभी माता की गोदका आनद तो कही भी मिल नही सकता।

दोनो भाईयोने पितामेंहि, माता और पिता का अनुभव किया। कहाभी है "कालाय तस्मै नम।" अर्थात अुस कालको नमस्कार है, जिस के सामने वडे योद्धा, राजा, रक सभीने हार खाई है। अुसका नगारा अखड वजताहि रहता है। अुसने तीनो लोकमें धाक जमा रखी है। वह सर्व-विजयी है। दोनोभाई पिताकी गोदमें आनद मान रहे थे, परतु अशुभ कर्मोको तो मानो इन किशोर वच्चोकी परीक्षाहि लेना था। अत. चोवीसदिन मातृवियोग को नही हुये थे कि पिताश्रीका देहावसान हो गया। अव तो दोनोभाई निराधार होगये। वडे तो अपने चरित्रनायकजी थे।

ये चिंतारूपी समुद्रमें डुब गये । अपने अशुभ कर्मोंको दोष देने लग। माता पिताका वियोग हो जानेसे उनका वहांपर दिल नही लगता था । अब कभी माता-पिताकी स्मृति में रो पडते थे तो कभी भविष्यकी कल्पना करते तो कभी संसारकी क्षणिकतापर विचार करते तो कभी अपने कर्मोंको दोष देते तो कभी हिम्मतपूर्वक अपने मनको कहते थे हिम्मत नही खोना चाहिये । हिम्मते मर्दा मद्दे खुदा- हिम्मत हारना यह तो कायरोंका काम है ।

हिम्मत न छोर खो दिलगीर तू न हो ।
तदबीरभी तो कर कुछ तकदीरको न रो ।

धीरताके संस्कार तो बचपनसे ठूंस-ठूस के भरे हुये थे । वीर पिताके पुत्र कायर कैसे बन सकते थे ? गावमें भाई बन्दोके बहुत घर थे । सब भाई बन्दोंने कहा तुम हमारे घर रह जावो । परन्तु चरित्र नायकजीका वहाँ मन नहीं लगता था । ननीहालवालोंने कहा बाबू ! हमारे यहाँ चलो । और और अन्य कुटुंबियोंने अपने यहाँ चलनेका आग्रह किया । परन्तु वीर पुत्र क्यों किसीके शरणमें जाने लगे ? मनुष्य वही है जो अपना सुख दुःख अपने आत्मबलसे सहन करे । एक पाश्चात्य कवि कहता है-

Be a man bear thine one burden never
Think to thrust thy fate upon another !
-Robert Browing

वही मनुष्य है जो अपने बोझको आपहि सहता है । अपने भाग्यको दुसरोंपर डालनेका विचार भी नही करता है ।

चरित्रनायकजीने कायरताका तो कभीभि पाठ नही पढा था । असे समयमें साधारण व्यक्ति तो जिधर उधर सहारा लेनेके लिये लालाईत होता है । अनकोंकी सिफारिश करता है । कहयोंकि पुकारे, रुजना सुनता है और अपने जीवनको दुसरोंके सहारे छोड देता है । पर चरित्रनायकजीने असे कठीण समयमें अपने परोंपर खडे रहनेका सोचा । पर किसीके शरणमें जानेका नही । चरित्रनायकजीका आयके ६ वर्षमें पदार्पण हुआहि था कि जयपुर के एक धनि मानी निपुत्रिक

सेठने हमारे चरित्रनायकजीको गोद लेनेके इरादेसे ले गये। वे वहाँ कुछ दिन तो रहे, किंतु एक दिन स्वाभिमान झलकहि अुठा। चरित्र नायकजीने कहा, मै तो यहाँ नही रहूँगा। मै अिस जिंदगीमे दो बाप करना नही चाहता। मुझे अपने घर भेज दीजिये। छह वर्षके बच्चेके मुँहसे यह बात सुनकर सेठजी आश्चर्यचकित हुये।

अपरकी घटना तो छह वर्षकी अवस्थाकी है। अब तो चरित्र नायकजी १५ वर्षके थे। भिलाडे मे माता–पिताके स्मृति चरित्र नायकजीके दिलको बेचैन बनाती थी। अत. चरित्रनायकजी मारवाड छोडकर छोटे भाईसहित विदेशमें आगये थे। मानो दोनो भाइयोकी जोडी रामलक्ष्मणसी प्रतित होती थी। विदेशमे आये तो मनमाडमें ललवाणी गोत्रके दसपद्रह लाखकी इस्टेटवाले सेठजी गोद लेना चाहते थे। अुन्हे वही अुत्तर मिला ' मै दो बाप करना नही चाहता '। अैसेहि जामनेरके बीस–पच्चीस लाखकी सपत्तीवाले सेठजीको भी निराश होना पडा। चरित्रनायकजीकी पुण्यवानीको देखकर सभीका दिल अपना-अपना पुत्र बनानेको ललचाते थे। परतु वे धनसे अपनें बापका नाम बेचना नही चाहते थे। वे कहते ' यह तो कुपुत्र का काम है जो सोने चादीके टुकडोको देखकर अपने बापका नाम मिटा दे। देखिये, चरित्र नायकजीका निस्पृहताका और स्वाभिमानका आदर्श। Oh, How sublime a thing it is to suffer and be strong अर्थात यह कितनी महान वस्तु है जो सहन करता जाता है और मजबूत बनता है।

प्र क र ण ५ वा

भाईका वियोग

कालचदजीने मानो इनकी पुरी परीक्षा लेनाहि ठान लिया था। ज्यो ज्यो ये धैर्य, दृढता रखने लगे, त्यो त्यो कालचदजी इनकी अधिक कसौटी करने लगे। देश छोडके दोनो भाई विदेशमे आये तो भी अुसने पिछा नही छोडा। जैसे लकामें लक्ष्मणजीको शक्ति लग गयी, वैसेहि

यहाँ पर प्रिय छोटे भाई शोभाचन्द्रजीको कालरूपी अग्नि लग गयी। और वे चरित्रनायकजीको दुनियामें अकेले छोडकर चल बसे। अब चरित्रनायकजी अकेले रह गये। इतने दिन माता पिताका स्वर्गवास होनेपरभी भाईका सहारा था पर अबतो अकेली आत्मा रह गयी। खेद तो बहुत हुवा। अुस दुःखका तो वर्णन करना असम्भव है। क्योंकि यह दुःख तो जिसपे बिती हो वही जाने तथा केवली। कलममें वह शक्ति नही है जो यथार्थ वर्णन कर सके। कविने कहा है-

घृष्टं घृष्टं पुनरपि पुनः चन्दनं चारुगन्धम्।
तप्तं तप्तं पुनरपि पुनः काञ्चनं कान्तवर्णम्॥
छिन्नं छिन्नं पुनरपि पुनः स्वादुदं चेक्षुखण्डम्॥

चन्दनको चाहे कितनाहि घिसो वह तो अधिकसे अधिकही सुगन्ध देगा। सुवर्णको ज्यों ज्यों अधिक तपाया जाता है त्यों त्यों अधिक चमकता है। गन्नेको काटते समय ज्यों ज्यों निचेके तरफ आते है त्यों त्यो अधिक स्वादिष्ट लगता है। अिसी तरहसे सज्जन व्यक्तिपर चाहे जितनाभी कष्ट आये तोभी प्रकृतिमें विकृति नही आती है।

चरित्रनायकजीके जीवनमें ज्यों ज्यों कष्ट आने लगे त्यों त्यों वे धर्मशाली बनते जारहे थे। वे हिम्मत हारना तो कभी जानतेहि नही थे। अकेले रहनेपर भी चाँद-सूर्यको देखकर कहते यह भी तो अकेले है दुनियाको प्रकाशित करते है। मुझे क्यो हताश होना चाहिए। एसा विचार करके मनको अधिक दृढ बनाते थे। बल्लापूरमें आकर एक सेठके यहाँ मुनीम रहे। सेठजी बडे अच्छे थे। परन्तु लोभ किसको चक्करमें नही डालता है ? एक समय सेठजीने मदतकी हुंडी लिखनको कहा। चरित्रनायकजीने कहा लिजियेजी आपकी दवात और कलम सभालिए। मै एसे झूट धंदे और अन्याय करना नही चाहता। ११ महिने नौकरीका एक पैसाभी नहीं लिया। नौकरी छोडकर चले गए। सेठजी देखतेहि रह गये। सेठजीको क्या मालूम की जिसने लाखोंकी इस्टेटपर ठोकर मार दी उसके लिये दो ढाइ वर्ष नौकरीके पैसे क्या चीज है ? सेठजीको दुःख तो बहुत हुवा और मुनिमजीकी बाट जोहते रहे। पर स्वाभिमानी

व्यक्ति अन्यायके सामने झुकना कभी नही चाहता । मुनिमजीने तो नोकरीको सेवा रूपमें प्रवर्तित करदी । वे विचारने लगे " यदी मैं पैसा लेता तो मजदूर कहाता ।" किन्तु मैं सेठजी की सहायता करके सेवा की । अच्छा हुवा सेठजीने पैसे न देकर मुझे नौकरपनेसे बचाया । सेठजीका मुझपर उपकार है ।

वहासे एक कच्छि मुसलीमके दुकानपर गये । और अुसे स्पष्टतासे जाकर कहा की ' भाओी, मैं सेठजीके यहासे छूट गया हू । मेरे पास एक कौडी भी नही हं, अगर तुझे विश्वास हो तो, कुछ माल अुधार दे" । कच्छी अुनके सत्यतासे आर्कपित होकर उसने शिघ्रही माल दे दिया । माल लेकर " रास्ते "के पासकी " पिपरीमें " दुकान की । बहुत धन कमाया । फिर " नदुर बाजारमें " बडी भारी कपडेकी दुकान लगायी । न्यायनीतीके कारण दुकान खूब जोरदार चलती थी । सत्यके प्रभावसे लक्ष्मीनेभी अपना वास्तव्य वहीपर कर दिया था । लक्ष्मी " दिन दुनी रात चौगुनी " बढने लगी ।

प्र क र ण ६ टा

विवाह की तैयारी

" नगर सूलके " निवासी श्री खेमचदजी बाफणाने अपने भाइकी पुत्रीके साथ चरित्रनायकजीकी शादी करना चाहा । सगाइकी तैयारी हो गयी । परंतु महान आत्मा इस ससारके फदेमें क्यो फसने लगे ? उन्होने कहा ' मुझे लग्नके फदेमें नही पडना है ' । देखिए ससारसे कितना अुदासिन भाव था । शादीके विपयमें एक कवि कहता है-

देश प्रदेशा नर फिरे मनमें राखे चाह ।
नाक खिचावे साससे बडी चीज है व्याह ।।

जिस शादीके लिए लोग हजारो रुपये खर्च करते है, कभी प्रपच रचते है, बुडे जवान बन जाते है, शादीके लिए गालोमें सुपारी दबाकर

गाल फुगाते है। नये दातोकी बत्तिसी बधाते है। बालोंकी सफदी ढाकनेके लिए खिजाब लगाते है। चरित्रवेत्ता स्वय महसे फरमाते थ -

भक्ति करी गुरुदेवने किया जगतसे दूर।
नही तो मिलती राड ककणा पडति सिरमें धूर॥

चरित्रनायकजी निस्पह बन गय। वे जब भी एकातमें बिचार करने लगते तो ससारकी असारताको देखकर दिल बचैन बन जाता था। पुण्य कर्मोदयसे आत्मा पुकारती थी की तू क्यों संसारमे पडा है ? इसमें कोबी सार नही है। यदी म शादी करूगा तो ससार जालमें फंस जाबूगा। फिर निकलना कठिन हो जायगा। अत शादी न करनाहि मेरे आत्मोत्थानके लिए श्रष्ठ है।

प्रकरण ७ वाँ

वैराग्य

जरा जावन पीडई वाही जावन बढ्ढई।
जाविदिया न हाय इ ताव धम्म समायरे ॥१॥

प्रभु महावीर स्वामि फरमाते है हे भव्यप्राणियो जबतक आयष्य क्षय नही हुआ हो जबतक इन्द्रिय शक्ति क्षय नही हुयी हो व्याधि नहीं बढी हो तबतक धर्मका साधन कर लो।

यावत्स्वस्थमिदं कलेवरगहं यावत्क्षयोनायुष।
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावच्चदूरे जरा॥
आत्मश्रेयसी तावदेव विदुषी कार्यप्रयत्नो महान्।
उद्दीप्ते भुवन तु कूपखनन प्रत्युद्य मिदृश ॥१॥
अठारह पुराण के कर्ता श्री व्यासजी महाराज कहते है -

हे सुज्ञ जनो जबतक यह शरीररूपी घर स्वस्थ हो जबतक आयुष्य का क्षय नही हुआ हो जबतक इन्द्रियोंकी शक्ति नष्ट न हुमी हो और वृद्ध अवस्था दूर हो तबतकही आत्मकल्याणमे इच्छक व्यक्तियोके

प्रयत्न करना चाहिअे । घर जलानेके बाद कूँआँ खोदनेका प्रयत्न करनेसे क्या ? अर्थात मूर्खो का काम है । बुद्ध को वृद्ध व्यक्ति देखकर वैराग्य उत्पन्न हुआ । अनाथि मुनि को रोगके कारणसे तो, किसिको सफेद बाल देखनेसे, इत्यादि अनेक कारणोसे वैराग्य उत्पन्न होता है । शास्त्रमेंभी, २७ कारण बताये है । कारणके बिना, कार्य नही होता है । यह न्याय-दर्शनका नियम है । कार्य कारणका अविनाभवि सबध है ।

रोग तो बहुतसे व्यक्तियोको आते है । अुस समय कोअी तो डॉक्टर की शरण लेता है, कोअी हाकीमकी । कोअी माँबाप को पुकारते है । अिस तरहसे रोगकी अवस्थाको काटते है । पर महान आत्माअे अुस समयभी उत्तम विचार करके उस रोगसे भी कुछ ना कुछ उपदेश शिक्षा प्राप्त करती है । अिसीलिअे कबीरजीने कहा है –

" सुखके अुपर शिल्ला पडो, राम न आवे याद ।
वलिहारी अुस दु खकी, पल पल आवे याद ।। "

चरित्रनायकजी का एक समय रात्री मे पेट दर्द देने लगा । अुन्हे विचार उत्पन्न हुवा कि, " कही मर न जाऊ । यदि मर जाऊँगा तो खाली हाथ जाना पडेगा, मैंने धर्म कमाअी कुछभी नही की । मेरे माताजी और पिताजी का ४० वर्ष की अवस्थामें ही स्वर्गवास हो गया था । कहीं मेरी भी मृत्यु ४० वर्ष मे हो जाय तो अब तो ५ हि वर्ष बाकी रहे है । इसलिये अब मुझे जल्दी सावधान हो जाना चाहिये ।" क्योंकि प्रभुने फर-माया है –

" समय गोयम मा पमायए " हे गौतम एक समयका भी प्रमाद मत करो । पाश्चात्य कवि Samual Johnson कहता है – " Catch them. O, catch the transient hour, improve each moment as it flies' Life's, a short summer, man a flower, he dies alas, How soon he dies ? हे मनुष्यप्राणियों ! नश्वर समय को पकडो । अैसा विचार करो कि प्रत्येक क्षण उड रहा है । जीवन छोटे से ग्रीष्म ऋतुके समान है । मनुष्य फूलके समान है । जैसे ग्रीष्म ऋतुमें फूल

शीघ्रहि नाश हो जाता है वैसेहि मनुष्य का जीवन क्षणिक है। हाय ! यह कितना जल्दी मर जाता है।

चरित्रनायकजीने सोचा पाँचही वर्ष बाकी रहे अब समय व्यर्थ नही खोना चाहिये; यदि मेरा पेटदर्द मिट जावे तो मैं शीघ्रहि मिथ्या प्रपंचको त्यागकर महावीर प्रभुका मार्ग अंगीकार करूंगा। मानो जैसे अनाथि मुनि का रोग दीक्षाका निश्चय करतेहि नाश हो गया था बस वैसे हि चरित्रनायकजीका पेटदर्द मिट गया। बस फिर क्या था दस हजार के मालसे भरी हुवी दुकान को छोडकर गुरुकी खोजमें निकल पडे।

बेलापूरमें कोटा संप्रदायके मुनि महातपस्वी श्री रोडमलजी महाराज के सुशिष्य श्री तपस्वी प्रेम भंडार मुनि श्री प्रेमराजजी महाराजका चातुर्मास था। रोडमलजी महाराजने उदयपूरमें महान कठिन अभिग्रह किया था। हाथी यदि लडड बहराये तो आहार करना। आखिर ४५ वे दिनकी तपश्चर्या के बाद हाथीने मध्य बाजारमें सूंडमें उठाकर लडड बहराय थे। ऐसे महान कठिन अभिग्रहधारी तपस्वीजीके शिष्य तपमग्नी श्री प्रेमराजजी महाराजकी ६६ दिनकी तपश्चर्या थी। इतनी लम्बी तपश्चर्या होते हुवे भी व्याख्यान खद आपही फरमाते थे। स्वाध्याय ध्यानमें हमेशा तल्लीन रहते थे। वाणी अत्यंत मधुर और ओज भरी थी श्रोता जन मंत्र मुग्ध से रह जाते थे। वाणीमें जादुसा प्रभाव था। तपो तेज भी अद्वितीय था। चरित्र नायकजी गुरुकी खोजमें निकले थे। सीधहि बेलापूर आये गुरुदेवका व्याख्यान श्रवण करने लगे। भावना अधिक दृढ होती जा रही थी। गुरुदेव फरमाते थे —

गगन नगर कल्प संगमो वल्लभानाम् ।
जलद पटल तुल्य यौवन वा धन वा ।
सुजन सुत शरीरादिनी विद्युच्चलानि ॥
क्षणिकमिव समस्त विद्धि संसार वृत्तम् ॥१॥

गंधर्व नगरके समान (बादलों के चिन्ह) स्नेही लोगोंकी संग क्षणिक है। पानीके भरे बादलोंके समान यह धन और यौवन अल्पका

स्थायी है। स्वजन, पुत्र, मित्र और बन्धुजन बिजलीके चमत्कार के समान क्षणस्थायी है। अर्थात यह संसार चलाचलीका मेला है। यहाँ कोओीभी स्थिर रहनेवाला नही है। अुस कषाय युक्त आत्माकी, ससार के उपभोगोसे कभी तृप्ति नही होती। अत अिसमे फँसना भोले प्राणीका काम है।

असुर सुर पतिना योन भोगेषु तृप्त.
कथमिह मनुजाना तस्य भोगेषु तृप्ति
जलनिधि जलपानाद् यो न जातो वितृष्ण
तृणशिखरगताम्भ पानत किं स तृप्येत् ॥ २ ॥

जो जीव देव तथा देवेन्द्रोके भोगोसे तृप्त नही हुआ वह मनुष्योके भोगोसे तृप्त कैसे हो सकता है? समुद्रका जल पीनेसे जिस जीवकी प्यास नही बुझी, अुसकी तृणपर रहे हुअे जलबिंदु से प्यास कैसे बुझ सकती है? जैसे अग्नि, काष्ट से तृप्त नही हो सकती, अैसे यह आत्मा भोगोसे तृप्त नही हो सकती। "त्यागे अुसे आगे" "जहाँ भोग वहाँ रोग" ऐसा वैराग्यमय उपदेश श्रवण करके चरित्र नायकजीका मन अधिक से अधिक दृढ बन गया। गुरुदेवके पास आकर दीक्षा के भाव प्रगट किये। गुरुदेवने कहा देवानुप्रिय दीक्षा कोओी बच्चोका प्रसाद नही है। प्रभु महावीर का मार्ग अत्यत कठिन है। खाडेकी धारपर चलना है। आत्मा को वशमे करनी पडती है।" अज्ञानियोकी कहावत है—

" मुड मुडाये तीन गुण मिटे, सरकी खाज
खानेको लड्डु मिले लोक कहे महाराज ॥१॥ "

यह भोले लोगोकी साधुपनेकी मजाक है। साधुपना वीरोंका मार्ग है। कर्मोसे युद्ध करना पडता है। शत्रु, मित्रपर समभाव रखना पडता है, इत्यादि कओी गुणोको धारण करना पडता है

" साधुपणा न पणा खरबुजेका। "

अिसमें है मजा, अुसमें न मजा कोयी वीरही पार लगाते है " ॥१॥
" कभी घी घना कभी मुठ्ठी चना और कभी वो भी मना " गुरु श्री तपस्वी प्रेमराजजी महाराजने अिस तरहसे अनेक प्रकारकी चारित्र्यकी

शीघ्रहि नाश हो जाता है वसेहि मनुष्य का जीवन क्षणिक है। हाय ! यह कितना जल्दी मर जाता है।

चरित्रनायकजीने सोचा पांचही वर्ष बाकी रहे अब समय व्यर्थ नही खोना चाहिअे; यदि मेरा पेटदर्द मिट जावे तो म शीघ्रहि प्रपंचको त्यागकर महावीर प्रभुका माग अंगीकार करूंगा। मानो जैसे अनाथि मुनि का रोग दीक्षाका निश्चय करतेहि नाश हो गया था वस वैसे हि चरित्रनायकजीका पेटदद मिट गया। बस फिर क्या था दस हजार के मालसे भरी हुअी दुकान को छोडकर गुरुकी खोजमें निकल पडे।

बेलापूरमें कोटा सप्रदायके मुनि महातपस्वी श्री रोडमलजी महाराज के सुशिष्य श्री तपस्वी प्रेम भडार मुनि श्री प्रमराजजी महाराजका चातुर्मास था। रोडमलजी महाराजने उदयपूरमें महान कठिन अभिग्रह किया था। हाथी यदि लडडु बहराये तो आहार करना। आखिर ४५ वे दिनकी तपश्चर्या के बाद हाथीने मध्य बाजारमें सूंडमें उठाकर लडड बहराय थ। एसे महान कठिन अभिग्रहधारी तपस्वीजीके शिष्य तपप्रमी श्री प्रमराजजी महाराजकी ६६ दिनकी तपश्चर्या थी। अितनी लम्बी तपश्चर्या होते हुअ भी व्याख्यान खुद आपही फरमाते थ। स्वाध्याय ध्यानमें हमेशा तल्लीन रहते थे। वाणी अत्यंत मधुर और ओज भरी थी श्रोता जन मन मुग्ध से रह जाते थे। वाणीमें जादुसा प्रभाव था। तपो तेज भी अद्वितीय था। चरित्र नायकजी गुरुकी खोजमें निकले थे। सीधहि बलापूर आमें गुरुदेवका व्याख्यान श्रवण करने लगे। भावना अधिक दृढ होती जा रही थी। गुरुदेव फरमाते थे –

गगन नगर कल्प सगमो वल्लभानाम ।
जलद पटल तुल्य यौवन वा धन वा ।
सुजन सुत शरीरादिनी विद्यु चलानि ॥
क्षणिकमिव समस्त विद्धि संसार वृत्तम ॥१॥

स्थायी है। स्वजन, पुत्र, मित्र और बन्धुजन बिजलीके चमत्कार के समान क्षणस्थायी है। अर्थात यह ससार चलाचलीका मेला है। यहाँ कोअीभी स्थिर रहनेवाला नही है। अुस कषाय युक्त आत्माकी, ससार के उपभोगोसे कभी तृप्ति नही होती। अत अिसमें फँसना भोले प्राणीका काम है।

असुर सुर पतिना योन भोगेषु तृप्त
कथमिह मनुजाना तस्य भोगेषु तृप्ति
जलनिधि जलपानाद् यो न जातो वितृष्ण
तृणशिखरगताम्भ पानत किं स तृप्येत् ॥ २ ॥

जो जीव देव तथा देवेन्द्रोके भोगोसे तृप्त नही हुआ वह मनुष्योके भोगोसे तृप्त कैसे हो सकता है? समुद्रका जल पीनेसे जिस जीवकी प्यास नही बुझी, अुसकी तृणपर रहे हुअे जलबिंदु से प्यास कैसे बुझ सकती है? जैसे अग्नि, काष्ट से तृप्त नही हो सकती, अैसे यह आत्मा भोगोसे तृप्त नही हो सकती। "त्यागे अुसे आगे" "जहाँ भोग वहाँ रोग" ऐसा वैराग्यमय उपदेश श्रवण करके चरित्र नायकजीका मन अधिक से अधिक दृढ बन गया। गुरुदेवके पास आकर दीक्षा के भाव प्रगट किये। गुरुदेवने कहा देवानुप्रिय दीक्षा कोअी बच्चोका प्रसाद नही है। प्रभु महावीर का मार्ग अत्यत कठिन है। खाडेकी धारपर चलना है। आत्मा को वशमे करनी पडती है।" अज्ञानियोकी कहावत है –

" मुड मुडाये तीन गुण मिटे, सरकी खाज
खानेको लड्डु मिले लोक कहे महाराज ॥१॥ "

यह भोले लोगोकी साधुपनेकी मजाक है। साधुपना वीरोका मार्ग है। कर्मोसे युद्ध करना पडता है। शत्रु, मित्रपर समभाव रखना पडता है, इत्यादि कअी गुणोको धारण करना पडता है

" साधुपणा न पणा खरबुजेका।"

अिसमें है मजा, अुसमें न मजा कोयी वीरही पार लगाते है" ॥१॥
" कभी घी घना कभी मुठ्ठी चना और कभी वो भी मना" गुरु श्री तपस्वी प्रेमराजजी महाराजने अिस तरहसे अनेक प्रकारकी चारित्र्यकी

कठीनाईयाँ बतलाई। वे चेलेके लोलुपी नही थे की खाने पिनेका लोभ बताकर झट चेला मुंड ले। न वैरागी हि असा था कठीनाईयोंको सुन डर जाये। वैरागीजीका वैराग स्मशानिया खिचडियाँ चटक तथा भ्रमक वैराग नही था। जो खिचडी खायी कि उतर जाय। स्मशानसे आयेकि वैराग उतर जाय। वैरागीजीका वैराग ज्ञानगर्भित था। वह इतनीसी कठीनाईयोको सुनकर कसे उतरे ?

वैरागीजी गुरु श्री तपस्वी प्रेमराजजी महाराजके पासमें रहकर ज्ञानाध्ययन करने लगे। साथ साथ विहार करने लगे। भोले प्राणी अनकी परीक्षा के लिये संयम साधनाकी कठीनाईयाँ बताते तो कोअी कहता क्या पड़ा है साधुपनमें ? क्या साधुपनसेहि मोक्ष मिलता है ? दृढ वैरागी अपने विचारोंसे टस से मस नही हुअ। अनको अैसा मुंह तोड जवाब देते जिससे सुननेवाले चुप हो जाते।

मैं दिवानी रामकी मोय दिवाना कहे लोग अिस कहावतके अनुसार दुनियाँ खुद संसारमे फँसी और दूसरोंको फसाना चाहती है। वैरागीजीका वैराग तो हाथीके दाँत थे। एक दफा बाहर निकलनेके बाद कैसे अन्दर जा सकते ?

न भवति पुनरुक्त भाषितम सज्जनानाम

सज्जन व्यक्तियोका वचन कभी नही बदल सकता है। वैरागीजीकी कअी तरहसे कसौटी की गअी। पर वे खरेही उतरे। ग्रामानुग्राम विचरते हुअे भव्य जीवोंका उद्धार करते हुअ परम पवित्र चरित्र चुडामनी श्री तपस्वी प्रेमराजजी म नगरसूल पधारे। वहाँपर तपस्वीजीका आगमन सुनकर आनंदकी लहर उठने लगी जनता उमड पडी। गुरुदेव बड समारोहके साथ ग्राममें पधारे। दृढ धर्मीप्रिय धर्मी सुश्रावक श्री खेमचंदजी बाफणा वैरागीजी को देखकर बहुतहि खुष हुअे। उनकी पत्नी श्री हमकुबाई भी धर्मश्रद्धामें अनसे कम नही थी। वह भी पतिसे अधिक धर्ममें प्रेम रखनेवाली श्रमणोपासिका थी। जब पतिके ये विचार अन्हे मालुम हुअ तो अन्होने पतिको और भी प्रेरणा दी।

और कहा जिसको आप जवाई बनाना चाहते थे, अुसे अब अपना पुत्र बनाकर दीक्षा का महान निर्जरा तथा तीर्थंकर गोत्र वाधनेका लाभ लीजिये। अैसे अवसरको, हाथसे मत जाने दीजिये।

वैरागीजी तो अुनके पहिलेसेहि परखे परखाए थे। अुन्हे परीक्षा करनेकी जरूर ही नही रही। अब शीघ्रही मुहुर्त दिखलाकर दीक्षाकी तैय्यारी की। दीक्षाके निमित्तसे उत्सव होने लगा, वैरागीजी तो उत्सवसे नि स्पृह थे, परतु सेठजी के दिलमे पहलेसेहि जो लग्न की उमग थी अुस उमग को अब धार्मिक रूप मिलनेसे सेटजी की उमग दूनी बढ गअी। सेठजी खूब उत्सव करके शुभ मुहुर्त के अनुसार वि स १९७० मीगसर सुद ९ मी के दिन महान दीक्षा निष्क्रमण कर, गुरु श्री तपस्वी प्रेम-राजजी महाराजके पासमे ले गये ओर कहा,--

"सिस्स भिक्ख दलयामो,"

अर्थात शिष्यरूपी भिक्षा देता हुँ। सो आप ग्रहण कीजिये। गुरुदेव श्री तपस्वी प्रेमराजजी महाराज दीक्षाका महत्व बताते हुअे फर्माने लगे --

विश्वानदकरी भवाम्बुधि तरी सर्वापदा कर्तरी
मोक्षाध्वैक विलंघनाय विमला विद्या परा खेचरी
दृष्ट्या भावित कल्मषाय नयने बध्दा प्रतिज्ञा दृढा।
रम्यार्हंच्चरिता तनोतु भविना दीक्षा मनो वाछितम् ॥१॥

अर्थ -- विश्वमें आनद फैलानेवाली, ससार-समुद्रसे पार अुतारने-वाली मोक्षके मार्गको पार करनेके लिये निर्मल आकाशगामिनी विद्याके समान तथा दृष्टीमात्रसे पाप नाश करनेकी दृढ प्रतिज्ञावाली दीक्षा है। अैसी जो सुदर भगवती प्रव्रज्या वह भव्य जनोके लिये मनोवाछित फलको देवे। दीक्षा कर्मरूपी सापको कीलनेके लिये महामत्र है। वैराग्य की रसकुप्पी है। ऐसी दीक्षा कोई भाव प्राणी हि लेता है। कहा भी है--

"कश्चिन्न् जन्म प्रासादे धर्मस्थपति निर्मिते।
सद्गुण विशद दीक्षा ध्वज धन्योऽधिरोपयेत् ॥१॥

धमसे प्राप्त मनुष्य जन्मरूपी महलपर कोई एक सद्गुणोंसे युक्त दीक्षारूपी ध्वजा लगाता है। दीक्षाके गुणोंका वर्णन करता हुवा एक कवि कहता है —

' न च राज्य भयं न च चोर भयं इहलोक-सुखं परलोक हितम् ।
नरकीर्तिकरं नर देव नतं श्रमणत्वमिदं रमणीयतरम् ॥१॥

अर्थात दीक्षामें राजाका भय नही है। न चोर का भय है। जिस लोक में सुख देनेवाली परलोकमें हित करनेवाली कीर्ति फैलानेवाली राजा महाराजाओंकी वन्दनीय है। यह श्रमणत्व महान सुंदर है। इत्यादिक दीक्षाकी महिमाका वर्णन करके गुरुदेवने वैरागी जीवको दीक्षाका पाठ सुनाया। करेमी भंते का पाठ सुनते समय वैरागीजी को अद्वितीय आनंद हो रहा था। मानो तीन लोककी संपत्ति हाथमें आ रही है। साधुका वेष धारण करनेपर धमनायक को अलौकिक वीरताका अनभव होने लगा।

ठाणांग सूत्र के चौथ ठाणेमें चार प्रकारकी दीक्षाका वर्णन चलता है। एक व्यक्ति सिंहके सदृश्य लेते है। और शियालके समान कायर बनकर पार लगाते है। एक व्यक्ति शियाल के समान लेते है। और सिंहके समान वीरतासे पालन करते है। एक व्यक्ति शियाल के समान कायरतासे लेते है। कायरतासे पार लगाते है। एक व्यक्ति सिंहके समान वीरतासे लेते है। और वीरतासे ही अंततक पालते है।

चरित्र-नायकजीने उत्साहके साथ दीक्षा ग्रहण की। और दीक्षा लेनेके बाद उत्साह दिन प्रति दिन बढ़ने लगा। गुरुवर श्री प्रेमराजजी महाराज ऐसे संयमी उत्साही शिष्य को प्राप्त करके मनही मन फूले न समाते थे। नीतिमें कहा है — पुत्रकी शिष्यकी और पत्निकी सन्मुख प्रशंसा नही करना चाहिये। अतः प्रत्यक्षमें कुछ न बोलते पर हृदय में (अपना) जीवन सफल समझते थे।

नवदीक्षित मुनिजीने दीक्षा लेतेही स्वेन्द्रियोंको वशमें कर लिया हरीभद्र सुरीने भिक्षुकी परिभाषा करते हुये कहा है क्षुधा भिनत्तीति

भिक्षु " अर्थात् सच्चा भिक्षु वही है जो क्षुधापर तावा कर ले। कभी इस रसनाके वशमें पडकर सयम के लक्ष्यको भूल जाते है। और इन्द्रियोमें एक एक गुण है किन्तु रसनेन्द्रियमें दो गुण है – बोलनेका और खानेका।

रे जिव्हा ! कुरु मर्यादा भोजने वचने तथा
वचने प्राण-सदेहो भोजने त्वप्यऽजीर्णता ॥१॥

कवि अपने जिव्हासे कहता है – हे जिव्हा ! तू दो बातोकी मर्यादा कर ले। भोजन करनेमे तथा बोलनेमें। क्योकि विना विचारे बोलनेसे प्राणोका सदेह हो जाता है। तथा अधिक भोजन करनेसे अजीर्ण रोग उत्पन्न हो जाता है। तथा प्रमाद, आलस्य, निद्रा, आदि घेर लेते है और ज्ञान, ध्यानमे अतराय आ जाती है। किसीकी जिव्हा बोलनेमें वश होती है खानेमें नही, और किसी की खानेमे होती है तो बोलनेमें नही। दोनो विषयोमें जिव्हा को वशमें करनेवाले महापुरुष क्वचित् ही होते है।

" दीपक झोको पवनको नरको झोको नार।
साधु झोको जीभको डुवे काली धार " ॥

साधुको अनेक प्रकारका भोजन मिलता है। रसनेन्द्रिय भी नित नये भोजन चाहती है। यदि इसे वशमें नही किया जाय तो वह साधुसे स्वादु बन जाता है। और अुसका पतन हो जाता है। उत्तराध्ययनके बहुश्रुत नामक अध्ययनमे प्रभुने फरमाया है –

" अह अट्ठहि ठाणेही सिक्खा सिलीति वुच्चई "

अर्थात आठ स्थानोमे ज्ञान प्राप्त कर सकता है। अुसमें बतलाया है " न सिया अइ लोलए " जो खानेमे अति लोलुपी नही हो, अुसे ही ज्ञान प्राप्त होता है। रसनेन्द्रियको वशमे करनेमे सब इन्द्रियाँ अपने आप वशमें हो जाती है।

" स्वादु भोजन चाहे नित, दुस्वादु पर छीः छीः करे
जीभपर कब्जा नही, साधु हुआ तो क्या हुआ "

नव दीक्षित मुनिजीने एक समय भोजन करना तो प्रारंभ कियाही था। साथमें सभी वस्तु एकही पात्रमें ग्रहण करना और सब सामिल मिलाकर भोगना। खट्टा मिठा खारा तीखा आदि अलग २ रसप्रिय रसनेन्द्रियके विषयको जीत लिया। कहा है इन्द्रिय वशके बिना प्रव्रज्या कोभी कामकी नही है।

'कषाया यस्य नो च्छिन्न यस्यनात्मा वश मन ।
इन्द्रियाणि न गुप्तानि प्रव्रज्या तस्य निष्फला ॥१॥

जिसके कषायोंका उच्छद नही हुआ हो जिसके आत्मा व मन वशमें नही हो जिसकी इन्द्रिया वशमें न हो उसकी प्रव्रज्या निष्फल बतलाई है। यदि हम इसी सूत्रको साधुओंपर कसके देखें तो ९९ प्रतिशत निष्फल प्रव्रज्यावाले मिलेंगे। इन्द्रियोंको वशमें किये बिना ज्ञान भी प्राप्त नही हो सकता और ज्ञानके बिना तप-सयम और क्रिया अधी बतलाई है। इसलिये दश वकालीक सूत्रके चतुर्थ अध्ययनमें श्रमण भगवत महावीर स्वामिने फरमाया है—

पढम नाणं तओ दया एवं चिट्ठई सव्व सजए अन्नाणी कि काही किवा नाही य सेय पावग ॥ १ ॥ सब प्रथम नानको स्थान मिला है। अत पहले ज्ञान प्राप्त करना चाहिए फिर दयाका पालन हो सकता है। इसी तरहसे सब सयती लोग (साधू) सजममें स्थिर रह सकते है। अज्ञानी क्या कर सकता है ? क्या श्रेयकारी है और क्या पापकारी है ? यह वह नही जान सकता। प्रभने उत्तराध्ययनके २८ वे अध्ययनमें फरमाया है नाणनविना नहुति चरण गुणा ज्ञानके बिना चारित्र्य नहीं हो सकता।

हमारे नव प्रव्रजित मुनिजी ज्ञानामृत भोजनम् अर्थात ज्ञान-रूपी भोजनके लिये एगभत्तच भोयण अर्थात एक वक्तही भोजन करने लगे। शास्त्राध्ययनमें तल्लीन रहने लगे नाणं सव्व पयासगं। ज्ञान सबका प्रकाश करनेवाला है। ज्यों ज्यों ज्ञान होने लगा त्यों त्यों संयममें दृढ होने लगे।

ज्ञान और क्रिया –

ज्ञान और क्रिया ये दो पख है। इन दोनोमे आत्मा ऊँची उठ सकती है। जैसे एक पखसे पक्षी नही उड सकता, ऐसेही सिर्फ ज्ञान तथा केवल क्रिया से मोक्ष प्राप्त नही हो सकता। कोई व्यक्ति नौकामें बैठ जाय और पानी काटनेकी क्रिया नही करे तो क्या वह समुद्रपार हो सकता है? ऐसेही सयमरूपी नौकामें बैठ जाय और क्रिया न करे तो क्या ससार-समुद्रसे पार हो सकता? इसीलिये पूज्यपाद उमास्वामि महाराजने तत्त्वार्थाधिगम सूत्रमें फरमाया है –

ज्ञान क्रियाभ्या मोक्ष.

ज्ञान और क्रियासेही मोक्ष प्राप्ति होती है। केवल ज्ञानभी निर्वाण नही दे सकता। जैसे किसीको लड्डुका ज्ञान है परतु मूँहमे डाला नही, तो क्या पेट भर सकता? इसी तरह ज्ञान मार्ग बतलाता है, क्रिया निश्चित स्थानपर पहुँचाती है। जैसे, धन और ऋण दोनों तारो के मिलनेसे बिजलीका प्रकाश निकलता है ऐसेही ज्ञान और क्रिया से आत्म-ज्योति फैलती है। जैसे एक चक्कसे रथ नही चल सकता। ऐसेही ज्ञान और क्रिया दोनो ही परमावश्यक है। क्रिया अधी है तो ज्ञान लगडा है। जब दोनोका सामजस्य होता है तभी दोनो सार्थक बन जाते है। हमारे कथानायकजी ज्ञान के साथ साथ क्रियामे दृढ बनते जारहे थे। क्रियाके लिये बहुत सावधान रहते थे। भगवान महावीर स्वामीने 'उत्तराध्यायनके' २८ वे अध्ययन में फरमाया है –

नाणेन जाणइ भावे, दसणेण यसद्दहे।
चरित्तेण निगिण्हइ तवेण परि सुज्झई॥

ज्ञानसे भावको जानता है, दर्शनसे श्रद्धा करता है, चारित्र से कर्मोंको रोकता है, और तपसे आत्मा की शुद्धि होती है।

"एय चयरित्तकर त चरित्त आहिय"

कर्मोंको क्षय करे उसे चारित्र कहते है।

प्रकरण ८ वाँ

तप

कर्म-शत्रुओंका नाश करनेके लिये तप एक अमोघ शस्त्र है। तप कर्मकचरेको जलाकर भस्म कर डालता है। तप सब रोगोका क्षय कर देता है। तपसे अनेक लब्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं।

कांतार न यथेतरो ज्वलयितु दक्षोदवाग्निं विना
दावाग्निं न यथतरो शमयितु शक्तो विनाम्भो धरम
निष्णात पवन विना निरसितु नान्योयथाऽम्भोधरम्
कर्मौघतपसा विना किमपर हतु समर्थो तथा ॥ १ ॥

कवि कहता है जगलको जलानमें दावाग्निके सिवाय कोई समर्थ नहीं है। मेघको छिन्न भिन्न करके उडानके लिये जोरदार वायुके सिवाय कोई समर्थ नही है। एसेहि कर्मसमूहको तपके बिना कोई नाश नही कर सकता। जनागमानुसार तप बारह प्रकारका है। छह प्रकारका आभ्यन्तर और छह प्रकारका बाह्य तप। हमारे कथानायकजी कषायोंपर विजय मिलानके लिये और कर्म निर्जरा के लिये आभ्यन्तर तथा बाह्य तप करने लगे। तपश्चर्या करती हुयी आत्मा कर्मोंकी कोडी खपाती है। उत्कृष्ट रसायन आवे तो तीर्थकर गोत्र बाधती है। नरसे नारायण बनानेवाली एक तपश्चर्याहि है। कामदेवपर विजय प्राप्त करनेवाला असभव कार्यको सिद्ध करने वाला इन्द्र का आसन चलायमान करनेवाला तीनो लोकमें यश फैलानेवाला एक तपहि है।

मुनिश्रीजीने दशवर्ष तक एकासणा तप किया। अब विशेष आत्म-शुद्धिके लिये एकान्तर तपका आरभ कर दिया। जसे भगवान महावीर स्वामीने साढेबारह वर्षतक तपश्चर्या कर केवल ज्ञान प्राप्त किया और बादमें उपदेश देना शुरू किया वही आदर्श हमारे मुनीश्रीने रखा।

आपका निश्चय था कि ' सुधरके सुधारना ' । जवतक आत्मशुद्धि न हो तवतक परोपदेश नहीं देना है । लेकीन आज ससारमें प्राय. यह देखते है कि थोडासा इधर उधरका पढ लिया कि उपदेष्टा वन जाता है ! परतु —

' Half knowledge is a dangerous thing '

आधा ज्ञान धोकेकी चीज है । " निमहकीम खतरेमें जान " ऐसा उपदेष्टा स्वकाहि अनहित करता है और दुसरोकाभी । इसीसे प्रवचनकारका महत्व घट जाता है । शास्त्रमें फरमाया है – ' आचाराग ' ' ठाणाग ' ' सूयगडाग ' आदि सूत्रोके अध्ययनके विना प्रवचनका अधिकारी नही हो सकता । वक्ता जितना अधिक त्यागी होगा, अुसका श्रोताओपर अुतनाहि अधिक असर पडेगा । हमारे चरित्रनायकजी तपस्वी तो थे हि, क्रियामें दृढ, नियम-व्रतोमे दिन-प्रतिदिन वृद्धि कर रहे थे । प्रमादसे तो कोसो दूर रहते थे । दिन मे कभी आडा आसन (सोना) नहीं करते थे । घो चि पु लि यह पुराना सूत्र है । अर्थात पहले घोको, फिर चितन करो । चितन करते समय यदि शका हो तो पूछो, वादमें उसे लिखो । इसी सूत्रानुसार कथानायकजी मुनिजीने पहिले अध्ययन किया । वादमें ४५ आगमोको अपने हाथसे लिखा । आगम शुद्ध, सुदर अक्षरोमें लिखे हुये है । जिसे देखतेहि वनता है ।

हमारे चरित्रनायक मुनिजीका सस्कृत, प्राकृत, मराठी, गुजराथी और राजस्थानी भाषाओपर पूरा अधिकार था । कन्नड भी अच्छी तरहसे जानते थे । मुनिश्री ४५ आगमके पूर्ण वेत्ता थे । अकालका समय टालकर आदिसे अततक स्वाध्याय करते रहते थे । अकालमें ध्यान जपादि करके समयको सफल करते थे । एक क्षण भी वे व्यर्थ नही जाने देते थे । गृहस्थोकी वातोंसे सेंकडो कोस दूर रहते थे । वे रात्रीमें भी वहुत कम सोते थे । निद्रापर भी पूर्ण तावा कर रखा था ।

प्र क र ण ९ वाँ

उपदेश

जो खुदहि नही समझ वह औरों को क्या समझाअगा। जो खुदहि सोया पडा हुआ सोएको क्या जगाएगा।' जो व्यक्ति खुदहि अनभिज्ञ है वह दुसरोका कसे उद्धार कर सकता है? जो खुदहि सोया हुआ है वह दूसरोंको कसे जगा सकता है? मुनिश्रीन उपदेश देना प्रारम्भ किया। उपदेश म जादुसा प्रभाव था। साधना करनके बाद वाणी निकली थी। स्पष्ट वक्ता थे। आचाराग सूत्रमें प्रभुन फरमाया है जहाँ तुच्छस्स कथ्थई तहा पुण्णस्स जहाँ पुण्णस्स कथ्थई वहाँ तुच्छस्स जैसा उपदेश राजा महाराजाओ को देते थे वसाहि रक-भिकारीको देते थ। जसा रक भिकारीको देते थे वैसाहि राजा महाराजा को। एसे मुनिश्री भी सबको एक समान उपदेश देते। उपदेश शास्त्रीय तत्वोंस लबालब भरा रहता है। चौपाई दृष्टात गायन आदि नाममात्र कोहि होते थे। वे फरमाते थे चौपाईन श्रोताओको चौपट कर दिया अर्थात चौपाई सुननकी चटक लग जानके कारणसे श्रावक ज्ञानहीन बनते जा रहे है।" गायनके लिए फरमाते थे नाटकीय लोगोंका काम है। गायन गाकर लोगोका मनोरजन करना दृष्टात कहना थान बालकोंका मन बहलाना है। यदि दृष्टात देना भी है तो शास्त्रके सिवाय इधर उधरके नही देना चाहिये जिससे शास्त्रज्ञान हो। बीसवी सदी के साधु प्राय करके राग रागनियोंमें पड है। वे कुछ कडी इधरसे कुछ कडी उधरसे लेकर जोड लिया नाम अपना रख लिया और कवि बन गये। हमारे तपस्वीजी जोड क लिये फरमाते थ कि जोड माया फोड। अर्थात व्यय सिर पच्चीमें पडना। स्वाध्याय ध्यानको छोडकर कवि बननेके मोहमे समय बरबाद करना। कवि असे कहते है हृदयमें अपन आप भावोंका स्फुरण होना। खचतान करना कोई कविका लक्षण नही है। गीतकी परिभाषा करता हुआ एक कवि कहता है —

गीत हो जी का हो कभी न वह फीका हो ।

'गीत याने दिलकी पुकार'। चरित्रनायकजीका प्रवचन सैध्दांतिक होता था। वे श्रोताओके मनोरजनकी अपेक्षा मनोमजनका अर्थात मन साफ करनेका ध्यान अधिक रखते थे। अुनकी वाणी ओजभरी थी। जब वे सिंहके समान गर्जना करते तो श्रोताजन काँप उठते थे। अुनके वचनको कोई टाल नही सकता था। वे खरीखुरी सुनानेको जराभी आगा पीछा नही देखते थे। अुनकी वाणीमें स्वाभाविकहि विनोद भरा हुआ था। गर्जते गर्जते अैसा विनोद करते थे कि हँसते हँसते श्रोताओके पेटमें वल पड जाते थे। जैसे निगठ्ठ महावीरस्वामिने सद्धर्म-प्रचारार्थ कर्मकी निर्जरा करनेके लिये अनार्य लाट देशमें विहार किया था। ऐसाहि मुनिश्रीने कर्नाटकमें विहार किया। यह प्रदेश अैसा था कि साधु क्या है, यह भी मालुम नही था। वहाँपर आहारपानी मिलना तो दूरहि रहा। पर सिधा वोलनेकोभी कोई तैयार नही था। देखिये, अुग्रविहारी तपस्वीजीका विहार सुनतेहि आपको आश्चर्य होगा। अुपवासके दिन ५० मैलका विहार करते थे। दुसरे दिन ४० मैलका। इसतरह ९० मैलपर पारना करते थे। एकातर व्रतमेंतो कभीभी अतर नही डालते थे। ऐसा विहार सुनकर कायर तो कापने लगते है।

कर्नाटक-गज-केसरी पदसे विभूषित –

कर्नाटकमे ऐसा धर्मप्रचार किया कि दृढ धर्मी, प्रिय धर्मी, व्रतधारी, ज्ञानी, ध्यानी, कअी श्रावक वनाये। अन्य कअी लोगोको मास मदिराका त्याग दिलाकर दानवसे मानव वनाया। जिससे जनता "कर्नाटक-गज-केसरी" के नामसे पुकारने लगी। कर्नाटक केसरीजी विचरते विचरते महाराष्ट्र देशमें पधारे, जिसमे "वनगर जवळा" नामका एक छोटासा ग्राम है, धर्मकी लगन अच्छी है। अुनके वहापर पधारतेहि, जनतामे आनद की लहर दौड पडी। महाराष्ट्रीय भाषामें वहुत सुदर व्याख्यान फरमाते थे। नामदेवजीके, तुकाराम महाराजके अभग वहुत सुदर ढगसे वोलकर अर्थ समझाते थे। जैन और-जैनेतर जनता व्याख्यानका लाभ लेने लगी। वहाँपर श्री खेमचदजी सचेतीको वैराग्य उत्पन्न हुवा। और अुन्होने अपनी भावना मुनिश्रीजीके सन्मुख प्रदर्शित की। केसरीजीने

फरमाया ' पहले कुछ साधना और अभ्यास कीजिए व तदनतर दीक्षा लिजीये । खेमचदजी वरागीने गुरुआज्ञानुसार कुछ महिनतक साथमें रहकर साधना की ।

प्रकरण १० वा
शिष्य प्राप्ति

तत्पश्चात तपप्रेमी तपस्वी श्री प्रेमराजजी म सा तथा घोर तपस्वी वैयावच्ची श्री देविलालजी म सा और कर्नाटक गजकेसरीजी इस तरह तीन महान विभूतियाँ ग्रामोग्राम विचरण करती हुयी भव्य जनोंका उद्धार करती हुयी चिचवड शहरमे पधारी । चिचवड शहर मानो स्वर्गकी प्रतिस्पर्धा कर रहा था । तीनो महात्माओने ज्ञान दर्शन तथा चारित्र मानो साक्षात रूप लेकर अवतरित हुआ हो । साथमे तीन वैरागीभी थे । जिसमेंसे एकका नाम और स्थान हम उपर दे चुके है । पिता-पुत्र दो वैरागी और थे । पिताका नाम प्रेमराजजी पुत्रका नाम जीवराजजी था । ये फूलगावे के निवासी थे । आपका जन्म ऊँचे घरानेमें हुआ था । चिचवड शहरमें तीन दीक्षाकी धूमधाम होने लगी । जनता आनंद विभोर हो उठी । इधर तो तीनों तपकी साक्षात मूर्तियाँ थी । उधर तीनो वैरागी वैराग्य रंग में पूर्ण रंगे हुये थे । तीनो दीक्षा एक साथमें होनेकी शुभ वार्ता चारों ओर बिजलीकी तरह फैल गयी । हजारों जनता दीक्षा निष्क्रमण देखनेके लिये आने लगी । श्री संघ उत्सवपर उत्सव मनाने लगी । तीनो वैरागी रथपर बैठे हुए अहिंसा तप संयमकी मूर्तियाँ प्रतित होती थी ।

वि स १९८४ पौष वदी १ के दिन तीनों वैरागी संसारी वस्त्राभूषण उतारकर साधु वेष धारण करके गुरुके सन्मुख खडे हुये । ऐसा प्रतित होता था कि मव विरती चारित्रमेंहि साकार होकर आया है । तीनों वैरागी मुनिवेष पहनकर हाथ जोडकर चारित्र चिंतामणी लेनके लिये गुरुके सन्मुख खड़े हो गए । गुरु श्री तपस्वी प्रेमराजजी महा सा ने दीक्षा मंत्र

" करेमि भते सावज्ज जोगं " का पाठ सुनाया । तीनो ससारिक द्रव्यको छोडकर पचमहाव्रतरूपी पचरत्नोको ग्रहण कर ऐसे खुश हुये मानो रक को राज मिला हो ।

नवदीक्षित, मुनिश्री वालब्रम्हचारी जीवराजजी म. सा, और अुनके पिता श्री प्रेमराजजी मुनि, तपस्वी श्री देवीलालजी म सा के नेश्रायमें शिष्य वने । खेमचदजी मुनि, श्री कर्नाटक गजकेसरीजीके शिष्य वने । चिचवडमें जो दीक्षा महोत्सव हुवा वह अद्वितीय था । मुनिश्री चरित्र-नायकजीके द्वितीय शिष्य श्री अगरचदजी म सा थे । वे सिकदरावादके रहनेवाले थे । कथानायक मुनिश्री विचरते-विचरते वहापर पधारे । अुपदेश श्रवणकर अुन्हे वैराग्य उत्पन्न हुवा । दीक्षा वहुतहि घूमधामसे हुयी । नवदीक्षित मुनिश्री स्वभावसेहि विनीत, नम्र और कोमल थे । तपश्चर्या तथा ज्ञानका ध्यान खूव मन लगाकर करते थे । गुरु आज्ञाको तथा वचनको कभीभि अुल्लघन नही करते थे । गुरुजीके सेवामें तत्पर रहते थे । गुरुदेवको अपना सर्वस्व मानते थे । प्रकृतिके सरल और भद्र थे ।

कर्नाटक गजकेसरी मुनिश्री शिष्य परिवार सहित ' वेंगलोर ' पधारे । तृतीय शिष्य –वहाँके श्री सघ ने वडेहि उत्साहके साथ स्वागत करके गावमे ले आये । चरित्रनायकजी रोजाना धर्मोपदेश फरमाते थे । धर्मोपदेश अत्यत आकर्षक था । जैन-अजैन धर्मसभामें अुपस्थित रहकर उपदेश का लाभ लेते थे । कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचद्राचार्य कहते है " वक्ता परोपकार वुद्धिसे उपदेश देता है । अुसे महान कर्मोकी निर्जरा होती है । " भगवान महावीर स्वामिने भी ज्ञाता सूत्रमे फरमाया है " धर्मकी प्रभावना फैलाता हुवा जीव कर्मोकी कोडी खपावे, उत्कृष्ट-रसायन आवे तो तीर्थंकर गोत्र वावे " । कथानायकजी व्याख्यान द्वारा धर्मकी महान प्रभावना फैला रहे थे । श्रोताजनोका दिन प्रतिदिन उत्साह वढता जाता था ।

वहाँपर श्री मिश्रीलालजी छाजेड नामके एक युवक को वैराग्य उत्पन्न हुआ । वह युवक धनवान का पुत्र था ।

लागी लागी सब कहे लागी नही लिगार
लागी तबहि जानीये छोड चले घरबार

व्याख्यानकी प्रशंसा करनवाले बहुत मिलेग। परंतु हृदयमें उतारने वाले सकडोमें एखादा मुश्किलसे मिलता है। नन्दी सूत्रमें श्रोताका वर्णन करते हुये प्रभु फरमाते है अक घडा तलेसे फुटा हुआ और एक पेटमेंसे फुटा हुआ एक गलेमसे फुटा हुआ और एक विना फुटा हुवा। अिनमसे तलेमेंसे फुटे हुय घडेके सदृश्य जो श्रोता होते है उन्हें उपदेश देना व्यर्थ है। उपर भरे निचे झरे वांका सद्गुरू काई करे। पेटमेंसे फुट हुय घड के समान जो श्रोता होते है वे आधा याद रखते है, आधा भूल जाते है। गलेमें फुटे हुये घडके समान जो श्रोता होते है वे थोडा भूलते है और जादा याद रखते है। पूर्ण घटके सदृश्य तो कोई एक महान पुरुषहि होते है। चरित्रनायकजीका उपदेश तो बहुतसे लोग सुनते थ। लेकीन मिश्रीलालजी छाजडपर पूर्ण असर कर गया था। वह अपन मातासे आज्ञा लेकर दीक्षा लेनके लिय कटिबद्ध हो गया। तब संघपति मुख्यावक श्री छगनलालजी मुथान बहुत धूमधामसे दीक्षा दिलाई। दीक्षा लेकर उन्होंने खब दिल लगाकर ज्ञानाभ्यास किया। ये भी घोर तपस्वी उग्र विहारी तथा कठिन क्रियाको पालते है। आता पना लते है। अनके तीन शिष्य है। वर्तमानमें विचर रहे हैं नियम व्रतोंमें बहुत दृढ है। चतुर्थ शिष्य– चरित्रनायक मुनिश्रीजीने कर्नाटकको तीन दफा स्पर्शा था। कर्नाटकमें विचरते समय आप राजेन्द्रगढ पधारे थे। धर्म प्रचारके लिये ये प्राणोंके प्रणसे तत्पर रहते थे। परोपकाराय सतां विभूतय: सज्जन लोगोंकी विभूति परोपकार के लिये होती है कहा भी है —

गरल गुरु भोगकी तजकर जगत कल्याणको निकल।
मनोहर महल अनके फिर भय तो शून्य मनहि है
जगत को तारनेवाले जगत में संतजनहि है।

जगदोद्धारक चरित्रनायकजी अमृतमय जिनवाणी बरसाने लगे। जिनवाणी के पिपासु भव्य जन आकर अपनी प्यास बुझाने लगे।

वाणी श्रवण करके श्रोताजनोके मनमयूर नाचने लगे। वहाँपर " श्री राजमलजी रजपुत " रहते थे। वे भी व्याख्यानमें आने लगे। वाणीकी वर्षासे अुनके हृदयक्षेत्रमे वैराग्य अकुर उत्पन्न हुवा। अुनके दो पुत्र, पत्नी आदि परिवार था। अत वे दिलमें सोचते " समारमें दिल लगता नही। यह वधन मुझे छोडना नही चाहते है। क्या करना चाहिये ?" वैराग्य-अकुर वलवान बना तो छत्ति ऋद्धिको छोडकर गुरुचरणोमें अुपस्थित हो गये थे। पत्नी एव स्वजनोकी पद्रह सालके पश्चात आज्ञा प्राप्त करके " जामठी " क्षेत्रमे दीक्षा ग्रहण की।

" अच्छदाजेन भुजति नसेचाईत्ति वुच्चई ॥
साहिणे चयई भोएसे हु चाईत्तिवुच्चई ॥१॥ "

अर्थात परवशतासे जो भोग नही भोगता है, वह त्यागी नही कहलाता। परंतु जो भोग स्वाधीन होनेपर भी त्याग देता है वही सच्चा त्यागी कहलाता है। हमारे चरित्रनायक मुनिश्रीने वैरागीजी को पहले वहुत दिनोतक सयम-साधना तथा ज्ञानाध्ययन कराया। वादमें विचरते विचरते मलकापुर (वोदवड) पधारे। वहाँपर वोदवडके पास जामठी नामक एक छोटासा क्षेत्र है। वहाँके नथमलजी राकाने दीक्षा निष्क्रमण (दीक्षा महोत्सव) करके दीक्षा दिलवाई।

नवदीक्षित मुनि वडे त्यागी, तपस्वी निकले। आतपना लेते थे। विनीत और नम्र थे। अिस तरहसे कथानायकने कइ व्यक्तियोका उद्धार किया।

सरवर तरवर सतजन चवथा वरसे मेह।
परोपकारके कारणे चारो धारी देह।

सरोवर, वृक्ष, साधुजन तथा वर्षा ये चारो परोपकार करनेके लिये धरती तलपर अवतरीत हुये है। मक्खन तो जव स्वय को ताप लगता है, तव पिघलता है। पर सत जन तो दुसरोके तापसेहि पिघला जाते है। धर्मनायकजी मुनि श्री धर्मकी साक्षात मूर्ति थे। जहाँ जाते वहाँ धर्मका महान उद्योग करते थे। अुनका ध्यान विशेप करके अनभिज्ञ लोगोको सुधारनेकी ओर जादा था।

प्रकरण ११ वाँ

जप ज्योतिका प्रारंभ

जालनामें पधारे तो गावमें चारो ओर प्लेग फैल रहा था। सारे शहरमें त्राहि त्राहि मच रही थी। जनता महलोंको छोडकर झोपडीयोंमें अपने लोगोंके समान जीवन बीता रही थी। चारो ओर प्लेग अपना साम्राज्य फला रहा था। किसीका पुत्र किसीकी माता, किसीका पिता तो किसीकी पुत्रीको ॐस्वाहा करता था। प्लेगकी बिमारी मानो अट्टाहास कर रही थी। जनता पराजित हो गयी थी। प्रति वर्ष प्लेगराज आकर शहरमे अपना अड्डा जमाते थे। अस्थि ग्राममे जसे प्रभुवीर पधारते थे। वहापर भक्षन महामारीका बवंडर फला रक्खा था। प्रभुके पधारतेहि सब शांत हो गया। और यक्षभी प्रभुका भक्त बन गया। एसेही कथानायक मनिश्रीजीके पधारतेही शांतीका वातावरण फलने लगा। प्लेगको हराने वाले महान यतिके चरण पडतेही प्लेग मानो कोसो दूर दुम दबाकर भागने लगा।

उद्यमे नास्ति दारिद्र्य नास्ति जागरतो भयम् ।
मौनेन कलहो नास्ति जपतो नास्ति पातकम् ॥

उद्यमसे दरिद्रताका नाश होता है। मौनसे कलहका जगनेसे चोरका और जपसे पापका नाश होता है। कर्नाटक गजकेसरी मुनिश्रीने पापनाशक जपको शुरू किया। जनतासे कहाकि ' शांतिनाथ भगवानका सप्ताह शुरू कीजिए । शांतीनाथ भगवान सब रोगमारी बिमारीके नाशक है। शांति सप्ताहका सूत्रपात करनेवाले हमारे चरित्रनायकश्रीही है। जप और तप प्रारंभ किया। शहरमें रोज एक अयंबिल अखंड होना चाहिए। जप तपके प्रभावसे प्लेग नस्तनाबूत हो गया। धर्मराजके सामने कौन नही झुकता? रोगकी ताकतही क्या जो ठहर सके! इस चमत्कार को देखकर ग्रामो-ग्राम जपका प्रचार हो गया। स्थान–स्थानपर सप्ताहके प्रभावसे शांती फैली। यहांतक लोग अखंड खडे रहकर एकेक महिनका जप करने लगे। जहां पधारते वहां जप करनीका मंगल वाद्य बजता था। तपकी मंग

वहती थी। तपस्वीजीके चरण पडतेही तप साक्षात रूप धारण करके हाजीर हो जाता था। जप-तपके प्रभावसे कओयोके विघ्नोका, आपत्तियोका, दु खोका नाश हुवा।

'यद्दूर यद्दूराराध्यम् तपसा सर्व सिद्धयते'

जो दूर है मुश्किलसे आराधना करने योग्य है, वे सव तपसे सिद्ध हो जाते है। जपसे शब्द ध्वनि वायुमडलमे फैलकर दूषित वायुको नाश कर देती है।

प्रकरण १२ वाँ

चरित्र चूडामणिके चमत्कार

१) सापके साथ रहना.

सापसे सव लोग ऐसे डरते है जैसे यमदेवसे। अज्ञानी लोग उसे देखतेहि मार देते है। पर हमारे कथानायक मुनिश्री विचरते विचरते अनेक क्षेत्रोको पावन करते हुए "शाहागढ" पधारे। शाहागढमे जिस स्थानपर उतरे उस स्थानमें वहुत वडा भुजग आकर मुनिश्रीके एक हातकी दूरिपर वैठ गया। मुनिश्री स्वाध्यायमें तल्लीन थे। जनताने देखा तो मुनिश्रीको अन्य स्थानोमें चलनेकी प्रार्थना की। मुनिश्रीने फरमाया "भगवानके समवशरणमेंभी सिंह, साप, नकुल, हाथी, आदि सव प्राणी वैर भूल जाते थे। वीर वाणी में अद्वितीय शक्ति है। मेरे दिलमे किसीके प्रति वैर नही है। सर्प मेरा कुछ नही बिगाड सकता। तुम लोग जराभी मत डरिये। वीर प्रभुने चडकौशिकका खुद जाकर उद्धार किया था। यह तो मेरे पास आया है। अतः अिसे वीरवाणीसे वचित क्यो रक्खू। विचारेको क्यो अतराय दू?

देखिए तपस्वीजीकी निर्भयता दृढता। साँप वहापर १० वजेसे ४ वजे तक वैठा रहा। जव मुनिश्री वहासे विहार करने लगे तव फरमाया "भाई, अव तुम तुम्हारे स्थानपर चले जाओ अन्यथा कोअी तुझे मार डालेगा"। वस मुनिश्रीका फरमाना था कि साँप वहासे चला गया। मुनि-

श्रीका तप प्रभाव देखकर जनता आश्चर्यचकित रह गयी। इस तरह मुनिश्री साँपके साथ ६ घंटे विराजित रहे।

२) मुनिश्रीके दृष्टीसे सर्प-जहर उतरना –

साँपका जहर भयंकर होता है। कई मंत्रवादी तंत्रवादी, डॉक्टर, वैद्यभी हार जाते हैं। पर चरित्रनायक मुनिश्री कुछभी नही करते थे। सिर्फ दृष्टी मात्रसे जहर उतर जाता था।

वैजापुरके पास खंडाला ग्राम है। वहाके एक धोबीके लडकेको साँप डस गया। उस लडकेको मुनिश्रीके पासमें लाए। मुनिश्रीने फरमाया 'क्या साँप डस गया? साँप डस गया कहते हो? जाओ इसे शांति सप्ताहमें खडे कर दो'। उस लडकेको आपने खडा कर दिया गया। जहरका कुछभी असर नही हुवा। जनता यह दृश्य देखकर मुनिश्रीपर अधिक श्रद्धा रखन लगी।

चौसालेमें धनराजजी खिवसराके बैलको साँप डस गया था। खिवसराजीने बैलको मुनिश्रीके सन्मुख खडा कर दिया। मुनिश्रीकी दृष्टी पडतेही बैल स्वस्थ हो गया। तपका चमत्कार देखकर जैन, जैनतर जनताकी जैन धर्मपर श्रद्धा बढी।

३) चोर पलायन – 'तुका म्हणे द्रव्य गोमास समान'

धन मांसके समान है। जिसके पास यह होता है उसके आपत्तियाँ लगी रहती है। धरती अगन जल राजा चोरे चामडी धरती में रक्खे तो इधरका उधर चला जाता है। कभी अग्नि स्वाहा कर जाती है। कभी जलदेव बहा ले जाता है। धनवानको राजा कई तरहसे दंड देता है। मराठीमें कहावत है गळ तेथ माशा गुडके पिछे मक्खियाँ लगती है। अतः धन अनर्थकी खाण है। धनको संग्रह करनेमेंभी कष्ट उठाना पडता है। संग्रह करनेके बाद रक्षण करना पडता है। चला जाता है तो कितनेक व्यक्ति प्राणभी छोड देते है।

चोरोंकी धनपर हमेशा नजर लगी रहती है। वैजनाथ परलीमें "भगवानदासजी शीतल माहेश्वरी रहते हैं। उनकी बुदरगांवपर"

खेती है। वे खेतीकी देखरेख करने गये। वहापर रातमें २०-२५ चोरोंकी टोली आ धमकी। चोरोने उनके पाससे ३००–४०० रुपये और घडी आदि थी वह सब ले लिया। और बादमें चोरोने कहा इसे जिंदा नही छोडना चाहिए। यदि यह अपनेको पहिचान जाय तो, फिर अपनेको सतायेगा। अत असे जला दो। भगवानदासजीने विचार किया मृत्यु तो सामने नाच रही है। पर एक दफा गुरुदेवका ध्यान तो कर लू। अितने चोरोंमे मै अकेला करही क्या सकता हू? ऐसा विचार करके झट गुरुदेवका ध्यान करने बैठ गये। चोरोने मिट्टीका तेल लेकर उनके सब अगपर छिडक दिया। सिर्फ दिया-सलाइ जलाना बाकी था। उतनेमें एक चोरने कहा कि, बिचारेका धनभी ले लिया और जानभी लेना यह महा अन्याय है। अपनेकोभी मरना है। अिसके बाल-बच्चे होगे। उनकी दुराशिश लगेगी। अत छोड दो।

गुरुदेवके ध्यानमे चोरोका विचार बदल गया और जिंदा उन्हे छोडकर चले गये। दूसरे दिन फिर भगवानदासजी औरंगाबादमें गुरुदेवके शरणमें आकर तेलेकी तपश्चर्या की और कहा "आपनेही मुझे बचाया है।"

४) चोरोकी दृष्टी बद –

दूसरी घटना बेंगलोर निवासी सुश्रावक धर्मप्रेमी गुरुमहाराजके अनन्य भक्त श्री धनराजजी साकलाकी सुपुत्री सुरजबाई है। उसे खिचनमे गोलेछा कुटुबमे ब्याही है। वह लग्न होतेही ससुराल गयी। वहापर दिनमे चार बजेको डाका आया। डाकेवालोने उनके घरमें प्रवेश किया। सब घरवाले धुजने लगे। परतु नव परिणीता वधूने सारा दागीना, जेवर एक थालीमें इकट्ठा करके रख दिया। और उपरसे एक मैल-कुचैला वस्त्र डाल दिया।

फिर गुरुदेवकी जोरजोरसे रट लगाई 'हे सद्गुरुनाथ' 'हे सद्गुरुनाथ'। डाकेवालोने अिधरसे अुधर तक खाक छान डाली परतु उन्हे कुछभी नही मिला। सुरजबाईसे पूछा की अिस थालमें क्या है? उसने कहा अिसमे तो बच्चोंके खिलोने है। डाकेवालोको कुछभी दिखाइ नही दिया। लाखों

रुपयोंका डागिना सामने पड़ा हुआ था। परंतु चोरोंकी (डकैतियोंकी) आंखें बंद हो गयी थी। घरमेंसे एक धागाभी नहीं गया। डाकेवाले सुरजबाई को हुमन लग। वह आपसमें कहन लग कि यह कोई पागल है। चलो यहांपर कुछभी नहीं है। वहीं डाकेवालोंने पासके घरमें जाकर डाका डाला। किन्तु गुरुदेवके अखंड जाप करनेसे सुरजबाईका घर अखंड बच गया। यह है गुरुदेवके नामम शक्ति।

९) भूत प्रतोंका निकालना –

जैनागमोमें चार जातिके देवोंका वर्णन आता है। भवनपति व्यंतर, जोतिषी और वमानिक। लोक तीन भागोंमें विभाजित किया है। वैमानिक देव ऊर्ध्व लोकमें रहने है। ज्योतिषी और व्यंतर तीर्छा लोकमें अर्थात मध्यलोकमें और भवनपति अधोलोकमें रहते है। ठाणांग सूत्रके चौथे ठाणमें प्रभुने फरमाया है दिव्वा उवसग्गा चउव्विहा पण्णता तंजहा। हासापओसो विमसा पुठो वेमया। चार कारणसे देवता उपद्रव करने है। हँसीसे द्वषसे विमर्शासे और पथककारणोंसे। मनुष्यभी तिर्छा लोकमें रहते है। और व्यंतरभी। अतः उनकी आशातना हो जानेसे यह मनुष्यको सतान लगते है।

मारवाडमें गोडवाड प्रदेशमे बल्हुणा' नामक गांव है। वहांपर बागरेचा कुटुम्बकी एक बहन रहती है। वह बजापुर' चातुर्मासमें गुरुदेवके दर्शनको आयी थी। उसकी प्रकृति अस्वस्थ रहती थी। गुरुदेव स्वाध्याय कर रह थे। वह आतेही घुमन लगी। गुरुदेवने उसे तपश्चर्या पच्छखाला दी। वह कहती ' तुम दयाल होकर हमारा १९ वर्षका घर क्यों छुडा रहे हो तुम छह कायोंकी तो रक्षा करते हो "। गुरुदेवने कहा तुम कौन हो? तब वह बोली हम ५२ वीर ६४ जोगीनी है। गुरुदेवने कहा इसे तुम क्यों सताते हो? वे कहन लगे हम सब मिलकर क्रिडा कर रहे थे। उस समय इसने आकर हमारे ऊपर अशुचिकी थी। अत हमने इसे पकड लिया है। गुरुदेवने उसे २२ दिनकी तपश्चर्या करवायी। उसी समय एक दुसरे बाईके अंगमे भरुजी आये। भैरुजी कहन लग मै जाता हू। उसी समय ५२ वीर ६४ जोगिनीने

कहा हम भी जाते है। ऐसी रट लगायी। अतमे निकल गये। बाई स्वस्थ हो गयी।

धुलियाके चपालालजीकी बहु कमलाबाईके अगमे कोअी व्यतर देव था। अुसे जब दर्शन करानेको लाये तो आँखे मुदकर बैठ गयी। जैसे श्रेणीक महाराजने अपने दादीको भगवान महावीर स्वामीके दर्शन करनेको कहा अुसने अपनी आँखे फोडली, बस वैसेहि वह व्यतरभी गुरुदेवके सामने आतेहि आखे मुद लेता था। वह बाई करीब ३ मास वहापर रही, पर गुरुदेवके सामने आखे खोलकर भी न देखती। वदना-नमस्कार करना तो दूरही रहा। जब तपश्चर्या अुसे कराना प्रारभ किया, तो वह छिपकर भोजन करनेका प्रयत्न करती थी। व्यतरके कारण वह पति तथा सासको मारती थी। सास तथा पति उसकी तपश्चर्यामे पुरी निगरानी रखते थे। गुरुदेवके पास न मत्र था न तत्र। न दोरा था न धागा। वे तो जो औषधी खुद लेते थे वही सब दीन दुःखियोको देते थे। कमलाबाई को ११ अुपवास कराये। वह आँखे खोलने लगी और १५ अुपवास कराये तब तो वह व्यतर भूखसे हैरान होकर अपना रास्ता नापा। बहन स्वस्थ होगअी। गुरुदेव हमेशा यही फरमाते थे कि हमारे पास क्या है तपस्याके सिवाय ? किन्तु गुरुदेवके चरणोमें तपश्चर्या करने वालोको आनदका अनुभव होता था। तपस्वीजीके पासमें तपस्या जराभी मुश्किल नही मालूम होती थी। यही थी गुरुदेवके सेवामे शक्ति।

" रजनीके " जवानमलजीकी बहु ताराबाई है। अुसको सौत शौक लग गयी थी। सौत अुसे भोजनही नही करने देती थी। करीब अुसने ५ वर्षतक पापड-खिचे खाकर निकाले। अुसका दिल भोजनपर बहुत जाता था। पर मुँहमे ग्रास लिया की गलेके नीचे नही अुतरता था। बिचारी हैरान होगयी। कअी प्रयत्न किये, पर सब निष्फल हुये। आखिरमें गुरुदेवके शरणमें आयी। आतेही घुमने लगी। गुरुदेवने कहा कौन है ? अुसने कहा मै तो तुम्हारी चेली हू। क्या मुझे आप नही पहिचानते हो ? " तू अिसे क्यो सताती है "। अुसने कहा जवान मलजीको तेला और अिसको ११ अुपवास कराये तो मै चली जावूगी। दोनो पति-

पत्नी ने तपश्चर्या की वह चली गयी। अब वह बहुत स्वस्थ है। बाल-बच्चेभी है। गुरुदेवके दर्शनसे महान कर्मकी निर्जरा होकर महान् फलकी प्राप्ति होती थी।

९) भानुमतिका मिकलना —

गुरुदेव अनेक क्षेत्रोंको पावन करते हुए गंगाखेड पधारे। गुरुदेवकी महिमा अपरंपार थी। गंगाखेडके पास 'दगडगाव' नामक एक छोटासा ग्राम है। वहांपर गणेशमलजी रहते थे। अनकी पत्नी बहुत दिनोंसे अस्वस्थ थी। गुरुदेवकी महिमा अुनके कानपर पहुंची। वे अस समय अपनी धर्मपत्नीको लेकर नांदेड आये। अन्होंने पहिले कभी प्रयत्न किये। हजारो रुपये खर्चे परंतु कुछ नहीं हुआ। अठारह वर्षतक भानुमति अस बहनको सताती रही। गुरुदेवके पास आतेही वह घुमने लगी। गुरुदेवने अुसे तपश्चर्या पच्छक्खा दी। सिर्फ बमली पर कितनही दिन बोली नहीं। १५ अुपवास किये। तब बोली "मैंक्या ऐसीही आयी हुं ? मुझे तेरहसो रुपये देकर बुलाई तब आयी हुं। अिसके चाचाने मेरे लिए पुतलियाँ, लिंबू, सुइयाँ वगैरे अमुक झाडके निचे गडवायी है। अत मैं अिसे क्यों छोड दूं ?" कहते है वह बहन जब कुमारावस्थामें थी। तब अुसके चाचाकी अिच्छा दुसरेके साथ शादी करनेकी थी। और अुसकी माँने गणेशलालजीके साथ शादी कर दी। अत अिर्षासे अुसके चाचाने असे भानुमती करवादी थी। गुरुदेवने १५ अुपवासके बाद १६ दिनकी तपश्चर्या और करवायी। तब वह बोलने लगी "मैं कहींभी प्रगट नहीं हुयी परंतु अिस महात्माके सामने मुझे बरबस प्रगट होनाही पडा। अिनका तपःतेज मैं सहन नहीं कर सकी।" गुरुदेवके सामने और स्थानमें अिधरसे अुधर और अुधरसे अिधर लोटती थी। गुरुदेवने कहा "अब अिसे छोड दे"। गुरुदेवके वचनमें अद्वितीय शक्ति थी। वचनही मंत्रका काम करता था। तब वह बोली 'मैं किसीभी हालतमें अिसे नहीं छोडती परंतु अिन महात्माके शद्बोंका अुल्लंघन करनेकी मुझमें ताकत नहीं है'। गुरुदेवने अुस बहनको और २२ दिनकी तपश्चर्या करवायी। तब भानुमतिने कहा 'मेरे अमुक झाडके नीचे गढे हुये पुतले निकाले तो मैं अभी जाती हूं।' फिर झाडके

नीचे जाकर देखा तो पुतले, सुओीयाँ आदि सब निकले। अुस दिनसे वह बहन स्वस्थ हो गयी। भानुमतिने अपनी लिला समेट ली। बिचारी गुरुदेवके गुण गाती अपने स्थानको चली गयी।

(७) सिरसे नाचना —

गुरुदेव भव्य जिवोका उद्धार करते हुये "लासलगाव" पधारे। "अचोरकी" रहनेवाली एक महेश्वराणी बहन पिहर जा रही थी। रास्तेमें लासलगाव पडता था। अुसने गुरुदेवका प्रभाव सुना तब वह गुरुदेवके दर्शनार्थ आयी। आतेही पैर अुपर करके सिरकी तरफसे नाचने लगी। गुरुदेवने कहा, तू कौन है? तब वह बोली "हम चार व्यतरीयाँ है।" 'असे क्यो सताती है? चली जावो'। तब वे बोली आज तो हम यहाँ थोडी क्रिडा कर ले, रास्तेमे हम अिसे छोडकर चली जावेगी। आपका वचन हमें मान्य है। ऐसा कहकर खुब सरके बलसे नाचने लगी। कुँए मे पडनेको गयी। फिर वहासे लौटकर वापिस आगयी। दर्शन करके चली गयी। रास्तेमें चारो व्यतरीयाँ चली गयी। गुरुदेवके तप तेज से दृष्टी पडतेही भूत भगते थे। दिल्ली, आगरा, बम्बइ, पाली, जोधपूर, मारवाड, मेवाड, मालवा, सौराष्ट्र, लुधियाना, खानदेश, बरार, बगलोर, मद्रास आदि अनेक क्षेत्रसे जैन जैनेतर लोग दर्शनार्थ आते और जो जो अिच्छा लेकर आते थे वे सफल हो जाती थी। भूत तो एक एक दिनमें दो चार भी निकल जाते थे। भूतोकी तो अनेक घटनाएँ है। कहातक लिखे। ग्रथका कलेवर बहुत बढ जायेगा। कओी भूत तो कहते कि हमे गणेशबाबाका डर लगता है। कओी घरमे तो सताते और गुरुदेवके डरके मारे आते नही थे। कओी कहते "हमे भूखे क्यो मार रहे हो"? कोओी कहते 'हम आपके चरण शरणमे रहेगे'। कोओी बकता तो, कोओी रोता तो, कोओी गाता, कोओी लौटता। हमेशा यात्रा लगी रहती थी, पर गुरुदेव अपने स्वाध्यायमे तल्लीन रहते थे। वे न तो अपने तपःतेज का अभिमान करते थे। और न अुनके प्रपचमें पडते थे। जो कोओी भी रोगका, भूतोका, बिमारीका, दु.खोका गित लेकर आता अुसे तपकी पुडीयाँ दे देते। सबके लिए एक दवा, एक जडी, एकही बटी थी। वह था तप। सबको

समर्दशितासे सबको दवा देते थे । न पैसा लगता था न टका । कल्पवृक्ष चिंतामणी रत्नके समान थे ।

८) व्यवहारसे पुन जीवन —

तुलसी आवत देखन सति नमायो शीष ।
चीर जीवो तुम बालमा अमर चूडा आशीष ॥ १ ॥

एक बहन का पति मर गया । अत वह अपने पतिके साथ सति होनेको आ रही थी । मार्गमें तुलसीदासजीको आते देखकर सर झुकाया । तब तुलसीदासजीने अमर चूडका आशीर्वाद दे दिया । सती यह आशीर्वाद सुनकर शवकी ओर कहा —

पति हमारे चल बसे हम भी जावनहार ।
तुलसी तुम्हारे वचनका होगा कौन हवाल ॥ २ ॥

तब तुलसीदासजी यह दोहा सुनतेहि विचारमें पड गये । परंतु उन्हे रामनामपर पूरा विश्वास था । अत मुर्देको वहीं ठहरा लिया और कहा—

तुलसी मन्ना अठायके धरो शीषपर हाथ ।
तुलसीदास गरीबकी पत राखो भगवत ॥ ३ ॥

हे प्रभो मैंने तो बिना विचार जो कुछभी कह दिया है अुसको सुधारनेवाले आपहि हो । आपके नाममें महान शक्ति है । बिगडी सुधारने वाले आपहि हो । अिस तरह प्रभुकी प्रार्थना करने लगे । तब वह मुर्दा जीवित हो गया । सतीकी लाज बचानेवाले प्रभुहि है ।

गुरुदेवने गाममेंभी दो प्राणियोंको पुनर्जीवन मिला । एक मद्रासका भाई था । वह बहुत बिमार था । डॉ. वैद्य हकिम आदि कई व्यक्ति आये । किसीने इंजक्शन दिये किसीने दवाई की बोतल पिलाई किसीने पुडीयाँ चटाई । परंतु बिमारी तो दिन–प्रतिदिन बढती गयी । अुस भाई की पत्नी हैरान थी । अब क्या किया जाय ? अुनपर तो वज्रपात हो रहा था । वह अनमनसमें पडी थी । उनकी तो श्वासोश्वासकी क्रिया भी बंद होगयी । नाडी देखी तो सब काम समाप्त हो गया था । बस अब वह बहन तो किंकर्तव्यमूढ बन गयी और चिल्लाने तथा रोने लगी । गांवके

सब लोक स्मशान-यात्राके लिये आगये। सीढीकी तैयारी होने लगी। अुतनेमें अुस बहनको गुरुदेवका स्मरण हुवा। अुनने कहा "गुरुदेवके नामसे माला तो पहनाओ!" और पाच हजार रुपये लेकर अुस भाईके हाथका स्पर्श कराके धर्मदान करनेका निश्चय करार लिया। बस, फिरतो पद्रह-बीस मिनटमे अुस भाईने श्वासोछ्वास लेना शुरु कर दिया। यह गुरुदेवपर अटल श्रद्धाका महात्म्य।

अैसेहि बगलोरमें एक बहन बीमार होगयी। अुसके पतिने भैरु, भवानी। पीर-पैगबर, साईबाबा, कुलदेवता आदि कई देवी देवताओंकी मनौती की। किन्तु कुछभी फायदा नहीं हुवा। डॉ०, वैद्योनेभी हाथ टेक दिये। दुनियाका रिवाज है, जिनके पास जो वस्तु होती वह वैसेहि बताता है। व्यासजी महाराजने कहा –

वैद्या वदति कफ-पित्तमरुद्विकारान्, ज्योतिर्विदोग्रह
गतिपरिवर्तयन्ति । भूताभिषंगिति भूतविदो वदन्ति,
प्राग्बद्धकर्म बलवान् मुनयो वदन्ति ॥ १ ॥

वैद्य लोग कफ-पित्त तथा वायुका विकार बताते है। ज्योतिषि ग्रहका जोर बताते हैं। भूतोंको जाननेवाले भूतपलित बताते है। किंतु मुनिलोग तो कहते हैं 'पूर्व कर्म है'। अुसे भोगे बिना छुटकारा नहीं है। देव गुरु और धर्मका शरण लिये बिना कर्म नाश नहीं होते हैं। वह भाई किंकर्तव्यमूढ बन गया। फिर बहनकी स्थिती गंभीर हो गयी। लेकिन अुस भाईने हिम्मत नहीं हारी। अुसे एकदम गुरुदेवकी स्मृति हुयी। स्मृति होतेहि अुसे मानो घोर अंधकारमें सूर्योदय होगया हो वैसा आनद हुवा। अुसने गुरुदेवका स्मरण किया और ५१ रु० हस्तस्पर्श कराके धर्मादामें निकाले कि थोडीहि देरमें वह बहन आँख खोलकर बोली "क्यो घबराते हो! मैं तो अच्छी हुं। इस भाईको इस लिये सारे देवीदेवताओंसे श्रद्धा हट गयी और गुरुदेवपर पूर्ण श्रद्धा होगयी।

१) (ब) पागलपनका दूर होना.–

पागलपन अैसी भयंकर बिमारी है कि मनुष्य होते हुअे भी पशुसे बेहत्तर स्थिति हो जाती है। जिसके लिये वह विनोदका साधन बन

जाता है। पर अुस विनोद से स्वयको कोई आनंद नही आता है। किय अेक पागलोंको तो कुटम्बी लोग घरसे निकाल देते है। कोई पागलखानमें भजते है। पागलके सहाय्यक बहुत कम लोग बनते हैं। गुरुदेवके दरबार में पशुवकको स्थान मिलता था तो फिर मनुष्योके लिये कहनाहि क्या ! निझामाबादमें एक माहेश्वरी रहता है। उसको १९–२० वर्षका एक लडका है। वह पांच–छह् वर्षसे पागल था। असका पागलपन मर्यादाके बाहर था। वह माता–पिता–भाई आदि को खूब मारता था। दांतोंसे डसता था। जंजिरोसे बांधनपरभी तोडकर भग जाता था। गुरुदेवकी महिमा सुनतेहि वह अपने पागल पुत्र को लेकर गुरुदेवके दरबारमें पहुचा। गरुदेवने अुसे महान कर्म निर्जरा को अैसी पुडीया दी अर्थात तेला पच्चक्खाया जिससे तीनहि दिनमे अुसका पागलपन दूर हो गया। जो पुडिया कहींभी डॉ० वैद्य यहां नही मिलती थी। फिरतो अुसके पिताने कहा हे महामुने ! मेरे पुत्रको आठ दिन दवा दे दिजिए। अर्थात आठ दिनकी तपस्चर्या करा दिजीए। आठ दिनके तपस्चर्याके बाद वह असा स्वस्थ बन गया कभी पागल था या नही अैसा पता तक नही लगता है। वह आजभी गुरुदेवके गुण गा रहा है।

(ब) खानदेश में राजनी नामका एक छोटासा ग्राम है। वहांपर "कोडा" नामका एक व्यक्ति पागल बन गया था। वह तो दिनभर बकनाहि रहता था। अुसका मुह रेडीओ के समान चोवीस घन्टे चलताहि रहता था। रेडीओमें और असमें सिर्फ अितनाहि अंतर था कि रेडीओ बटन दबानेपर बन्द हो जाता है और वह पगला कितनेहि प्रयत्न करने पर भी बन्द नहीं होता था। घरके लोग हैरान थे। परंतु क्या किया जाय ? कोई कहता वात का जोर है अतः अिसे बिजली का सेक किया जाय। कोई कहता कनपटीयोंपर डाग लगा दो। पिंड पिंड मतिर्भिन्ना अर्थात जितने शरीर है अुतनीहि बुद्धियां है। Many men many minds जितनी मारहीयां अुतनीहि बुद्धियां के अनुसार सलाह होने लगी। परन्तु कोई चतुरने कहा गुरुदेवके शरणमें ले जावो। सारी झंझट मिट जाएगी। अब भाईको अुसके परिवारवाले गुरुदेवके शरणमें

लाअे तो वह "ओ काकाजी ! ओ काकाजी ! रोता हुवा आया, जिसको सुनकर सारे श्रोताजन हँस पडे । गुरुदेवने हमेशाकी दवा अुस मरीजको दे दी । बस आतेहि तेला पच्चक्खा दिया । कुछ पागलपन में कमी दिखाई दी । फिर पारना होतेहि दुसरा तेला, अिस तरह पाच तेले कराअे । पागल अच्छा हो गया । गुरुदेवके पासमें जो अमर जडी थी वह एक तपहि था । जिससे सब प्राणी सुखी हो जाते थे । अैसे कअी पगले सुधरे परतु ग्रन्थ-वृद्धि-भयसे एक दो नमुनेस्वरूप लिख दिये हैं ।

१० महारोग के महावैद्य –

'Death is better than disease'

'रोगसे मृत्यु अच्छी ।' रोगीको अनेक प्रकारका दु ख सहन करना पडता है । दुसरेका मुँह ताकना पडता है । कुछभी कार्य करनेमें असमर्थ होता है । अत अुसका 'जी' घबराता है । न वह योगका साधन कर सकता है, न भोग का । वह देखदेखकर तरसता रहता है । शरीरमें अस्वस्थता होनेके कारण मनभी अस्वस्थ रहता है । रोग यह यमदूत है । अिसमें सिर्फ एकहि गुण है । भगवानका स्मरण करा देता है । नास्तिकभी आस्तीक बन जाता है ।

बबई शहर के रहनेवाले एक भाईको कुष्ठ रोग हो गया था । अुसने सारे बबई शहरके डॉक्टरोके दवाखानोकी खाक छानी । किंतु न रोगका नाश हुवा न पैसोकी बर्बादी मिटी । घरवालेभी अैसे रोगवालोसे घृणा करने लग जाते हैं । अुसे अपनी जिंद-गीसे नफरत हो जाती है । वह भाई देव गुरु तथा धर्म को तो कुछ भी नही समझता था । "आर्ता देवान् नमस्यति" । रोगी लोग भगवानको नमस्कार करते है । अुन्होने तो यह आस्तिक लोगोकी मश्करी की है । परतु दु खमें ईश्वर जरूर याद आता है । अुस कुष्ठीकेभी कानपर गुरु-देवके महिमाकी सौरभ पहुँची । अत वह सद्गुरुनाथके चरण-कमलोका सहारा लेने आया । गुरुदेवने देखतेहि अुसे कहा "भाई विना तपके कर्म निर्जरा नही होती, आत्माको तपावो तो कर्ममैल कटे ।" अुस भाई कहा, 'फरमाईये ! आपकी जो आज्ञा होगी वही मैं करूंगा' । गु

पन्द्रह दिन की तपश्चर्यारूप रामबाण दवा दे दी । जैसे रामका बाण खाली नहीं जाता था वैसेही गुरुदेवकी दवा भी खाली नहीं जाती थी । १५ दिनमें तो अुसका कांचनवर्ण शरीर बन गया। अुसदिनसे अुस भाईकी धर्मपर पूर्ण श्रद्धा हो गयी ।

(ब) यवतमाल जिलेमें ढाणकीके पास पळसपूर नामका एक छोटासा ग्राम है। वहांपर एक मराठा रहता है अुसे रक्तपित्ती अर्थात गलितकुष्ठ हो गया था। अुस भाईने अपने जीवनकी आशा छोड़ दीथी। अिस भयंकर बिमारीसे सब डरते थे। अतः अुसे कोईभी पासमें बैठने नहीं देता था। बिचारा सबसे तिरस्कृत हुवा। गुरुदेवकी शरणमें आया। अुस समय गुरुदेव ढाणकी विराजते थे। वहां आकर वह मराठा आंखोंसे नीर बहाता हुवा बोला बाबा मला तुमचच शरण आहे, आपण ज मला सांगाल तम मी करीन पण माझा रोग बरा झाला पाहिजे। गुरुदेवने फरमाया तुम्हे एक महिनेकी तपश्चर्या करनी पड़ेगी। अुसने आज्ञा शिरोधार्य करली और बोला मला आजच शपथ देवून टाका। लेकिन गुरुदेव अुसे २-२ दिनके पच्चखाण कराते थे। सब आश्चर्य करते थे क्योंकि जो लोग एकादशी करते हैं वो बिना फलाहार किये नहीं रहते वह व्यक्ति मास खमण के लिये ग्रीष्म ऋतुमें कमर कस बैठा। वह तीनों समय प्रार्थना व्याख्यान में आता था। २९ दिनकी तपश्चर्या सानंद समाप्त हो गयी। लेकिन दो दिनके तपकी न्यूनतासे अुसका रोग कुछ शेष रह गया। यदि वह दो दिनका तप और कर लेता तो सब रोग चला जाता। फिर अुसने तपश्चर्या करनेकी तैयारी की। परंतु गुरुदेवने कहा 'वह रस चला गया अब वह रसायन नहीं है। गुरुदेव के दरबार में कोईभी निराश होकर नहीं जाता था। सभी हंसते हंसते जाते थे। भगवान वैद्यके पास कोईभी रोगीके लिये दवाकी कमी नहीं थी। वर्धमान का अखंड औषधालय सबके लिये खुला रहता था। जो वर्धमानमें श्रद्धालु है अुनके लिये आजभी खुला है। प्रश्न सम्यक श्रद्धा का है। किसीभी प्रकारका रोगी क्यों न हो गुरुदेवने धार्मिक तपरूपी दवा लेकर मुधर जाता था। दवा लेकर धर्मपर श्रद्धा हो जाती थी। सद्गुरुदेवने कई दीन दुःखियोंके दुःखोंका हरण किया।

(११) भक्त-वात्सल्य –

महापुरुषोका प्रत्येक क्षण चमत्कारोसे भरा पडा है। जिसे लिखते-लिखते कई पुस्तके भर दी जाय तो पुस्तकोका अत हो जायगा परतु गुणोका नही। अुनके गुणोका जो गान तथा वर्णन कर रहे है वह सिर्फ अपने आत्म-तृप्तिके लिये है। यह जो घटना लिखी जा रही है, वह गुरुदेवके अनन्य भक्त सुश्रावक दृढधर्मि, प्रियधर्मि रगलालजी कोठारीपर घटी थी। रगलालजी साहब को धर्मका रग तो पहलेसेहि था। वे गुरुदेव के भक्तिमे तो पूरे रगे हुये थे। जबहि अुनके दर्शनकी इच्छा होती कि शीघ्रहि गुरुदेवके चरणारविंद मे हाजीर हो जाते थे, वे घरका, दारका, दुकान का कुछभी विचार नही करते थे। एक समय गुरुदेवके दर्शनकी उत्कट इच्छा जाग उठी। गाडीका समयभी बहुत जल्दीका था। अपनी शीघ्रातिशीघ्र जानेकी इच्छा प्रगट करनेको घरपर आये। अुनकी धर्म-पत्नी पौषध लेकर धर्मस्थानमें बैठी थी। घरमे इधर उधर देखा तो कुछ पडी हुअी बरफी, शेव आदि दिखाई दी। अत थोडासा भाता, अपने हाथोसे बाध लिया और रवाना हो गये। गुरुदेव विहार करते हुअे रास्तेमें मिले। साथमें जो थोडासा पाथेय था वह तो रास्तेमेही समाप्त होगया था। मध्यान्हका समय था। सूर्य अपनी तीव्र किरणोसे मानो आग बरसा रहा था। दूसरी ओर पेटमे क्षुधाग्नि सता रही थी। मुँह उतर गया था। परतु तपस्वीजो साथ साथ चल रहे थे। क्षुधा तथा अपनी कायरता किस प्रकार प्रगट की जाय? लेकिन भक्तवत्सल गुरुदेवने पूछा "क्यो भाअी, भूख लगी है?" मानो गुरुदेवने अतरालकी बात जान ली हो। रगलालजीने कहा "कृपानाथ भूख तो जरूर लगी है लेकिन यहाँपर क्षुधा-शातिका कोअी साधन नही है।" करुणानिधान गुरुदेवने अुसी समय १२ बजेका ध्यान किया। इतनेमे एक भाअी और एक बहन भोजन लेकर आये और कहा–"लिजीए थोडा भोजन आरोगीए" अुनके पास जो दही पुडी लाअी हुई थी, वह रगलालजीको दे दी। रगलालजी को औ क्या चाहिअे था, अुन्होने अपनी क्षुधा शात कर ली। आगन्तुओके त रगलालजी देखतेही रह गए। लेकिन थोडी दूर तक वह भाई, बा

पद्रह दिन की तपश्चर्यारूप रामबाण दवा दे दी। जैसे रामका बाण खाली नहीं जाता था वैसेही गुरुदेवकी दवा भी खाली नहीं जाती थी। १५ दिनमें तो अुसका कांचनवर्ण शरीर बन गया। अुसदिनसे अुस भाईकी धर्मपर पूर्ण श्रद्धा हो गयी।

(ब) यवतमाल जिलेमें ढाणकीके पास 'पळसपूर' नामका एक छोटासा ग्राम है। वहाँपर एक मराठा रहता है अुसे रक्तपित्त अर्थात् गलितकुष्ठ हो गया था। अुस भाईने अपने जीवनकी आशा छोड दीथी। जिस भयंकर बिमारीसे सब डरते थे। अतः अुसे कोईभी पासमें बैठने नहीं देता था। बिचारा सबसे तिरस्कृत हुआ। गुरुदेवकी शरणमें आया। अुस समय गुरुदेव ढाणकी विराजते थे। वहाँ आकर वह मराठा आँखोंसे नीर बहाता हुआ बोला बाबा मला तुमचच शरण आहे आपण जे मला सांगाल तस मी करीन पण माझा रोग बरा झाला पाहिजे। गुरुदेवने फरमाया तुझे एक महिनेकी तपश्चर्या करनी पडेगी। अुसने आज्ञा शिरोधार्य करली और बोला मला आजच शपथ देवून टाका। लेकिन गुरुदेव अुसे २-२ दिनके पच्चक्खाण कराते थे। सब आश्चर्य करते थे क्योंकि जो लोग एकादशी करते हैं तो बिना फलाहार किये नहीं रहते वह व्यक्ति मास खमण के लिये ग्रीष्म ऋतुमें कमर कस बैठा। वह तीनों समय प्रार्थना व्याख्यान में आता था। २८ दिनकी तपश्चर्या सानंद समाप्त हो गयी। लेकिन दो दिनके तपकी न्यूनतासे अुसका रोग कुछ शेष रह गया। यदि वह दो दिनका तप और कर लेता तो सब रोग चला जाता। फिर अुसने तपश्चर्या करनेकी तयारी की। परंतु गुरुदेवने कहा वह रस चला गया अब वह रसायन नहीं है। गुरुदेव के दरबार में कोईभी निराश होकर नहीं जाता था। सभी हंसते हँसते जाते थे। महान वैद्यके पास कोईभी रोगीके लिये दवाकी कमी नहीं थी। वर्धमान का अलख औषधालय सबके लिये खुला रहता था। जो वर्धमानमें श्रद्धालु है अुनके लिये आजभी खुला है। प्रदन सम्यक श्रद्धा का है। किसीभी प्रकारका रोगी क्यों न हो गुरुदेवके पाससे तपरूपी दवा लेकर सुधर जाता था। दवा गुरु धर्मपर श्रद्धा हो जाती थी। सद्गुरुनाथने कई दीन दुनियाके दुःखोंका हरण किया।

(११) भक्त-वात्सल्य –

महापुरुषोंका प्रत्येक क्षण चमत्कारोंसे भरा पडा है। जिसे लिखते-लिखते कई पुस्तके भर दी जाय तो पुस्तकोंका अन्त हो जायगा परतु गुणोंका नही। अुनके गुणोंका जो गान तथा वर्णन कर रहे है वह सिर्फ अपने आत्म-तृप्तिके लिये है। यह जो घटना लिखी जा रही है, वह गुरुदेवके अनन्य भक्त सुश्रावक दृढधर्मि, प्रियधर्मि रंगलालजी कोठारीपर घटी थी। रंगलालजी साहब को धर्मका रंग तो पहलेसेहि था। वे गुरुदेव के भक्तिमे तो पूरे रंगे हुये थे। जबहि अुनके दर्शनकी इच्छा होती कि शीघ्रहि गुरुदेवके चरणारविंद मे हाजीर हो जाते थे, वे घरका, दारका, दुकान का कुछभी विचार नही करते थे। एक समय गुरुदेवके दर्शनकी उत्कट इच्छा जाग उठी। गाडीका समयभी बहुत जल्दीका था। अपनी शीघ्रातिशीघ्र जानेकी इच्छा प्रगट करनेको घरपर आये। अुनकी धर्म-पत्नी पौषध लेकर धर्मस्थानमें बैठी थी। घरमे इधर उधर देखा तो कुछ पडी हुअी बर्फी, सेव आदि दिखाई दी। अत थोडासा खाना, अपने हाथोमे बाध लिया और रवाना हो गये। गुरुदेव विहार करते हुये रास्तेमें मिले। साथमे जो थोडासा पाथेय था वह तो रास्तेमेही समाप्त होगया था। मध्यान्हका समय था। सूर्य अपनी तीव्र किरणोंसे मानो आग बरसा रहा था। दूसरी ओर पेटमें क्षुधाग्नि सता रही थी। मुँह उतर गया था। परतु तपस्वीजी साथ साथ चल रहे थे। क्षुधा तथा अपनी कायरता किस प्रकार प्रगट की जाय? लेकिन भक्तवत्सल गुरुदेवने पूछा "क्यो भाअी, भूख लगी है?" मानो गुरुदेवने अतरगकी बात जान ली हो। रंगलालजीने कहा "कृपानाथ भूख तो जरूर लगी है लेकिन यहाँपर क्षुधा-शातिका कोअी साधन नही है।" करुणानिधान गुरुदेवने अुसी समय १२ बजेका ध्यान किया। इतनेमे एक भाअी और एक बहन भोजन लेकर आये और कहा–"लिजीए थोडा भोजन आरोगीए" अुनके पास जो दही पुडी लाअी हुई थी, वह रंगलालजीको दे दी। रंगलालजी को–भी क्या चाहिअे था, अुन्होने अपनी क्षुधा शात कर ली। आगन्तुकों रंगलालजी देखतेही रह गए। लेकिन थोडी दूर तक वह

दिखाओी दिओे बादमें गायब हो गये । अुनके जानेके बाद श्रद्धालु श्रावकजीने गुरुदेवसे विनम्रपूर्वक पूछा गुरुदेव ये कौन थे जो मुझे भोजन कराकर चले गये । गुरुदेवने फरमाया 'तेरा तो पेट भर गया तुझे क्या करना कोओी भी हो ? तुझे आम खानेसे मतलब है कि पेड गिननेसे ? कभी बार पूछनेपर भी गुरुदेवने रहस्य नही बताया । कभी हसके रह जाते तो कभी उपरोक्त उत्तर देते । कारण गुरुदेव कभी भी अपनी स्तुति नही चाहते थे।

अद्यापि स्तुति कन्या भजते च कौमारम्
सद्भि न रोचते सा संतोऽप्यहम न रोचते ।

अभीतक स्तुतिरूपी कन्या कुमार अवस्था को भोग रही है क्योंकि संत पुरुषोको वह सुहाती नही है । और दुर्जन लोग स्तुति रूपी कन्याको पसंद नही आते है । गुरुदेव की कोओी प्रशंसा करता तो फरमाते थे तुम लोग मेरी झूटी प्रशसा करके मुझे खश करना चाहते हो।

१२) रेल दुर्घटनासे बचना --

गुरुदेवका मनमाडमें चातुर्मास था । कर्नाटककी तरफसे बहुतसे दर्शनार्थी आरहे थे । रास्तेमें दुर्घटना हुई-गाडीके सारे डिब्बे पटरीको छोडकर नीचे बह गये । जिस डब्बेमें दर्शनार्थी बैठे थे वे ज्योहि गाडी डगमगाने लगी त्योहि सद्गुरुनाथकी जय सद्गुरुनाथकी जय इस तरहसे जयनाद करने लगे । जयनाद ध्वनिके प्रभावसे वह डब्बा बच गया । सब लोगोको आश्चर्य हुआ । सद्गुरुनाथकी महिमा अवर्णनीय है ।

प्रकरण १३ वाँ

चातुर्मास

अहिंसा परमो धर्मस्तथाऽहिंसा परं तप ।
अहिंसा परमं ज्ञानं अहिंसा परम पदम् ॥१॥

यह श्लोक महाभारतका है । अहिंसा सब धर्मोंमे उत्कृष्ट धर्म है, तथा अहिंसाहीसबसे श्रेष्ठ तप है । सर्व ज्ञानमें अहिंसा ही सर्व श्रेष्ठ ज्ञान

है। अहिंसाही सबसे उत्तम पद है। दशवैकालिक सूत्रमें वीर प्रभुने फरमाया है —

सव्वे जीवावि इच्छति जीवि उन मरिज्जिउ
तम्हा पाणि वह घोर निग्गथा वज्जयतिण ॥

अर्थात सब जीव जीनेकी इच्छा करते है। मरनेकी नही। अत घोर प्राणी-वधको निग्रन्थ लोग त्याग देते है। सूयगडाग सूत्रमें फरमाया है —

॥ दाणाण सेठ्ठं अभय प्पायाण ॥

दानोमें अभयदानही श्रेष्ठ है,। चरित्रनायक अहिंसाके अग्रदूत, महान उपकारी सद्गुरुनाथने 'सिकद्राबादमें' वि स. १९९२ में चातुर्मास किया था। वहाँपर प्रतिवर्ष प्लेग अपना अड्डा जमाता था। शहरके लोग हैरान थे। अज्ञानी जनता वहाँपर "माग काली" नामकी देवीका कोप समझकर उसे मनानेके लिये लाखो बकरोंका बलिदान देते थे। एक गुजराथी कवि कहता है —

" सबळा थी सहुको डरे, न बळानेज् नडाय।
बाघ तणो मागे नही, भख भवानी माय ॥१॥

भवानीको बकरोंकाहि भख क्यो देते है? सिंहका क्यो नही देते? सिंहका भख देने जावे तो देनेवाला स्वत ही भक्ष्य हो जाता है। अत विचारे गरीब तृणोंसे आजीविका चलानेवाले निरपराधी प्राणियोंको देवी के बहाने वध करके जिव्हा लोलुपी लोग अपनी तृप्ति कर लेते है। किन्तु यह नही सोचते कि, खूनसे सना हुआ वस्त्र खूनसे धोनेपर कैसे शुद्ध हो सकता है। गावमे रोगका आना; अग्नि आदि का उपद्रव होना; जलप्रवाहका आना; आदि जो उत्पात होते है, वे नगर जनोंके पापोदयसे होते है। भोली जनता बिना समझसे पापको हटानेके बदले और बढाती है।

॥ यूप छित्वा पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिरकर्दमम्
यद्येवं गम्यते स्वर्गो नरके केन गम्यते ॥१॥

वृक्षोंका छेदन करके पशुओंका वध करके खूनका किचड करनेसे यदि स्वर्गमें जाता है तो नर्कमें कौन जायगा। अर्थात जीवोंका वध करनेसे आत्मा और महान कष्ट को प्राप्त करती है। अपने हाथोंसे पैरपर कुल्हाडी मारती है। मिथ्यात्वि लोग मिथ्या भ्रममें डालकर भोली जनताको उलटे मार्गपर ले आती है। बस् यही हाल सिकंदराबादका था।

वहांपर गुरुदेव चातुर्मासार्थ पधारे। उधर अपने नियमानुसार प्लेगनभी आकर आसन जमाया। एक तरफ धर्मराजका आगमन दूसरी तरफ कर्मराजका। दोनो अपनी तैय्यारी में थे। ज्योंही कर्मराजने प्लेगके बहाने अपना राज फैलाया त्योंहि धर्मराजने अपने जपतप और अहिंसारूप शस्त्रोंको लेकर सज धज कर सनद्ध होगये। करुणाकी मूर्ति श्री चरित्रनायकजीने शांति सप्ताह और शहरमें अखंड आयंबिल तप प्रारंभ कर दिया। प्लेगकी पराजय होने लगी उसके पैर खिसकने लगे। उधर जिव्हा लोलपी लोग देवीके बहानेसे बकरोंका बलिदान देनके लिये तैय्यारी करने लगे।

अहिंसाके अवतारी श्री सद्गुरुनाथने सुश्रावक प्रिय धर्मी दृढ धर्मी श्री मनराजजी साहबसे फरमाया यह क्या अनर्थ हो रहा है? बिचारे! निर्बल प्राणियोंको क्या सता रहे है? कबीरजीने कहा है—

बकरी पाती खात है उसकी काढ़ खाल।
जो बकरीको खात है उसका क्या हवाल ॥१॥

ये अज्ञानी लोग देवीके नामपर महान हिंसाका तांडव नृत्य करते है। और आप जैसे श्रमणोपासक श्रावक कुछभी प्रयत्न नही करते यह आश्चर्यकी बात है। मनराजजीने कहा गुरुदेव बहुत कुछ प्रयत्न किया परन्तु भोली जनतामें भ्रमका भूत ऐसा घुसा है। अतः वह मानती नही। तब गुरुदेवने फरमाया फिर एक बखत और प्रयत्न किया जाय गुरुदेवकी आज्ञा प्राप्त कर मनराजजीने प्रयत्न प्रारंभ किया। देवीके मन्दिर में जाकर हाजीर हो गये और भोली जनतासे कहा — ' यदि देवीको बकरेकी आवश्यकता

होगी तो वह स्वय बकरेको मारकर भक्ष्य ले लेगी। मै बकरेको कभी नही मारने दूँगा। यह लो छुरा और मेरे गलेपर चलाया जाय बादमे बकरेपर।" बहुत कुछ रस्साकस्सी हुअी लेकिन अनराजजी अडीग रहे। अुनके सरपर गुरुदेवका पजा था, अुनकी यह दृढता देखकर आर्यसमाजी लोग भी सहायक बन गये। अुन लोगोने बहुत सहायता की। जो बकरे आते गये त्यो सबको अिकठ्ठे करके अन्य स्थानपर पहूँचाने लगे। बादमें सरकार द्वारा यह कानुन पास करा लिया गया कि आजसे इस देवीके सामने एकभी बकरेका बलिदान न होगा, जो करेगा वह दण्डका पात्र होगा।

अिस तरह गुरुदेवने लाखो बकरोको अभयदान दिलाया था। अिसी तरह 'बिड जिलेमे' दशहरेके दिन बकरे काटे जाते थे। अहिंसाकी भेरी बजानेवाले गुरुदेवने अुपदेश दिया। जिससे 'जडावबाअी' फोटेपाने कमर कसी। और कहा 'मुझे पचोलेके पच्छक्खाण दीजिये।' पचोला पच्छक्खकर वह बहन जहाँ बकरे काटे जाते थे वहाँ जाकर अुन लोगोसे कहा 'जबतक तुम लोग बकरे मारना बद नही करोगे तबतक मै मुहमे अन्न, जल नही लूगी'।

तपके प्रभावसे जनता शिघ्रही मान गयी। और अहिंसाका झंडा फहराती हुयी सद्गुरुनाथकी जयनाद करती हुअी 'जडावबाअीने' गुरुदेवको वदना की। जडावबाईने आजीवन एकातर तप अगिकार किया।

प्रकरण १५ वाँ

चिरस्मरणीय चातुर्मास (हिंगनघाट)

गुरुदेवने हिंगनघाटमें चातुर्मास किया। जनतामे आनंदकी लहरे अुठने लगी। गुरुदेव सदुपदेशकी वर्षा कर रहे थे। मानो धर्मदेव साक्षात रूप लेकर अवतरित हुवा हो, ऐसा प्रतित होता था। गुरुदेवकी दर्शनका पिपासु प्लेग भी वहाँपर आया। गुरुदेवने फरमाया "इन लोगोंको कोई

जरूरत नही। यह तो यम परीक्षा करनेको आया है। परंतु जनता डरने लगी और महिलोको छोडकर जंगलोका सहारा लेन लगी। श्रावकजनोंने गुरुदेवको प्रार्थना की आपभी झोंपडीमें पधारिये। गुरुदेवने फरमाया मत डरना नही मुझे अिसके सामने डटना है। मेरा यह क्या कर सकता'? सारा जनसमुदाय झोपडीमें चला गया। वीरके सच्चे सिपाही सद्गुरुदेव प्लगपर विजय प्राप्त करनेके लिए वहीं पर रहे। सारी जनता चली जानेके कारण आहार पानीका भी योग नहीं मिलता था। दृढव्रतधारी गुरुदेव निमके सुखे पत्ते खाकर प्लेगसे जुझने लगे। गावमें चहोंको मारनेके लिए नगरपालीकाके तरफसे कोओी व्यक्ती आता तो उससे चहोंको छुडाकर जंगलोमें भेज देते थे। अिस तरह अहिंसाके अमर दुतने लाखो चहोंके प्राण बचाये। करीबन एक माहतक प्लग जारी था। परंतु गुरुदेव अपने अटल नियमसे चलायमान नही हुये। एकांतर तप निरंतर चालू था। पारनेमें निमके सुख पत्तोका आहार लेते थे। आखिरमें प्लगको महातपस्वीके सामने हार खानी पडी और वहांसे खिसकना पडा। गुरुदेवका विजय-डंका बजा। अहिंसा की रणभेरी गुंज उठी। जनता एसी दृढता देखकर दातोतले अुंगली दबाने लगी। धन्य है मत्यंजय गुरुदेवको। एसी दृढता रखना साधारण व्यक्तिका काम नही है। यह तो कोओी अद्वितीय दिव्य ज्योती थी जोकी साधके सत्ताविस गुणामें बतलाया है। जीवियास मरण भय विप्प मुक्क जीनकी अिच्छा और मत्युके भयसे रहीत है। वे एसे दिव्य ज्योति गुरुदेवने आतंक को हरा दिया।

प्रकरण १५ वाँ

धर्मकी गंगा बही　　(गंगाखेड)

परभणी जिलेमें गंगाखेड नामक गंगाके किनारेपर एक छोटासा गांव है। गुरुदेवकी कृपा अुस गंगाखेडपर हुओी और चातुर्मास कर दिया। गुरुदेवने शिवराम पटेलको सच्चा शिवपुरीका मार्ग बतलाया।

अपने अमृतमय वचनोसे अमृत पिलाया जिससे प्रभावित होकर पटेल साहवने कथी व्रत नियम लिये। जसे आजीवन कच्चा पानी नही पिना, खद्दरके वस्त्र पहनना, और वहभी खुदके हाथसे कातकर वनाये हुये, पत्नी तथा माताके हाथका भोजन करना अन्यके हाथका नही, आजीवन ब्रम्हचर्यव्रत पालना अित्यादिक अनेक मर्यादाये की। कर्नाटक केसरीजीने फरमाया 'पटेलसाहव दुनियाँ कैसी है ? जिस गंगाको पवित्र पावन मानते है, जिस गंगाका भारतमें अितना मान है, अुसी गंगाके मैल को साफ करनेवाली, अुसे पवित्र रखनेवाली मछलियोको लोग पकडते हैं और खाते हैं। वे गंगाके भक्त गंगाका कितना वडा अपराध करते हैं। तथा जिस गंगाके किनारेपर वैठकर ऋषि-मुनि तप करते थे अुसी गंगाके किनारेपर पापी लोग जीव हिंसा करते है। यह भारतके लिये कितनी लज्जास्पद बात है।

पटेल साहवने अुपदेश श्रवण कर कार्यमे परिणत कर दिया। गावमें डौंडी पिटवा दी "जवतक सद्गुरुनाथ यहाँपर विराजेंगे तवतक गंगानदीमें कोअी मच्छी नही पकड सकेगा"। अिस डौंडीको सुनकर सभी लोगोने मच्छी पकडना वंद कर दिया। परंतु एक व्यक्तिके दिलमें यह बात नही जची और अुसने एक दिन कहा "क्या होता है ? देखूं आज मै मच्छी पकडता हूँ"। वह जाकर नदीमे जाल डालता है। एक छोटीसी मच्छी अुसमें आयी। अुसने ज्योही जाल खिंची त्योंही वह मच्छी वहुत वडी हो हो जाती है। अुसके आनंदका पार नही रहा। किन्तु अुसमे अितना वजन हो गया की वह खेंच नही पाया। और वह मच्छी अितना जोर मारती है की अुस व्यक्तिको खेंचकर ले जाती है। अुसने जाल क्या डाली मानो कालको अपने हाथसे आमंत्रण दिया और प्राण गमाया।

"जान जान नर करे घिटाअी ताको काल घसीटत खाअी"।

इतना प्रभाव देखकर भी दूसरा व्यक्ति और जाकर नदीमें जाल डालनेका विचार करता है। अुसी समय अुसे १०३ डिग्री वुखार आ जाता है। और वेहोश हो जाता है। घरवाले किसी भविष्यवेत्तासे पूछते है।

ाल और सफेद गौओसे ' स्टिवेन्सन ' कहता है की मै हृदयसे प्रेम करता ं। क्यो कि छिलके और भुसा खाकर मुझे मलाई, दुध और घी देती है। ौंका मान भारतमेही नही पर पाश्चात्य देशमेभी है। भारत में तो गौ ो माता कहकर पुकारा जाता है। वैष्णव पुराणोमे तो गौ में ३३ कोटी ेवोका निवास दर्शाया है।

' अगी देव तेतीस कोटी, तिच्या पाठी मारी काठी

लाज ना मना, गाय माय निज देशाची, धाव रक्षणा, अुघडी नेत्र क्षणा '

रघुवश महाकाव्यमें दिलीप महाराज राज, पाट, थाठ को छोडकर नदनी गौकी सेवा करनेको वन वनमें फिरे थे। देवता ने अुनकी परीक्षा रने को सिहका रूप धारण किया। और अुस गय्या को दबोचना चाहता । अुस समय दिलीप महाराज अुस गौकी रक्षाके लिए सिहका सामना रते है। सिह मानव भाषामें कहता है ' तेरे जैसा मूर्ख मैने कभी नही ेखा, जो एक गौके लिए राज, पाट और प्राणोसे हाथ धोता है ' । दिलीप हाराज कहते है, ' मै जिते जी कभी अिस गायको नही खाने दूंगा, तू ुझे छलने आया है, यह मेरी जान है ' ।

श्रीकृष्णचद्र नारायणने तो स्वत गौ-सेवा करके भारतके सामने ादर्श रख दिया। अवतारी पुरुष और त्रिखडके स्वामि होकरभी गौ ेवासे लजाये नही। आधुनिक जनता कार, मोटारको साफ करनेमें गौरव मझती है, पर गौ सेवामे लजाती है। कुत्तेकी सेवा करती है, बिल्लीयोको गल मे बैठाती है, पर गौमाका आदर करना नही चाहती।

अुपरोक्त वक्तव्यमें दुसरोकेही घरके उदाहरण दिये। अब पनाभी घर देखे। " अुपासग दशाग सूत्रमें " दस श्रावकोका लता है। अुसमें किसीके पासमें ४० हजार गायें, किसीके पास ़जार गाये, और किसीके पास ८० हजार गायें थी। आजके ासमें ४-६ गायेंभी मिलना मुष्कील है।

श्रावकोको अपना पूर्व आदर्श याद दिलानेके लिये ... ेसरीजीने गौ रक्षाका अुपदेश दिया, जिससे प्रभावित होकर सर्व

कोपलमें श्रीमहावीर जैन गोशाला के नामसे स्थापना हुयी। य
गाव म्हैसूर राज्यके अतगत रायचुर जिल्हेमें है। इस प्रदेशमें यव
लोगोंकी बहुलता होनसे गौ वशका बहुत न्हास हो रहा था। य
तपोधनीजी सम्यक्त्व प्रचारक महामुनि श्रीजीके प्रभावसे वि
२००० के मागशीष वद ३, ता ३-११-१९४४ के शमदिवस
गोशालाका आरभ हुवा।

वतमानमें उस गोशालामें ६०-७० गायें हैं। उनका प्रबध
अच्छा है। ४०-५ शर दूध निकलता है, जिसस जनता शुद्ध
और घत प्राप्त करती ह। स्वास्थ्य के लिए गायका दूध एक औषध
काम करता ह। आधुनिक जनता डॉक्टरोका हजारोंका बिल भ
है। पर गौ के नामसे सर दद होन लगता ह। गौकी लोग पूजा क
ह पर कुकुम हलदी लगाने मात्रसे कार्य समाप्त नही होता है। स
पूजा तो उनका पालन करनमें ह। आज अहिंसाप्रधान राज्य कहल
है परतु अ का तो रा यन लोप कर डाला ह। सद्गुरुनाथ गौओं
करुण रुदन सुन न सके। और उन्होने गौ रक्षाका उपदेश प्रारभ कि

कसाईके हाथसे गायें छुडाई —

दुसरी श्रीमहावीर जन गोशाला बीड जिलेके अतगत चौ
नामक गांवमें ४ ३ १९५४ को स्थापन की है। इस गोशाला की
बडी विचित्रतास घटो ह।

गुरुदेव बगलेमें विराजमान थे। कुछ श्रावक सेवामें बैठ थे।
समय एक कसाई ११ गौओको लेकर जा रहा था। इसी समय
गौओंने सद्गुरुनाथसे पुकार की। पू श्री गुरुदेवकी कृपादृष्टि
गुरुदेवके हृ यमें करुणाका स्रोत बहन लगा। और श्रावकोंसे
"क्या बठे हो उठो तुम वीरपुत्र हो जाओ गौओके प्राण बचाओ।

उठो भाईयों कमकर कमर तुम धमकी रक्षा करो।
था वीरके पुत्र होकर निरुत्साह क्यों डरो॥

बस फिर क्या था ? कुछ भाई गये और उस कसाईके पाससे गायें छुडाकरके कम्पौंडमें ले आये। पिछेसे कसाई आया और गुरुदेवसे कहने लगा, "मेरी गायें मुझे मिलनी चाहिये।" गुरुदेवने फरमाया "गौओकी कत्ल करना है तो तुम हिंदुस्थानमे नही रह सकते। जावो पाकिस्थानमें। भारतमे रहकर गौहत्या नही कर सकते हो। गौअें भारतकी हैं। तुम्हारा कोई अधिकार नही है। जावो तुम्हे गौअे नही मिल सकती।"

कसाई तहसीलदारके पास जाकर अपनी विती हुयी बातको सुनाता है। तहसीलदार गुरुदेवको वन्दन कर खडे रहते है। परतु उसकी बोलनेकी हिम्मत नही होती। गुरुदेवने पूछा "तुम कौन हो ?" उत्तर मिला 'यह तहसिलदार साहब है'। गुरुदेव बोले "यह क्यो आया है ?" अुत्तर मिला 'गौओके लिये'। चरित्रनायकजीने फरमाया, तुम हिंदु हो या मुस्लिम ? अुसने कहा मै ब्राह्मण हूँ। सद्गुरुनाथने सिह गर्जना की, तुम ब्राह्मण नही, चाडाल हो, जो कसाओीका पक्ष लेकर आये हो। चलो हटो यहाँसे, तुम्हारा कोई काम नही है। बिचारे तहसीलदार चुपचाप वहाँसे रवाना हो गये। कसाओीने जिल्हाध्यक्ष के पासमे रिपोर्ट दी। जिल्हाध्यक्ष भी वहाँपर आये, परतु गुरुदेवका तप तेज देखकर कहने लगे, "अिन महात्माके सामने मैं कुछ नही कर सकता"। और वदन करके अपना रास्ता नापा।

अिसीतरह "जीवा पिपरी" में कसाअी ११ गाये लेकर जा रहा था। गुरुदेवने देखा और फरमाया त्योहि श्रावक जाकर छुडाकर ले आये। परतु २-३ गाये बहुत जोर-जोर से रुदन करने लगी थी। गुरुदेवने फरमाया, अिनके बछडे होना चाहिये। अत अुन्हेभी छुडाया जाय। श्रावक लोग गये और तलाश की तो एक बछडे के पैर बाधकर कसाई अुसे मारनेकी तैयारी मे थे त्योहि श्रावक पहुँचे और अुसे बहुत मुश्कीलसे छुडाया। अुससे पूछा गया कि और भी बछडे होना चाहिये। वह अिनको ट्रकमे डालकर "बासी गावमे" बछडो को लेकर दौड गया। श्रावक वहाँ पहूँचे और तीनो बछडे छुडाके ले आये। गुरुदेवने गौओकी करुण

पुकार सुनकर यह अभिग्रह ले लिया था कि ' जबतक मिनक बछ
आयेंगे तबतक म अन्न ग्रहण नही करूंगा । जब बछड आये त
ग्रहण किया । आचाराग सूत्रमें खेदज्ञ जो पाठ आया
गुरुदेवने साथक कर बतलाया । जो मूक प्राणियोंक खदको ज
खेदज्ञ है ।

जिस तरहसे वहांपर ३० गौयें कसाईके हातसे छडाई । आज
परिवार करिब अस्सीके नजदिक पहूंच गया है, जिसे चौशा
अन्य लोगोंकी सहायतासे तथा कुछ अपने प्रयत्नसे उसे चला रहा

१) औरंगाबादकी गौशाला –

औरंगाबादमें श्री महावीर जन गौशाला की स्थापना
१५–८–१९५९ में हुई थी । सचालक श्री नमीचदजी मिर्थ
सुगदिया कर रहे ह । प्रारभमें नेमीचदजीकी तरफसे एक गा
थी । वतमानमें वहांपर ६५ के नजदीक गायें बछडे आदि मिला

४) जालनमें गौशाला

जालनामें श्री महावीर जन गौशाला नामकी गौशाला है
गौशाला श्री रगलालजी नमीचदजी कोठारी चला रहे हैं ।
गुरुदेवने कई प्राणियोंको अभयदान देकर प्राण बचाय । उन्होंन
महावीर स्वामीके वचनोंको साकार कर बतलाया । हजारों लाख
जीवों बचाया । दाणाण सेट्ठ अभयप्पयाण का पाठ जनता
उपस्थित किया । धन्य है कर्नाटक गजकेसरी तपोधनी महा
धन्य है एस दिव्य ज्योती को जिसन अपने दिव्य प्रकाशसे
आलोकित कर दिया ।

प्रकरण १७ वाँ

सम्यक्त्वका प्रचार

सम्य प्रगांगि अवस्था जाकी दिन दिन रीति गह समताकी
छिन छिन करे सम्यकामाको समकित नाम कहावे ताकी

असमसुखनिधान धाम संविग्नताया ।
भवसुखविमुखत्वोद्दीपने सद्विवेक ।।
नरनरकपशुत्वोच्छेदहेतुर्नराणा ।
शिवसुखतरुबीज शुद्धसम्यक्त्वलाभ ।। १ ।।

सम्यक्त्वके बराबर दुसरा सुखका खजाना नही है। वैराग्यका घर है। नश्वर तथा पौद्गलीक सुखोसे विमुख और सद्विवेकका उद्दीपन करती है। मनुष्यमें, स्त्री, नपुसक वेदका नर्कगति और पशुगतिका छेदन करनेमे मुख्य कारण है। मोक्षके सुखरूपी वृक्षका बीज है। यह सम्यक्त्वका फल है।

सम्यक्त्व और मिथ्यात्व यह दोनो विरोधी तत्त्व है। सम्यक्त्व पोर्णिमाकी रात है तो मिथ्यात्व आमावस्या की। सम्यकत्व-प्रकाशमें शिव-पूरका मार्ग दृष्टी गोचर होता है, तो मिथ्यात्वमें इधर उधरकी ठोकरें खानी पडती है, जिससे अनेक कष्ट उठाने पडते है। सम्यक्त्व आत्माके मैलको धोकर हलका कर देता है, जहाँ मिथ्यात्व आत्माको बोझील बनाकर अधोगतिमें ले जाता है। सम्यक्त्व अमृत है। आत्माको अमर-पद प्राप्त कराता है। मिथ्यात्व विषके सदृश है, जो आत्माको जन्म-मरण के चक्करमें डालता है। पहले हम मिथ्यात्वका स्वरूप समझे।

नीच-देवरतो जीवो मूढ कुगुरुसेवक ।
कुज्ञानतपसा युक्त कुधर्मात् कुगति व्रजेत् ।।

अर्थात नीच मिथ्यात्वि देवके प्रति राग और मूढ, कुगुरुकी सेवा करने-वाला और कुत्सित अज्ञान तपस्या करनेवाला, कुधर्मका आचरण अंगिकार करके कुधर्मका सेवन करनेवाला जीव नर्कमे जाता है। अतः कहा गया है कि मृत्यु पाना अच्छा है, लेकिन मिथ्यात्वका सेवन करके जीवित रहना अच्छा नहीं है। सम्यक्त्व आत्माका सच्चा मित्र है। मिथ्यात्व कट्टर शत्रु है। दस प्रकारके धर्मको अंगिकार करके संपूर्ण दोषोको टालकर भिक्षाचरि करे, किन्तु एक मिथ्यात्वको नही छोडा तो उसका कभी उद्धार नही हो सकता।

सम्यक्त्वका शुद्ध स्वरूप

जीवादि सद्दहण समतं रुवमप्पणो तत्तु ।
दूराऽभिणिवेस विमुक्क णाण सम्मं खु हो दिसदि अन्दी ॥

अर्थात जीव अजीवादि पदार्थोमे श्रद्धा करना तथा आत्माके स्वरूपको समझनाही सम्यक्त्व है। और वस्तु स्वरूपको संशय विपर्यय, अनध्यवसाय अिन तीनों दुरभिनिवेशोंसे रहित होकर श्री जिनेंद्र भगवान-प्रणित शुद्ध जीवादि तत्त्व विषयमें पच्चिस मलोंसे रहित होकर श्रद्धापूर्ण रुचि है। यही सम्यक्त्व है। जसे निश्चय करके यह ऐसाही है।

सम्यक्त्वके २५ मल इस प्रकार है—जसे तीन मूढता आठ मद छह आयतन और शंकादि आठ दोष।

तीन मूढता – १) देव मूढता २) लोक मूढता ३) समय मूढता

देवमूढता – अठराह दोषोंसे रहित जो जिनेंद्र देव है उन्हे छोडकर चंडी मुंडी भवानी भैरु मोवा पूजना देवमूढता कहलाती है।

लोकमूढता – लोगोंकी देखादेखी तीर्थोंमें स्नान करना गौपूछ पकडकर मरना मरते समय मूँहमें गंगाजल डालना। वड आदिका पूजन करना श्राद्ध करना शवकी राखको नदीमें डालना इत्यादि अनेक प्रकारकी है।

समयमूढता – संपूर्ण बाह्य संकल्पोंको त्यागना आत्मभावको छोडकर परभावमे रमण करना समयमूढता कहलाती है।

आठ मद – १) गुणमद २) ज्ञानमद ३) ऐश्वर्यमद ४) बलमद ५) रूपमद ६) कुलमद ७) जातिमद ८) तपमद

छह आयतन – १) मिथ्यादेव २) मिथ्यात्वीके उपासक ३) मिथ्या तप ४) मिथ्या तपस्वि ५) मिथ्या शास्त्र ६) मिथ्या शास्त्री

आठ दोष – (१) सत्यतत्त्वमें शंका करना (२) जिन-प्रणित धर्ममें अस्थिरता (३) विषयकी वांछा (४) शरीर तथा भोगोंमें ममत्व भावना (५) प्रतिकूल परिस्थितीमें तिरस्कार (६) अन्यि धर्मानुराग नही

होना (७) किसीके दोष प्रगट करना (८) स्वत और दूसरेको ज्ञानकी वृद्धी नहीं करने देना।

गौतमादि गणधर प्रभुवीरके पास गये। वे चार वेद और अठारह पुराण तथा मीमासादि समस्त लौकिक शास्त्रोको जानते थे। फिरभी अुनका ज्ञान सम्यग्दर्शनके विना मिथ्या ज्ञान था। परतु ज्योंही प्रभुके दर्शन किये और वाणी श्रवण की, त्योंही दर्शनमोहनीय और चारित्र मोहनीयके क्षयोपक्षमसे सम्यगज्ञान हो गया। ज्ञान होतेही सम्यग् चारित्र ग्रहण किया। और मति, श्रुति, अवधि, मन पर्यायज्ञान और सात ऋद्धियोके धारक गणधर देव हो गये। अत सम्यक्त्व बलसेही आत्मामोक्ष प्राप्त कर सकती है। सम्यक्त्वके विना, विषमिश्रित दूधके समान ज्ञान तपश्चर्यादि क्रिया व्यर्थ है।

सम्यक्त्व के पाच मुख्य भेद

सम्यक्त्व प्राय पाच भेदोमें विभाजित किया जाता है (१) सास्वादन-सम्यक्त्व (२) अुपशम सम्यक्त्व (३) क्षयोपक्षम सम्यक्त्व (४) वेदक सम्यक्त्व (५) क्षायक सम्यक्त्व

सास्वादन सम्यक्त्व – जैसे कोअी व्यक्ति खीर पीकर उठता है और उठतेही अुसे वमन हो जाता है, खीरका स्वाद अुसके लिये कितना अल्पसमय रहता है? अुसी प्रकार सास्वादन सम्यक्त्व छह आवलिकाही रहती है। परतु फिरभी सम्यक्त्वकी महिमा अपरपार है। छह आवलिका मात्रकी सम्यक्त्वसे अर्ध पुद्गल परावर्तन ही ससार बाकी रहता है। कृष्णपक्षीसे शुक्लपक्षी बन जाता है। जैसे किसीके सरपर लाख करोडका ऋण चुकाना है। अुसने सब ऋण चुका दिया हो, सिर्फ एक पैसेका देनाही रहा हो। और अुसका जितना व्याज होता है अुतनाही ससार बाकी रहता है, यह सम्यक्त्व जीवनमें ५ बार आती है।

उपशम सम्यक्त्व – अनतानुबधि, क्रोध, मान, माया, लोभ, सम्यक्त्व-मोहनी, मिथ्यामोहनी, मिश्रमोहनी, इन सात प्रकृतियोको उपशमावे। जैसे अगारेको राखसे दबा देना। उपरसे हाथ लगानेसे हाथ जलेगा नहीं,

परन्तु अंदरसे अग्नि शांत नही हुओ है । तथा गदे जलमें फिटकरी फेरनेसे सारी मिट्टी नीचे बैठ जाती है । और पानी निर्मल हो जाता है । किन्तु ज्योंहि अुसे धक्का लगता है त्योंहि गंदा हो जाता है। अिसी प्रकार सातो प्रकृतिका उपशमन होता है । परन्तु क्षय नही होता। अुसे उपशम सम्यक्त्व कहते है । यह सम्यक्त्व जीवनमें पांच बार आती है । व्यवहार शुद्ध सम्यक्त्वको पालन करनेवाला जीव जघन्य तृतीय भवमें तथा पंदरवे भवम अवश्य मोक्षमें जाता है । एसा पन्नवणा सूत्रमे प्रभु फरमाते है ।

क्षयोपशम सम्यक्त्व – सात प्रकृतियोमसे कुछ अुदयमें आयी हुयी प्रकृतियांका क्षय करे और सत्तामें रही हुयी को अुपशमावे अुसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते है ।

वेदक सम्यक्त्व – वेदक सम्यक्त्व एकही बार आती है । जिसकी स्थिति एक समयकी है । यदि पहिले आयुष्यका बंधन न पड़ा हो तो सात बोलका बंध नही पडेगा । नर्कका आयुष्य भवनपतिका आयुष्य, तिर्यचका आयुष्य वाणव्यंतरका आयुष्य ज्योतिषीका आयुष्य स्त्री वेद और नपुंसक वेद ।

क्षायक सम्यक्त्व – क्षायक सम्यक्त्व आनके बाद कभिभी नही जाती है । यह सम्यक्त्व आत्माको सिधी मोक्षमें ले जाती है। जिससे केवलज्ञान केवलदर्शनकी प्राप्ति होती है । यह सादि अनंत है । जिसका कभी अंत नही होता । और भी पांच भेद है ।

(१) कारक सम्यक्त्व – स्वतः सम्यक्त्वमें दृढ रहना और दूसरोको दृढ रखना

(२) रोचक सम्यक्त्व – रोचक सम्यक्त्व जैसे श्रेणिक महाराजके हृदयमें पूर्णतया सम्यक्त्व रुच गयी थी । देवताने आकर परीक्षा की। फिरभी एक रोम मात्रसभी चलायमान नही हुअ ।

(३) दीपक सम्यक्त्व – जसे दीपक औरोंको प्रकाश प्रदान करता है, पर अपने नीचे अंधेरा रहता है एसही औरोको सम्यक्त्व देता है परंतु खुदका मिथ्यात्व नही छुटता है । अंगार मर्दकाचार्य के समान ।

(४) निसर्ग सम्यक्त्व – जाती-स्मरण-ज्ञानादिसे तथा स्वाभाविकही सम्यक्त्व मोहनीयके क्षयसे तथा क्षयोपशमसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति होती है, उसे निसर्ग सम्यक्त्व कहते हैं।

(५) व्यवहार सम्यक्त्व – व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ भेद हैं। उसमेंसे जानने योग्य को जानना, ग्रहण करने योग्यको ग्रहण करना तथा त्यागने योग्यको त्यागकर शुद्ध तथा व्यवहार सम्यक्त्वका पालन करनेसे आत्मा संसारको परित (परिमित) करती है। व्यवहार सम्यक्त्वका हम पालन करेंगे तब निश्चय सम्यक्त्वपर पहुचेंगे। व्यवहार सम्यक्त्व प्राथमरी है। पहिली किताबको पढे बिना बी ए की उपाधी कैसे हो सकती है? जैसे एकके अंक बिना बिंदीयोंकी कोई किमत नहीं है, वैसे सम्यक्त्वके बिना जप, तपादि क्रिया निस्सार है। अतः ऐसा अमूल्य रत्न प्रदान करनेवाले श्री शुद्ध सम्यक्त्व प्रचारक गुरुदेवने यह कार्य 'खटकाले' नामक गावसे प्रारंभ किया।

'खटकाला' गावमे गुरुदेवको जैन समाजके अंतर्गत जो मिथ्यात्वका कचरा भरा हुवा था वह खटकने लगा। और यह कचरा कैसे दूर किया जाय इसके विषयमें सोचने लगे। क्योंकि मिथ्यात्वने जैन समाजमें ऐसी जड जमा रक्खी थी कि इसे पूर्णतया उखाडना कोई साधारण काम नहीं था। यद्यापि अन्य संतमुनि उपदेश दे रहे थे, सम्यक्त्व की महता भी प्रदर्शित करते थे, पर फिरभी मिथ्यात्वको जडामूलसे उखाडने-वाले संत मुनियोंकी संख्या नहीके बराबर थी।

'शुद्ध सम्यक्त्व प्रचारके लिये सद्गुरुनाथका त्याग'

सम्यक्त्वकी ज्योती जगानेवाले सद्गुरुनाथने सोचा, बिना त्यागके यह कार्य कभीभी सिद्ध नहीं होगा। अतः शुद्ध सम्यक्त्व प्रचारक सद्गुरु-नाथने स्वयने नियम लिया कि, शुद्ध सम्यक्त्वीके घरकाहि असनादि लेना। यदि शुद्ध सम्यक्त्वी न हो तो अन्य तीर्थिकके यहांसि अन्त, पंत, अरस, विरस जैसाभी एषणीय आहार मिले वैसा लेना। अन्यथा पारना नही करना। तपश्चर्या कर लेना, परतु मिथ्यात्विके घरसे आहार आदि नही

लेने थे। कई वक्त सदगुरुनाथके योग्य आहार आदि असनादि प्राप्त नही होता पर दृढवृत्ति अन्यके उद्धारके लिय एसी कठिन प्रतिज्ञाका पालन करते थ। अन्य तीर्थिकके लियेभी दो नियम ले रखे थ। (१) जिसके घरमें तुलसी हो और (२) जो आगनमे छिडकाव डालता हो उनके यहाँका भी आहार नही लेना। यह दोनो चिजे तो हिंदु लोगोंमें इतनी प्रचलित है कि जसे भोजन बनाय बिना एक दिनभी नही चलता एसेहि तुलसीको पानी डाले बिना और आगनमे छिडकाव डाले बिना नही चलता। अत कईबार गुरुदेवको एकान्तर तपमें उणोदरी तपभी करना पडता था। परन्तु गुरुदेवने गाढ सम्यक्त्वका झंडा उठाया था। उसे वे कहरातेहि विचरने लग। त्यागके सामने एसी कौनसी शक्ति है जो नही झुक सकती?

An ounce of practice is worth than twenty thousands of big talks

अर्थात सब बोड उपदेश देनकी बजाय थोडासा करके दिखानाहि अच्छ है। त्यागी महातपस्वी गुरुदेवने मिथ्यात्वको छुडानेके लिये स्वयनहि मिथ्यात्वियोंके यहाँका आहार लेना बद कर दिया। कई बार गुरुदेवको वृद्धावस्थामें उपवासका पारना किये बिनाहि विहार करना पडता था। क्योंकि अमची आत्मा क्या मिथ्यात्व छोड सकती है? मिथ्यात्व नही छोडनेपर सदगुरुनाथके दिलपर किसी प्रकारका असर नही होता था। वे फरमाते भाई अभी मव भ्रमण करना है अत मिथ्यात्व कैसे छूटे? छोडो तुम भ्रम जालको। भाईयो सुख पावोगे। चौसष्ट इन्द्रोके पूज्य महान देवाधिदेवको छोडकर क्यो तुम भिकारी देवोंके पास आते हो।" द्वारा तावीज देनेकाहि मलवाकर फिरवाते थ। वे कहते थे। कम बधनको तोडनेके लिये तो उत्तम मनुष्य जन्म मिला है। परन्तु तुम तो और द्रव्य तथा भाव-बधन बाधते हो। मिथ्यात्व सेवन करनेस महान कर्मका बधन होता है।

सम्यक दर्शनहि सत्य श्रद्धा है

कई बार मिथ्यात्व सेवनमे विनय देखा पडता है। एक जिवनीबाई नामकी बहन थी। वह गुरुदेवके व्याख्यानमे आई। वहाँ बडी बडी

घुमने लगी और रोने लगी। खादी प्रचारक तपस्वी श्री मद्गणनाथने फर्माया, "क्यो रोती हो ? कौन हो ?" तब कहती है, मै 'माईबाबा' हू। 'यहा क्यो आया ?' तब माईबाबा बोला, "मेरे स्थानपर मनोती पूरी करनेके लिये आई। अत मै इनके साथ आगया।" गुरुदेवने फर्माया अच्छा अब चले जाओ। गुरुदेवका वचन सुनतेहि माईबाबा चला जाता है। बादमें वह बहन स्वस्थ होकर कहती है, "गुरुदेव मै मेरे बिमार पतिको लेकर यहाँ आरही थी, तो किसीने माईबाबाके यहां जानेकी सलाह दी और मै चली गई। पतिदेव तो परलोक पहुच गये, और यह बाबा मेरे अगमें आने लगा। लेनेमे देना पडा"।

मिथ्यात्वी देवोका यही स्वभाव है। सम्यक्त्वी देव कभी किसीको कष्ट नही देते। मिथ्या याने झुटा। जिसमें जो गुण नही है, वह उसमें माननाहि मिथ्यात्व है। तथा वस्तुके सपूर्ण गुणोको न मानकर एक गुणको पकडके रहना, अमुक वस्तुमे अमुकहि गुण है, अन्य का खडन करनाभी मिथ्यात्व है। जैसे किसी व्यक्तिने कहा सुवर्ण है। सम्यक् दृष्टि पुछेगा सुवर्ण याने सुदर वर्ण है या कोई धातु है ? तब उत्तर मिला सुदर वर्णवाली धातु है, याने कचन है। कचन है तो क्या डली रूपमें है या आभूषण रूपमें है ? कोई कहे आभूषण रूपमे है। आभूषण तो अनेक प्रकारके होते है। पैरके, हाथके, सिरके, कटीके, अगुलीके इत्यादि। कहाँ पहननेका आभूषण है ? उत्तर मिला कि सिरका। सिरका है तो क्या मुकुट है? या चुडामणी है? या और कोई अन्य? तब कोई कहे, चुडामणी है। याने एक सुवर्ण कहनेसे सम्यग्ज्ञान नही होता। परतु उसका यथातथ्य स्वरूप समझनेके लिये उपरोक्त प्रश्न पूछेगा, तब वस्तुका निर्णय होगा, अन्यथा वह ज्ञान अधुरा रह जाएगा। और अधुरा ज्ञानहि मिथ्या ज्ञान कहलाता है। सोचिए, एकहि चुडामणीमें सोनाभी है, अभूषणत्वभी है, धातुभी है। सुदर वर्णभी है। ऐसे एकहि वस्तुमे अनेक गुण विद्यमान है। पर मिथ्या दृष्टि सिर्फ इतनाहि कहेगा चुडामणी है।

अत कोईभी वस्तको अनेकात दृष्टिसे देखना चाहिये। जैसे आधुनिक

साधारण जनता कोयलेको काला कहती है। पर अनेकात वाणी अुसमें सभी वर्ण मानते है। जैसे अगर कोयलेमें सफेद वर्ण नही होता तो जलनेके बाद अुसकी राखमें सफेदी कहांसे आती ? जब असे अग्निमें डाला जाता है तो अुसमें रक्तवर्ण पिला हारा आदि वर्णभी दिखाई देते है। यदि सिर्फ कालाहि होता तो इन वर्णोंकी उत्पत्ति कभी नहीं हो सकती कारण "न भावो विद्यते"। अत: कोयलेको सिर्फ काला कहनाभी मिथ्या है। सम्यग-दृष्टि अेक वस्तु अनेक तरहसे देखकर सम्यग ज्ञान प्राप्त करता है। अत: उसकी दृष्टि सम्यग् दृष्टि कहलाती है। ससारी आत्मायें समकित बिना अनादि कालसे जन्म मरणके दुःखोंको भोग रहो है। जैसे सूर्योदयसे सब जगह अधकार नाश हो जाता है, एसेहि सम्यक्त्व प्राप्तिके बाद सब तरह के दुःख और दोष नाश हो जाते हैं।

जब सम्यग् दृष्टि छाछ रोटी कभी आदिमें सुखका अनुभव करता है तब मिथ्या दृष्टि विलासी मनुष्य अनेक प्रकारके व्यजन सुस्वादु खाद्य पदार्थ मिलनेपरभी एकाद वस्तु की न्यूनताके कारण क्रोध अरुचि और दुःखको प्राप्त करता है। बस अैसेहि सम्यग दृष्टि जीव नारकोंमेंभी अपने पुराने किये हुये कर्मोंका नाश हो रहा है, आत्मा शुद्ध हो रही है ऐसा समझता है। शरीरका मोह करनेस दुःख होता है। आत्मा अजर अमर है, ज्ञानस्वरूप है ऐसा विचार करके शाति प्राप्त करते है। मिथ्या दृष्टि जीव बारहवे (१२) देवलोकमें महान देव होनेपरभी मिथ्यात्व और अज्ञान के कारण दुसरे देवोकी विशेष संपत्ति देखकर इर्षा और द्वेष तृष्णाके दुःखसे दुःखित होते है। इससे समकित याने सच्ची समझ सच्चा ज्ञान यही सुखका मूल कारण है।

"प्रकृति मोहनी कहूँ जिनागम जोय
जेनो उदय दूर कर्या सम्यग दर्शन होय ॥१॥

सात प्रकृतिका उदय दूर हो जाता है, तब सम्यग् दर्शन उत्पन्न होता है। सम्यग् दर्शन मोक्षका मूल कारण है। और समकित का मूल कारण चार भावनायें है।

हरी गीत –

'सौ प्राणि आ ससारना सन्मित्र मुजव्हाला थजो।
सद्गुणमा आनद मानु, मित्रके वैरी हजो ॥
दु खिया प्रति करुणा अने दुष्मन प्रति मध्यस्थता।
शुभ भावना प्रभुचार आपा, सो-हृदयमें स्थिरता ॥१॥

मैत्रिभावना – ससारके सभी प्राणियोको हार्दिक मित्र समझ कर हित चाहना सबके दु.ख दूर करनेका प्रयत्न करना।

प्रमोद भावना – गुणानुराग भावना। भला करनेवाले मित्र और दुख देनेवाले शत्रु दोनोमें गुण देखना। मित्र गुणोको पुष्ट करता है। शत्रु दोषोसे बचाता है और सत्यमें दृढ रहनेकी प्रेरणा करता है।

करुणा भावना – दु खियोके दु ख दूर करनेके लिये हमेशा तत्पर रहना। सच्चा दु ख अज्ञान, मिथ्यात्व और कुचारित्र है ऐसा समझकर अपना और दुसरोका दुःख दूर करना चाहिये।

माध्यस्थ भावना – सपूर्ण जीवोपर और सपूर्ण सयोगोमें सम-भाव रखना।

सम्यग् दर्शन याने सच्ची दृष्टि। सम्यग् ज्ञान याने सच्चा ज्ञान। मिथ्यात्व याने झुठा ज्ञान।

व्यवहारमें कुदेव, कुगुरु और कुधर्मको सच्चा मानना मिथ्यात्व कहलाता है।

व्यवहारसे सच्चे देव सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, वीतराग देव, गुरु, तत्वके जाननेवाले ज्ञान, दर्शन, चारित्र तथा तपके पालनेवाले। धर्म, अहिंसा तथा विषय-कषायका त्याग।

सम्यक्त्वका प्रकाश अद्वितीय है। श्रमण भगवत महावीर स्वामी उत्तराध्ययनके २८ वे अध्यायमें फरमाते है –

नत्थि चारित समत्त विहूण दसणे उभइयव्व।
समत्त चारिताई जुगव पुव्व वसमत्त ॥१॥
नाद सिणस्स णाण णाण विणान हुतिचरणगुणा।
अगुणिस्स नत्थि मोक्खो नत्थि अमो कखस्स

अर्थात सम्यक्त्व बिना चारित्र प्राप्त नही होता। चारित्रम सम्यक्त्व की भजना रहती है। सम्यक्त्व और चारित्र एक साथ प्राप्त होने। पहले सम्यक्त्व और बादमें चारित्र प्राप्त होता है। सम्यग दर्शन के बिना सम्यग ज्ञान नही होता। सम्यग ज्ञान के बिना चारित्र के गुण प्रगट नही होते। चारित्र के बिना मोक्ष नही मिलता। मोक्ष के बिना निर्वाण प्राप्त नही होता निर्वाण क बिना मानव-जीवन व्यर्थ है। अत सबका मूल सम्यक्त्व है।

दृढ सम्यक्त्वी अपने सम्यक्त्व चिंतामणी रत्नको संभालकर इच्छित फल प्राप्त कर सकता है। वह कभी किसीके छलनमे नही आता। और न कभी किसीको छलता है। जैसे की मिथ्यात्वी स्वयंभी छला जाता है और दुसरोंकोभी छलता है। उदाहरणार्थ एक चोर गावमें चोरी करने जाता है। जाते समय रास्तेमें भरूजीका स्थान देखकर बोलवा करता है कि यदि मेरा कार्य सिद्ध हो जायगा तो दो नारियल चढाऊंगा"। कार्य सिद्ध होनेके बाद विचार करता है नारियल चढाऊंगा तो- आठदस आने खचने पडेंगे। अत पासमें बल का झाड रहता है। वहांसे दो बल-फल लाकर भरूजीसे कहता है- भरूजी महाराज गरिब निवाज बोल्यो दो लायो दो वे सुखा अे लिला वे नारियल और यह बिल्ला ।

इसतरह सिफारीश करके भेरूजीको छल लेता है। भेरूजी भी कुछ नही कहते। मिथ्यात्वी आत्मा छल कपटसे भरी रहती है दूसरोंको ठगाकर आनंद मानती है। वहां सम्यक्त्वी सरल स्वभावके होते है। वे न दुसरेको छलते न दुसरोंको दुःख देते ह। वे सबका हित चाहते है।

व्यवहार समकितसे निश्चय समकित प्राप्त होता है। सम्यक्त्वका पांच बोलोंसे नाश होता है- १) ज्ञानका अभिमान करनसे २) तत्त्व जाननेमें मंद रुचि रखनसे ३) असत्य तथा निर्दय वचन बोलनसे ४) क्रोधके परिणाम रखनसे और ५) आलस्य प्रमाद करनसे।

प्रकरण १८ वाँ

मिथ्यात्वका लक्षण

(तर्ज राधेश्याम)

"एकात पक्षी और सत्यलोपी और यथार्थ को विपरीत माने।
सशयवान अजान कृष्णपक्षी मिथ्यात्व पच यही जाने" ।। १ ।।

मिथ्यात्वी एकात को मनानेवाला सत्यका अपलाप करनेवाला यथार्थ वस्तुको विपरीत समझनेवाला होता है। जैसे बादामका हलवा मीठा मधुर होता है परतु ज्वरग्रस्त व्यक्तिको कडवा लगता है। शका करनेवाला कृष्णपक्षी उर्दकी राशीके सदृश्य होता है।

" मीमासा कर्मकाल, वैपेशिक नय प्रमाण बताता है।
पुरुषार्थ योग और साख्य प्रकृति वेदात ब्रम्ह जतलाता है।।"

मीमासा दर्शन कर्मको प्रधानता देकर अन्य कालादिका खडन करता है। वैषेशिक दर्शन केवल कालको मुख्य मानकर अन्य कर्म पुरुषार्थादिका अपलाप करता है। न्यायदर्शन सिर्फ प्रमाण की वीणा बजाता रहता है। अन्य कर्म प्रकृत्यादि का निरास करता है। योग-दर्शन पुरुषार्थके सिवाय किसीकोभी नही मानता। साख्यदर्शन प्रकृतिको प्राधान्य देकर क्रिया-काडका अुन्मूलन करता है। वेदात-दर्शन ब्रम्हको सबका केद्रस्थान मान-कर अन्यका प्रलाप करता है। अतः यह छहहि दर्शन एकातरपक्षी होनेसे मिथ्या कहलाते है। अिनमें औशिक सत्य है। पूर्ण सत्य नही मिलता है। अिसलिये सत्यका लोप हो जाता है। यथार्थ ज्ञानभी नही हो पाता। शका बनी रहती है। अत कृष्णपक्षी भी है।

दोनोर्मे अतर – (राधेश्याम)

सम्यग् दृष्टिको सम्यक्त्व विषम दृष्टिको विपम लखाता है।
जैसा चस्मा हो आँखोपर वैसाहि रग दिखाता है।। १ ।।

सम्यग् दृष्टिको सम्यग् दिखाई देता है, विषम दृष्टिको विषम। जैसे पिलीयाके रोगवाले को सारी वस्तुअें पिलीहि दिखाई देती है, अैसे मिथ्या

दृष्टिको सारी वस्तुअें विपरीत दिखाई देती है। जसी दृष्टि वसी सृष्टि । वस्तु वही रहती है परंतु जसी दृष्टि होती है वैसाहि दिखाई देता है। नन्दी सूत्रमें प्रभुने फरमाया —

' एयाइ मिच्छत्त परिग्गहियाइ मिच्छासुयं एयाई
चेवसम दिट्ठिस्स सम्मत्त परिग्गहियाई सम्मसुय ।

सम्यग् दृष्टि मिथ्याश्रुत पढता है तो वे अुसके लिये सम्यग्श्रुत बन जाते है क्योंकि अुसकी सम्यग् दृष्टि वस्तुका यथातथ्य स्वरूप प्रदर्शित करती है। मिथ्यादृष्टि सम्यग्श्रुत पढता है परंतु अुसके लिये वे मिथ्या श्रुत हो जाते है। क्योंकि अुसकि मिथ्यादृष्टि वस्तुका यथातथ्य स्वरूप नही देखन देती। अत जिसकी दृष्टि साफ असको सृष्टिभी साफ दिखाई देती ह।

सम्यग् दर्शनसे सम्यग् ज्ञान होता है। सम्यग् ज्ञानके बिना निश्चित ध्येय प्राप्त कर नही सकते जसे गावका नाम मालुम है पर जबतक रास्तेका यथार्थ ज्ञान नही होता तबतक अुस गाव को प्राप्त करनमें कई दिक्कतें अुठानी पडती है। असेहि मानव जीवनका लक्ष्य मोक्ष है। मोक्षके मार्ग तीन प्रकार के है। पूज्यपाद अुमास्वाती महाराजने तत्वार्थ सूत्रमें फरमाया है —

सम्यग दर्शन सम्यग् ज्ञान और सम्यग् चारित्र ये तीनों मोक्षके मार्ग है। सद्गुरुनाथने मिथ्यात्वको जन समाजसे निकालनके लिये जो त्याग किया था वह अद्वितीय था। मिथ्यात्व का त्याग कराते समय सहकुटुम्ब त्याग कराते थ। साथमें देवी देवता फोटो तावीज सिंहासन छत्र फूल आदि सारी वस्तुअें लाकर गौशालामें दी जाती थी। ' न रहे बांस न बजगी बांसुरी । अबकी देवी देवता आदि जो मिथ्यात्वके साधनहि नही रहते तो मिथ्यात्व व्यक्तिमें पुन: पनपहि कसे सकता था ?

गुरुदेव के पाटके नीचे भव भवानी महादेव की पिंड हनुमानजी साईबाबा आदि सभी देवी देवताके फोटो मूर्तियाँ जब पडी रहती थी तब सम्यक्त्व ज्योति जगाने वाले गुरुदेव विनोद करते हुये फरमाते ' देखो

सुमति, तीन गुप्ति यह तेरह बातें! 'स्थानकवासी,' सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन, सम्यग् चारित्र ये आत्माका स्थान है। जो इनमें स्थिर रहता है, वही स्थानकवासी है। अतः मैं स्थानकवासीभी हूँ। 'संवेगी' याने ससारमें उदासीन भाव रखना, जो संसारिक पदार्थोंसे अुदासीन भाव रखता है, अुसे संवेगी कहते है। अत मैं संवेगी हूँ। 'दिगंबर' — दिशा अम्बर वस्त्र यस्य स दिगंबर। याने नग्न भाव। मनको नग्न बनावो अर्थात राग द्वेषरूपी वस्त्रसे जिसकी आत्मा मुक्त है, वही दिगंबर है"।

गुरुदेव सब जैन भाईयोंको सम्यक्त्व देते थे। वे किसीका खंडन नही करते थे। वे मूर्ति पूजा को — जिन प्रतिमा के सिवाय अन्य देवीदेव पूजनेका त्याग कराते थे। तेरह पंथीयोंकोभी देते थे। आचार्य तुलसीभी इस कार्यकी अनुमोदना करते है। और कहते है, "धन्य है अैसे सम्यक्त्व प्रचारकोंको"। श्रमण संघीय आचार्य आत्मारामजी महाराज फरमाते थे, "मिथ्यात्वरूपी दरिद्रतासे छुटकारा पाना हो तो जाईये खादी प्रचारक तपस्वी गणेशमलजी महाराजके पास। शुद्ध सम्यक्त्व प्रचारके लिये गुरुदेव वृद्धावस्थामेंभी कमर कसकर मिथ्यात्वका कचरा निकालनेमें जुट पडे थे। हजारोंको समकित रत्न देकर निहाल कर दिया था। ७८ वर्षकी अवस्थामें, अिस महान कार्यका सूत्रपात किया था। चार पाँच वर्षमें कअी गावके गाव सम्यक्त्वी बना दिये थे। धन्य है अैसी महान आत्माको! वे शरीरसे वृद्ध थे, परन्तु मन उत्साहसे पूर्ण भरा रहता था।

कभी भोले प्राणी कहते कि "गृहस्थको ऐसी सम्यक्त्व करनेसे कैसे चलेगा ? पहले तो असे साधु कभी देखे नही, पर॰ तपस्वीके दर्शन करतेहि सम्यक्त्व ग्रहण करनेकी भावना अपन- जाती थी। अुपरोक्त वचन कहने वाले गुरुदेव के चरणोंमें अर्जी थे कि, हमें सम्यक्त्व रत्न प्रदान कीजिए। गुरुदेव पहले अुसे प्र कठिनाईयोंकी मर्यादा बतलाते थे। कहते थे देख तुझे सब मि देवोंको त्यागना होगा। अुनकी प्रसादी तक भी नही खाना व्यावहारिक मिथ्यात्विके त्योहार नही करना होगा किसीको न- फोडना बोलर्वा करना आदि छोडना पडगा सम्यक्त्वके सब नियम- होंगे पालनकी तुम्हारी हिम्मत हो तो सम्यक्त्व लेना वर्ना देखादेख करना। अिस तरहसे अुसको समझा बुझाकर सम्यक्त्व देत सम्यक्त्वके प्रभावसे कई व्यक्तियोंकी भावना इतनी पवित्र बन जात कि वे दोषोसे अपने आप डरने लगते थे। उदाहरणके तौरपर घटना देखिय –

विदर्भमें दसापूर नामक ग्राममे मिश्रीलालजी नामक सद्गृहस्थ रहते है। अन्होंने अपनी लडकीकी सगाई कर र॰ गुप्त रीतिसे लिय थ। किसीको पता तक नही था। अब लडकीकी जैन पद्धतिसे शादी होने लगी अुस समय दिलके भाव अपने आप पलट गये। कि 'ओहोहो! मै सम्यक्त्वी गया फिरभी मैंने लडकी के पैसे लिये यह ठीक नही किया। चाहे कु हो म दाल रोटी खिलाकर बरातियों को रवाना कर दूंगा सम्यक्त्वी बनकर पैसे लेना अन्याय है। अुसी समय अुन्होंने बरातीयोंके सामने पैसे लौटानेकी प्रतिज्ञा की। और कहा मने रुपिये शादीके लिए लिये थे। मुझे गुरुदेवने इस पापसे बचा लिया मेरा दिल पुकार उठा तू सम्यक्त्वी होकर लडकीके पैसे लेता बरातीयोंको लड्डू मत जिमा। परतु जनता के सन्मुख सम्यक्त्व प्र का आदर्श उपस्थित कर। अत यह रुपये लिये तो गुप्त रीतिसे, प अब म सब पंचोंकी साक्षीसे लौटा देता हू। यह सारा प्रभाव सद्गुरु

का ही है। अुन्होनेही सम्यक्त्व देकर कृतार्थ कर दिया है। अैसे कअी उदाहरण मिलेंगे। सम्यक्त्व ग्रहण करनेके वाद कई व्यक्तियोकी द्रव्य-दरिद्रता दूर हुअी है। सम्यक्त्व की ज्योतिका प्रकाश हृदयको अलोकित कर देता है।

गुरुदेवका त्याग, तप पर अधिक जोर था। जिस किसीसे यही कहते "पुद्‌गलोसे मोह उतारो, त्याग सिखो। त्यागके विना मानव जीवनमें कुछ नही है। त्यागका मूल सम्यक्त्व है। यही सम्यक्त्व पानेका अवसर है। वादमे अन्य गतियोमे नही मिलेगी, अत ले लो"। सम्यक्त्वकी बिगुल अुन्होने अैसी वजायी कि, जिधर पधारते उधर जनता कोसोसे देवीदेवता ला लाकर वहाँ रख देती, और गुरुदेवसे सम्यक्त्वरूपी रत्न ले लेती। धन्य है अुनके प्रभावको, अुनकी वाणीको, अुनके अतिशयको और अुनके महान प्रयत्नोको।

प्रकरण १९ वाँ

सद्‌गुरुनाथकी सभा

सद्‌गुरुनाथकी सभा दर्शनीय थी। धर्मरूपी सरोवर के नजदीक हंसहि बैठे हो। सब व्यक्ति खादीके पवित्र वस्त्र पहने हुये, सामायिक व्रत लेकर बैठते थे। मुहपत्तीके बिना तो वहाँ कोअीभी प्रवेश नही कर पाता था। जिधर सभामें दृष्टि डालो सबके मुखपर महावीर का शुभ्र पट्टा चमकता था। मानो कर्मरूपी शत्रुओपर विजय पानेके लिये महावीर के सिपाहीयोकी सेना बैठी है। सब लाईनसे बैठे बडेहि सुदर लगते थे। देखतेहि मन मुग्ध हो जाता था। सबके पास पुंजनी, आसन, माला आदि धर्मके सभी साधन होना आवश्यक है। यदि कोई साधनकी कमी होती तो अुसी समय "श्री जैन महावीर खादी भाडार" से दिया जाता था। वहाँपर कई व्यक्तीयोने मुहपत्ती बाँधना सिखा था। जैनी तो क्या, परतु

अजैन लोग भी मुहपत्ती बांधना सीख गये थे । आजभी कई जैनी असे है जिनको मुहपत्ती बांधना भी नही आता है । गुरुदेवकी सभामें जिसका प्रवेश होगया वह महावीर का पट्टा लगाना सीखहि गया था ।

गुरुदेव की सभामें अलौकिक और अनुपम छटा झलकती थी । सभा के बीचमें गौर वर्ण कृष देह जाड खद्दर के वस्त्र धारण किय हुय सम्यक्त्व और तपका तेज फलाते हुये देदिप्यमान सूर्य के सदृश सदगुरु-नाथ सुशोभित होते थे ।

जहा ससिको मुइ जोग जुत्तो नक्खत्त तारागण परि वुडोप्पा ।
खे सोहइ निमले अ भ मुक्के एव गणी सोहई भिक्खुमज्झ ॥१॥

अर्थात जसे चद्रमा नक्षत्रोसे और ताराओसे घिरा हुवा बद्लोंसे रहित निमल आकाशमें शोभित होता है, असे सद्गुरुनाथ सभामें सुशोभित होते थे ।

खद्दरप्रेमी सद्गुरुनाथ जब पाटपर बठकर सिंहगर्जना करते अस समय श्रोताजन मग्न हो जाते थ । सद्गुरुनाथ स्पष्ट बोलनेमें जरा भी नही हिचकिचाते थे । जो बात होती वह खरी–खरी सुना देते थे । वे सादगी प्रिय बहुत थे । कोई बहन अधिक आभूषणोंसे लदकर आती तो विनोद करते हुये सद्गुरुनाथ फरमाते क्या यहां गणेशके ब्याहमें आई है ? मलिन वस्त्र पहन हुये व्यक्ति का तो प्रवेश भी नही हो सकता था । व्याख्यान में शास्त्रवाही वाचन अधिक तौरपर किया जाता था । नीति और रीति की शिक्षा देते थे । त्याग और तपका महत्व जैना धमका महात्म्य बताकर जनताके दिलमें दृढता उत्पन्न करते थ । सद्गुरुनाथ ८३ वर्षकी अवस्थामें व्याख्यान के समय तो बडी जोशपूर्वक वीर वाणीका डका बजाते थे । सद्गुरुनाथ की महिमा अपरम्पार थी जिनके गुर्णोका सपूर्णतया वर्णन करना मान स्वर्णपुरी (लका) क सामने एक मट्टिका बतलाना है ।

प्रकरण २० वाँ

सद्गुरुनाथकी दिनचर्या

जा जा वच्चई रय णीनसा पडिनियत्तइ
अहम्म कुण माणस्स अफलाजति राइओ ॥१॥
जा जा वच्चई रयणी नसा पडिनियत्तई
धम्म कुण माणस्स सफला हवई राईओ ॥२॥

श्रमण भगवत महावीर स्वामी उत्तराध्ययनके १४ वे अध्ययनमें फरमाते है "हे भव्य प्राणियो ! जो रात्रियाँ बित जाती है वह लौटकर नही आ सकती । किंतु जो साधारण लोक पाप करते है, उनकी रात्रियाँ व्यर्थ जाती है । और धर्म करनेवाले व्यक्तियोकी रात्रीयाँ सफल हो जाती है ।"

मानवका आयुष्य तो नदीके पूरके समान है । जो जल नदीका चला जाता है, वह वापस पलटकर नही आता, ऐसेहि मनुष्यकी वीती हुयी उम्र पलटकर वापस नही आ सकती ।

A Wonderful stream is the river time
As it runs through the realm of tears with faultless rhythm and musical rhyme
And broader sweep and a surge sublime
As it blend with the ocean of years

समयरूपी नदीका एक आश्चर्यकारक नाला है । मानो वह आसुओके राज्यमेंसे बहता है । वह दोपोसे रहित ध्वनि और ताल मिलाता हुवा गायन करता है । और उठती हुयी उँची लहरोसे किनारोको साफ करता है । फिर मानो वर्षोके समूहरूपी समुद्रमें मिल जाता है । वह नाला लौटकर नही आ सकता । अत एक सस्कृत कविने कहा है –

"अवध्य दिवस कुर्यात् दानाध्ययन जापतो" ।

अर्थात दिनको व्यर्थ मत गमावो । दान अध्ययन तथा जपसे सार्थक करो ।

महापुरुषोंका प्रत्येक क्षण सार्थक होता है। वे परोपकार तथा आत्मकल्याणमें सावधान रहते हैं। चरित्रनायक श्री सद्गुरुनाथ एक मिनटका भी प्रमाद करना नहीं चाहते थे। उनकी सारी दिनचर्या बंधी हुयी है। प्रात काल बराबर ३ बजनेही शय्याको छोड देते थे। स्वाध्याय ध्यान और प्रतिक्रमण करते थे। सूर्योदय होतेहि प्रार्थना शुरू हो जाती थी। श्रावकलोग प्रार्थना करते उस समयमें गुरुदेव थोकडोंका पुनरावर्तन करते थे। बादमें बाहर भूमिका पधारते थे। वापीस पधारतेहि स्वाध्यायमें लीन हो जाते थे। स्वाध्याय के बाद यदि पारणका दिन होता तो पारणेके लिये निकलते। यदि उपवास होता तो स्वाध्यायहि करते रहते थ। ९ बज स्वाध्याय पूर्ण करके फिर व्याख्यान फरमाते थे। १०॥ बजतक व्याख्यान फरमाकर बादमें फिर स्वाध्यायमें लग जाते थे। तथा भिक्षाचरिको जाना होगा उस दिन भिक्षाचरीको पधारते थे। ११॥ से १२॥ तक ध्यान करते थे। १२॥ से फिर स्वाध्यायमें लग जाते थ। २ बजतक स्वाध्यायमें लीन रहते थे। २ बजके दस मिनटतक शारिरीक कार्यके लिये तथा थोडासा जलका सेवन करनेके लिय उठते थे। फिर स्वाध्यायमें मग्न हो जाते थे। तीन बजेतक स्वाध्याय करते थे। तीन बज बाद प्रतिलेखना करते थ। प्रतिलेखनाके बाद फिर ध्यान करते थे। दिनभर स्वाध्याय तपम लग रहते थे। प्रतिक्रमण होनेके बाद चतुर्विंशती स्तवन और थोकडोंका पुनरावर्तन करके प्रहर रात जातेही द्रव्य निद्रामें मग्न हो जाते थ। भावसे तो वे हमेशा जागृतही थे। इस तरहसे उनका दिनभरका कार्य बधा हुवा था। चरित्रनायकजीको व्यर्थ गपसप तो बिलकुल पसंद नही आती थी।

स्वाध्यायकी ध्वनि उनके श्वास-प्रश्वाससे निकलती रहती थी। ४५ आगम उनके स्वहस्तलिखित थ। वे उनका आदिसे अंत तक स्वाध्याय करते रहते थ। ज्ञानकी पिपासा तो अनुपम थी। वृद्ध अवस्थामेंभी रटनेका काय करते थ। ५६३ जिवोंकी मार्गणा २४३ मध्य लोकके बोल ११५ नीचे लोकके जीवोंकी मार्गणा उन्होंने कठस्थ की थी। उन्हें ज्ञान चर्चामें बहुत आनन्द आता था। ज्ञानचर्चा करनवालेपर बहुत खुश होते थे।

दिनमें कभीभी शयन नही करते थे । चाहे उपवास हो चाहे पारणा हो । दिनभर हातमें पन्ने लिए रहते थे । दुवला पतला शरीर, चमकता हुवा भालप्रदेश, हातमें पन्ने लिए स्वाध्याय करते हुये ऐसे सुशोभित होते थे मानो कोई कलाकार चित्र निकाल रहा हो । आत्मदर्शनमें तत्पर रहते थे। महामुनि कथानायकजी मार्गमे चलते समय जैसी भी जगह मिल जाती उसीमें ठहर जाते थे । कभी जगहका अभाव होता तो वृक्षके नीचे तथा सिमेंटकी वनी हुयी कोठीयोमे भी रात निकाल देते थे। परतु कभीभी दिलमें नाराजी दिखाइ नही देती थी । उनकी दिनचर्यामे साधारण व्यक्तिको प्रमाद परिहार की शिक्षा प्राप्त होती है । प्रमादसे वे काले नागकी तरह डरते थे ।

आलस्य हि मनुष्याणा, शरीरस्थो महारिपु ।
नास्त्युद्यमसमो वघु, कुर्वाणो नावसीदति ॥

आलस्य मनुष्यका शरीरस्थ महान शत्रु है । और उद्यमके समान दुसरा भाई नही है जो कार्य करता दिखायी नही देता है, और दुख को प्राप्त नहीं होता है । दशवैकालिक सूत्रके चौथे अध्ययनमें वताया है –

" सुह सायगस्स समणस्स साया उलगस्स निगामसा इस्स ।
उच्छोलणा पहोयस्स दुल्लहा सुगइ तारिसगस्स ॥

अर्थात सुख और साता चाहनेवाले भिक्षुकको तथा साताके लिए आकुल रहनेवालेको और विनाकारणही सोये रहनेवालेको, धोनेधानेमें लगे रहनेवाले भिक्षुकको सुगति दुर्लभ है ।

' तपोगुण पहाणस्स अुज्जुमअी खति सयम रियस्स ।
परिसह जिण तस्स सुल्लहा सुगअी तारिगस्सा ' ॥१॥

अर्थात प्रधान तपोगुणमें तत्पर रहनेवाले भिक्षुकको सरल स्वभाव-वाले क्षमा और सयममे लगे हुये को, परिसहको जितनेवाले भिक्षुकको सुगति सुल्लभ है । अत अैसे महामुनिको क्यो नही अच्छी गति प्राप्त हो?

ारंभ दी थी। आपके सरल हृदयसे प्रस्फुटित होनेवाली वाणीसे जनता ष्णके बाँसुरीके मधुर ध्वनिके समान आकर्षित होती थी। श्रोता समुाय आपके मुखारविंदसे निकली हुयी आगम वाणीसे वैराग्य एव त्यागके समें आकंठ मग्न होकर महान आनंदका अनुभव किया करते थे। कई पुण्यात्माऐं तत्कालहि विविध प्रकारके त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किया करती थी।

आपकी व्याख्यान शैली सभी जातिवालोके लिए और सभी धर्मवालोके लिए समान रूपसे हितकारणी थी। हिंदी, गुजराथी, मराठी, प्राकृत, सस्कृत और कन्नड आदि भाषाके ज्ञाता थे। व्याख्यान आप हिंदी, गुजराथी, मराठी आदि भाषामें फरमाते थे। अहिंसा, सत्य, परोपकार, आत्मवाद, कर्मवाद, सम्यक्त्व, तप-नीति, व्यवहार-शुद्धि आदि आपके व्याख्यानके प्रमुख अग थे।

आपका विहार क्षेत्र बहुत विशाल है। नासीक, बम्बई, हैद्राबाद (दक्षिण), जालना, जामखेड, कुकनूर, रायचुर, बगलोर, घोडनदी, महाराष्ट्र, कर्नाटक, बरार, मराठवाडा और खानदेश आदि आपके विशेष विहार और प्रचारके क्षेत्र रहे है। कर्नाटक प्रात तो आपकाही खोला हुआ क्षेत्र है। अिसी कारणसे आपको, जनताने, 'कर्नाटक गजकेसरी' के पदसे विभूषित किया था। निम्नलिखित स्थानोमें आपने चातुर्मास किये थे — चातुर्मासकी कुल सख्या ४८ है।

(तर्ज क्रोधको तजो जन।)

सूनो सब धरकर ध्यान होजी, सब सुनो धरकर ध्यान,
गुरुवर के गुण गाते है ॥

ाम है शहर भीलाडा, मरुधर देश दरम्याना
कुल "पुनम" तात है "धूली" मातके लाल ॥
ोके खाण, जिनको शीष नमाते है ॥सुनो० ॥१॥

जिन्होंने प्रत्येक क्षणको सफल बनाया था। स्वाध्याय और ध्यानके बगिचेमें रमण किया था।

' As idle as painted ship,
Upon a painted ocean

आलस्य चित्र समुद्रपर चित्रित की हुयी जहाजके समान है। अर्थात चित्रकी जहाजसे समुद्रपार नही हो सकता। एसेही आलसी मनुष्य कुछभी कार्य सिद्ध नही कर सकता।

प्रकरण २१ वाँ

प्रचार कार्य और क्षेत्र

जिन शासन सुंदर रत्नोंकी खान है। जिस खानके रत्न साधु भगवत है। अरिहंत भगवतभी साधुहि है। और सिद्ध पूर्व अवस्थामें साधुहि शासनके सिरताज आचार्य पुंगव तथा आगम समुद्र का थाह लेनेवाले अुपाध्याय पाठकवरभी साधुहि है। भारतीय संस्कृतिमें संतोंका सर्वोपरि-स्थान रहा है। अुन्होंने जीवन के सभी क्षेत्रोंका अपने चिंतन के प्रकाशसे अलोकित किया है। संत भारतीय संस्कृतिके प्रहरी है। हम प्रत्येक युगमें संतको अपने कार्यमें व्यस्त देखते है। हम देखते है कि वे अपनी चितामें नही घुल रहे है बल्कि दुसरोंके दुःख को देखकर आंसु बहा रहे है।

अुनका प्रवचन उपदेश जन रंजनके लिये नही होता था। प्रतिष्ठा एवं यश तथा मानपत्र या अभिनंदन पत्र के पुलिंदे इकठ्ठ करनेके लिये नही होता था। अुनका अुपदेश होता था केवल समस्त प्राणियोंके हित के लिये, अुनकी रक्षाके लिये, दयाके लिए।

चरित्र-नायकजीने अपना जीवन अगरबत्तीके समान बनाया था। जैसे अगरबत्ती जलकर दूसरोंको सुगंध देती है। बस एसेहि स्पष्टोपदेशक सद्गुरुनायक स्वयं देश-देशमें परिभ्रमण करके जनताको सदुपदेशकी

सौरभ दी थी। आपके सरल हृदयसे प्रस्फुटित होनेवाली वाणीसे जनता कृष्णके बाँसुरीके मधुर ध्वनिके समान आकर्षित होती थी। श्रोता समुदाय आपके मुखारविंदसे निकली हुयी आगम वाणीसे वैराग्य एव त्यागके रसमें आकठ मग्न होकर महान आनदका अनुभव किया करते थे। कई पुण्यात्मायें तत्कालहि विविध प्रकारके त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किया करती थी।

आपकी व्याख्यान शैली सभी जातिवालोके लिए और सभी धर्मवालोके लिए समान रूपसे हितकारणी थी। हिंदी, गुजराथी, मराठी, प्राकृत, सस्कृत और कन्नड आदि भाषाके ज्ञाता थे। व्याख्यान आप हिंदी, गुजराथी, मराठी आदि भाषामे फरमाते थे। अहिंसा, सत्य, परोपकार, आत्मवाद, कर्मवाद, सम्यक्त्व, तप-नीति, व्यवहार-शुद्धि आदि आपके व्याख्यानके प्रमुख अग थे।

आपका विहार क्षेत्र बहुत विशाल है। नासीक, बम्बई, हैद्राबाद (दक्षिण), जालना, जामखेड, कुकनूर, रायचुर, बगलोर, घोडनदी, महाराष्ट्र, कर्नाटक, वरार, मराठवाडा और खानदेश आदि आपके विशेष विहार और प्रचारके क्षेत्र रहे है। कर्नाटक प्रात तो आपकाही खोला हुआ क्षेत्र है। असी कारणसे आपको, जनताने, 'कर्नाटक गजकेसरी' के पदसे विभूषित किया था। निम्नलिखित स्थानोमें आपने चातुर्मास किये थे — चातुर्मासकी कुल सख्या ४८ हैं।

(तर्ज क्रोधको तजो जन।)

सुनो सब धरकर ध्यान होजी, सब सुनो धरकर ध्यान,
गुरुवर के गुण गाते है॥

जन्मभूमि है शहर भीलाडा, मरुधर देश दरम्याना
ललवाणी कुल "पुनम" तात है "धूली" मातके लाल॥
जन्मे गुण रत्नोकी खाण, जिनको शीष नमाते है॥सुनो०॥१॥

बत्तीस सौ छत्तीस शुद्ध कार्तिक षष्ठी वार बुधवार ।
चौथ याम चार बजको लिया गुरु अवतार ।
गुफासे सिंह समान दुनियामें दरसाते है ॥सुनो० ॥२॥
शिशु क्रीडा कर तरुणपनमें मारी जगको लात ॥
जान लिया सब सार जगका संयम से चित लात ॥
धन्य धन्य तातरु मात असे पुत्र रत्न प्रगटाते है ॥ सुनो० ॥३॥
मिगसर सुदि नवमी और रविवार नगर सुलमें दीक्षाधारी ।
प्रमराज गुरु पास स्वपर का करने उद्धार
ये इनकी दृष्टी है ॥ सुनो० ॥४॥

दीक्षा पिता श्री खेमचंदजी समकु बाई मात ।
जात बाफणा नगर सूलक लिया धमका लाभ ।
उन्होको है धन्यवाद सुकृत लाभ कमाते है ॥ सुनो० ॥ ५ ॥
चातुर्मासकी कहु हिस्टरी नासिक रास्ता आष्टी जान
' सातारा ' औरगाबाद और घोडनदी पहिचान ।
सप्तम पुन सातारा अष्टम चिंचवड दरसाते है ॥ सुनो० ॥६॥
' बम्बई लणार अमरावती जालना हिंगणघाट ।
पुन जालना खड कुप्पल बेंगलर किया उपगार ।
अठारवां नासिक धार गुरुक्षत्र उजलाते है ॥ सुनो ॥७॥
खामगांव और जालना धरोडा सिकद्राबाद सुजान ।
रायचूर बेंगलर घोडनदी, नासीक हिंगणघाट ।
पुन सिकद्राबाद लातूर को दरसाते है ॥ सुनो ॥८॥
जालना कुप्पल आलसीकेरी कुकनूर परली जान
कुरूड वाडी जामखेड टेंभुर्णी बारशी जालना गणखान ।
मनमाड वजापूर धार मालेगाव दिपाते है ॥ सुनो ॥९॥
चवालीसवां पुन चिंचवड कभी जीवोको तारे मिथ्यात्व छुडाते ।
मुंहपत्ती बधाते करते कभी सुधारे असे गुरु गुणवान पुण्योदयसे
पाते उनको प्रणाम चरणोंमें शीश झुकाते है ॥ सुनो ॥१०॥

चिचवड , गगाखेड ; परभणी , छयालिसवाँ औरगाबाद पधारे ।
चौसाला , अडतालीसवाँ नान्देड किया महान उपगार
ऐंसे गुरु पुण्योदयसे पाते हैं करते अुनको प्रणाम
चरणोमे शीष झुकाते है ।। सुनो० ।।११।।

प्र क र ण २२ वाँ

खादी – प्रचार

(तर्जः रखिया बधाओ भैय्या ।)

क्योकर भुलाई जावे, दादीसी खादीको ।। टेर ।।

सौम्य है तनपर छावे , बधुत्व भाव बढावे,
समताका राज लावे ।। दादी० ।।

इज्जत रहती तनकी , थोडे दामोमे सबकी ;
फिरभी क्यो न अपनावे ।। दादी० ।।

दिखनेमें मोटी मोटी, क्रोडोकी इसमें रोटी,
पहनेसे, सो सुघड कहावे ।। दादी० ।।

गर्मीमे थडी रहती, सर्दीमें गर्म रहती,
वर्षामें बहुत सुहावे ।। दादी० ।।

प्रगति धीरज आवे ; दासत्व श्री का जावे
तोपसी शक्ति रखावे ।। दादी० ।।

खादी प्रचारके लिये उन्होने भरसक प्रयत्न किया था । क्योकि खादी प्रचारके पिछे, क्या तत्व था ? वह जाडी बुद्धीसे समझना कठिन था । परतु खादीसे क्या क्या लाभ होते है ? विदेशी वस्तुसे क्या नुकसान है, अिसका हम थोडासा विचार करेंगे ।

जीवनमें तीन वस्तुअें आवश्यक है- (१) भोजन (२) वस्त्र (३) रहनेको स्थान । उसमें दूसरा नबर वस्त्र का आता है। वस्त्र क्यों

पहना जाता है? यदि हम विचार करे तो मुख्य तीन कारण दिखाई देते है। शरीरकी रक्षा लज्जा ढांकना और शोभाके लिये। यह तीनों गुण खादीम ह अथवा नही? शरीरकी रक्षा खादीके समान दुसरा वस्त्र नही कर सकता। क्योंकी खादी गर्मीमे थडी रहती है और सर्दीमें गम। लज्जा तो खादीसे पूणत ढँक जाती है। क्योंकि खादी स्वभावसेही जाडी होती है। कुलवान व्यक्तिकी शोभा लज्जा ढांकनमें ही है। तीनों ध्यय हमारे खादीमें सफल होते ह।

खादीमे बधुत्व भाव भरा हुआ है। खादीमें सादगीका मूल स्थान है। खादीमें गरीब जनताका पोषण है। जहाँकि फॅशनेबल वस्त्रोंमें दीनोंका शोषण है। खादी देशकी सपत्तिको देशमें रखती है। विदेशी वस्त्र देशका धन लूटते है। खादीमें चटक मटक विकार नही है। नायलान, रेशम मलमल आदि अनक तरहके वस्त्रोमें विकार भरे हुये है। गोमाताकी चर्बीसे तन रहते है। विदेशी वस्त्र पहननेवालोंको उस चर्बीकी क्रिया लगती है।

तीनों गुणोंका विदेशी वस्त्रमें अभाव है। शरीर रक्षा पतले वस्त्रसे नहीं हो सकती। नायलोंन आदि कभी वस्त्र टी बी जभी भयकर बीमारीको उत्पन्न करते है। क्योंकी बहुत चिकने होनेके वजहसे वायका आगमन नही होता है। गर्मीमें गरम रहते है सर्दीमें थडे जिससे स्वास्थ्यको हानी पहुँचती है। द्रव्यभी बहुत खर्च होता है। टिकनेमेंभी थोडे समयमें फट जाते है। लज्जाका दिवाला निकल जाता है। शियलके नाशक मुख्य कारण है —

श्रमण भगवत महावीर स्वामीन फरमाया ह।—

लज्जा दया सयम बभ चेर
कल्याण भा गिरस्स विसोहि ठाण

२१ गुणोमेंसे लज्जा श्रावकका नववां गुण है।

While shame keeps watch, virtue is not wholly extinguished from the heart, nor will moderation be utterly expelled form the mind of the tyrant.

अर्थात जहाँतक लज्जा तुम्हारे हृदयकी निगराणी रखती है, वहाँतक सद्‌गुणोका दीपक चाहे जितना मद क्यो न पड़ जाय लेकिन बुझेगा नही। बैरीके हृदयमे भी यदि लज्जा होगी तो, कोमलता और नम्रता बिलकुल मृतप्राय न होगी।

कल्याण चाहने वाले व्यक्तिके लिये, लज्जा, दया, सयम और ब्रम्हचर्य ये, आत्माको शुद्ध करनेके स्थान है। अत: लज्जा जैसी महान वस्तुको सिर्फ शौक के लिये लुटा देना यह बुद्धिमत्ताका कार्य नही है। लज्जाको महिन वस्त्रोके लिये बेच दी तो फिर मानव और पशुमें क्या अतर रहा ? लज्जा जानेके बाद शोभा कहाँसे रह सकती है ? केवल अपनी श्रीमताईके तथा दिखावेके लिये, धनका, देशका, लज्जाका, दयाका, शरीरका और शियलका नाश करना कहाँतक न्यायसगत हो सकता है ?

अत सद्‌गुरुनाथके सदुपदेशसे कई गृहस्थोने खादी भडार खोले थे। जिससे कइ व्यक्तियोने खादी धारण की और पचेद्रिय जीवोकी हिंसाकी क्रियासे बचे तथा राष्ट्र, धन, लज्जा, दया, सयम, ब्रम्हचर्य और शरीर–रक्षा की थी। कथानायकजीने यह प्रतिज्ञा कर ली थी, खद्दर-धारीयोसेही वार्तालाप तथा धार्मिक चर्चा करना, जिससे बहुतसे लोग खादी पहनना सिख गये थे। जिससे परोक्ष रूपसे जीवदया प्रतिपालक करुण हृदयी गुरुदेव बहुतसे प्राणियोके रक्षक तथा दीन दु खियोके सहायक बने थे। जसे खादीकी टोपी देखतेही सामनेवाला व्यक्ति समझ जाता था कि गाधीका भक्त है। ऐसेहि खद्दरके वस्त्र और महावीर का पट्टा (मुँहपत्ती) देखकर बडे बडे सत पुरुष झट पहिचान जाते थे और फरमाते थे, " खादीवाले गणेशमलजी महाराजके दर्शन करके आये हैं। आप खादीवाले गणेशलालजी महाराजके नामसे प्रसिद्ध थे। हमारे कथानायकजी धार्मिक सतही नही थे, अपितु राष्ट्रीय सत भी थे।

प्रकरण २३ वाँ

रवि–अस्त

स्वप्नमेंभी जनता नही जानती थी कि तपस्वी सम्यकत्व प्रचारक गुरुदेवका यह अन्तिम चातुर्मासही है। ससारमें ऐसा कौन प्राणी है जो अमृतसे तृप्त हो ? परतु भाग्यने तो यह लिखही दिया था कि यह अंतिम प्रकाश है। नान्देड शहरमें सदगुरुनाथ पधारे उस दिन पूर्णासे सिधा अठारह मल प्रवास (पदल) करके पधारे थे। रास्तेमे गिर गये थे। सरमें बहुत चोट आगयी थी। खून बहने लगा तो कसकर एक पट्टा बाध लिया। परतु जराभी घबराये नही। यह एक अलौकिक आत्मबल था। सद्गुरुनाथके नान्देडमें चरण पडतेही चारोंओर आनंदकी लहरें उठने लगी। जिधरसे मेघ राजा उमड घुमड कर आता था। उधरसे दर्शनार्थियोके झुंड के झुंड आने लगे। एक तरफ मेघ राजा बरसता था दुसरी तरफ मगलमूर्ति गणेश गुरुदेवके मुखारविंदसे जिनवाणी की वर्षा हो रही थी। एक ओर बिजली चमक चमक कर प्रकाश फैलाती थी बादल गर्ज रहे थे। दुसरी ओर मुनियोंके सिरताज महामुनि तपस्वीजी तपका प्रकाश फैलाकर शुद्ध सम्यक्त्व को ग्रहण करनेकी गर्जना करते थे। मानो दोनों की प्रतिस्पर्धा हो रही थी।

मेघराजाका उस वर्षा ऋतुमें बहुतहि जोर शोर था। अतः जिस बगीचेके मकानमें तपोधनि तपस्वीजी विराजमान थे वहांतक नदी का प्रवाह आ गया था। मानो उसेभी असे महातपस्वीजीके चरण छूनकी उत्कंठा उत्पन्न हो गयी थी। परतु ज्योंही चबतरेको स्पर्श किया त्योंहि उसकी तृप्ति होगयी। आगे नही बढ सका। चार मासमें जिनवाणीकी धारा बर्षाते रहे और भव्य प्राणियोंका उद्धार करते रहे। तपस्वीजी महाराज जहाँ विराजते थे वहाँ त्याग और तप तो मानो साकार रूप धारण करके अवतरित हो जाते थे। मास खमण अर्धमास खमण अठाईयाँ आदि तपश्चर्या की तो झडी लग जाती थी।

यह अंतिम चातुर्मास पूर्ण हो रहा था। गुरुदेवको ज्वर आने लगा था। निर्मोहि सद्गुरुनाथ ज्वरकेभी ज्वर थे। वे उसकी क्यों मानते? संघने प्रार्थना की "हे संघ सिरताज, महापरोपकारी गुरुदेव कुछ दिन यहीं विराजिये। कारण आपका शरीर अस्वस्थ है"। आत्मवली सद्गुरुनाथने फरमाया –

"वह उसका काम करता है, मैं मेरा करूँगा। यह देह तो नश्वर है। मैं चेतन हूँ। इसके कहने अनुसार मैं चलूँ, या मेरे कहे अनुसार यह चले। मैं तो अपना नियम भंग नही करूँगा।"

बस कार्तिक पौर्णिमा होतेहि दुसरे दिन विहार कर दिया। विहारमें १०२ डिग्री बुखार आता रहता था। सुवहके वक्त कुछ कम हुवा कि कमर कसके आत्मवली, वीरके योद्धा तैयार हो जाते थे। इसतरह १५-१५ मैलका विहार करते रहते थे। आगे वढते जाते थे। नांदेडसे बुखारहि बुखारमें जालना पहूँच गये। जालना पधारनेपर फरमाते है अव स्थानपर आगया हूँ। अव, कोई फिकर नही।" वहाँ पहुँचनेपर भी ज्वरने पिछा नही छोडा था। कोई वैद्य आता तो फरमाते "पहिले तुम तुम्हारी नाडी देखलो, मेरी नाडी क्या देखोगे!" किसीकी हाथ लगानेकी हिम्मत नहीं होती थी। कभी दवाभी नही लेते थे। इस तरह २० दिन पूर्ण हो जाते है। शरीर के अवयव वहुतहि कमजोर हो जाते हैं। श्रमणसंघीय आचार्य प्रवर श्री आत्मारामजी म० सा० का स्वर्गवास हो जाता है। यह वात कानपर पडतेहि फरमाते, "खादी भंडारमेंसे गरीबोंको खादी वितरण कर दो"। गो शालामे भी अग्नि लग जाती है। बुझाने परभी तीन दिनतक जलती रहती है। वह अग्नि मानो सूचित कर रही थी, "गौओंका रक्षक अव जा रहा है"। थॉमस ग्रे कहता है-

Full many a gem of purest ray serene
The dark unfathom'd caves of ocean bear,
Full many a flower is born to blush unseen
And wast its sweetness on the desert air
– Thomas Gray

समुद्रकी गहराइमें अंधकारमें सुंदर किरणवाले चमचमाते बहुत से रत्न पडे हैं और बहुतसे फूल विजन जंगलोंमें उत्पन्न होते है खिलते है और नाश हो जाते है। विजन की डालपर फूल खिलता है उषाके साथ मुस्कराता है। दिनके मध्यान्हमें वहभी तपता है। संध्याको अपनी सौरभ लुटाकर विश्व रंगमंचसे विदा ले लेता है।

कुछ गुल तो दिखलाके बहार अपनी है जाते
कुछ सूखके कांटोंकी तरह नजर आते
कुछ गुल है फूले नही जामेंमें समाते
गुंचे बहुत ऐसे हैं जो खिलनेभी नही पाते।

कालस्य गहना गति ' तथा कालाय तस्मै नम ' कालकी गति गहन है। उस कालको नमस्कार हो जिसके सामने सभी झुकते है।

ज्वर बढता जारहा था। खांसीभी पिछा नही छोड रही थी। आत्मबली वीर योद्धाने मृत्युपर विजय प्राप्त करने को स्वयं ने माह वदि शुक्रवार त्रयोदशीके दिन सध्याके समय आत्मसाक्षी से स्वयं स्वमुखसे संथारा ग्रहण कर लिया था। जनताकी भीड लग रही थी। क्योंकि गुरुदेवकी अस्वस्थताकी सूचना चारों ओर फैल गयी थी।

अष्ट ग्रहभी केंद्र स्थानपर आगये थे। काली अमावस्या की रात अंधेरेमें मानो मृत्यलोकके रत्न चुरानेको आई थी। जिसे भगवान महावीर स्वामीके जन्म राशीपर भस्मग्रह था जिसका प्रभाव उनके संघपर पडा। ऐसेहि सद्गुरुनायकी राशी से यह सब अष्टग्रह बारहवे थ। प्रभो वीरका निर्वाण कार्तिक वदी अमावस्याको हुवा और सद्गुरुनायका स्वर्गारोहण माघ वदी अमावस्याकी रातमें वि० सं० २०१८ तदनुसार दिनांक ४-२-६२ को ८-४५ को। रविवार तो संघके लिये रिपु बनके आया। इधर तो सूर्यदेव अस्त हुय और उधर संघ शिरोमणीका ८-४५ (भारतीय समय) को अस्त हुवा।

अमावस्याकी काली रातने द्रव्य और भावसे चारोओर अंधकार फैला दिया। गुरुदेवका स्वर्गवास होनेही संघमें चारोओर तिमिर आच्छा-

दित हो गया। मगल फैलानेवाले मगलमूर्ति गणेशमलजी म० सा० का स्वर्गवास तो सबके दिलोमेंसे करुणा श्रोत बहाये विना नही रहा। हाय ! करालकाल, तूने यह क्या किया ? तूने कितनेहि अमूल्य तथा देदिप्यमान रत्न निगले होगे पर अभीभी तू सतुष्ट नही हुवा और न तू कभी सतुष्ट होगा। अष्टग्रहके वीचमें यह महान देदिप्यमान रत्न मृत्युलोकसे चला गया। ऐसे रत्नकी सघको पुन प्राप्ति होना दुर्लभहि नही अपितु अशक्य है।

सौरभमय जीवन – ठाणाग सूत्रमें चार प्रकारके पुष्प चले हैं। एक रूपसे सुदर और सुगध से युक्त जैसे चपा और गुलाबके पुष्प। एक फूल रूपसहित परतु सुगध रहित, जैसे आवलेका फूल। एक फूल रूपरहित परतु सुगधसहित जैसे पोयनका पुष्प और चौथा पुष्प रूप तथा गध रहित, जैसे धतुरेका पुष्प।

विश्वके विराट पुष्पोद्यानमे अनेक निर्गन्ध और रूपरहित पुष्प विक-सित होते है और मुरझा जाते है। उनसे प्रकृतिकी सुदरतामें या मोहरूपतामें कोई परिवर्तन नही होता। बहुतोके सबधमे तो ससार यहभी नही जानता के वे कब विकसित हुये और कब कुम्हला गये। न जनताने आखोसे देखा उनका विकसित होना और मुरझाना। कहनेमात्रके सिर्फ पुष्प थे। उसके अदर न जनमन नयनोका आकर्षण करनेका रूप था, न सौरभ। पर गुलाब तथा चपाका पुष्प जब डालपर विकसित होता है, तब अुनके आँख खोलतेहि प्रकृति-माताकी गोद सौरभ तथा सुगध से भर जाती है। हजारो हाथोसे सौरभ लुटाकर भूमडलके कण–कण को महका देना है। इसी प्रकार इस धरा–धामपर न जाने कितने मानव जन्म लेते है और मरते हे। ससार न अुनका पैदा होना जानता है और न मरना।

" करो परोपकार सदा, मरे बाद रहोगे जिदा।
नाम जिनका जिदा रहे अुनका तो मरना क्या है ! "

वे स्वार्थवामनाके पतग और भोगविलासके किडे ससारकी अधेरी गलियोमें कुछ दिन रेगते है और एक दिन काल कवलित हो जाते है।

थुनके जीवनका न कोई ध्येय होता है न कोई लक्ष्य। थुनका जीवन जिस साढेतीन हाथके पिण्ड या अधिक से अधिक एक छोटसे परिवार की सीमा तक सीमित होता है। जिसके आग वे न सोच सकते ह और न समझ ही सकते ह।

परंतु कुछ महामानव धरणी तलपर गुलाब के पुष्प बनकर अवतीर्ण होते ह। अनके द्वारा आंखे खोलतेहि घर परिवार का बगीचा खिल अठता है। समाज का सूना अगन मुस्कराहटसे भर आता है। और राष्ट्र प्रसन्नता तथा आशाओंकी हिलोरे लेने लगता है। वे स्वय जागरण की अंगडाई लेकर सोई हुयी मानवताके भाग्य को जगाते है। अनको पाकर मानव जगत नई स्फूर्ति नयी चेतना का अनुभव करता है। वे सुगधित पुष्प ससारसे चले जाते है, पर अपनी सौरभ सब के मस्तिष्कमें छोड जाते है।

सम्यक्त्व ज्योति जगानवाले घोर तपस्वी खादी प्रचारक श्रद्धय श्री तपस्वीजी महाराजभी मानवरूपी वाटिका के एक अैसेही पुष्प थ। वे स्वय महके और अपने आसपासके वातावरणकोभी सुवासित सौरभमय बनाया। त्याग सहिष्णुता और दृढतामें अुनके जीवनकी सौरभ देखी जाती है।

प्रकरण २४ वाँ

मेरे अनुभव

प्रथम दर्शन — श्री घोर तपस्वी श्री गणेशमलजी म सा के दर्शन का श्री गणश मक्ष १२ १४ की अवस्थामें घार लोणारमें हुवा था। अस समय श्रद्धेय गुरुदेव के साथ दो शिष्य थे — (१) अगरचदजी म सा (२) राजमलजी म सा। आप गांवके बाहर धारके पास की धर्मशालामें अुतरे थे। अुस समय हम तीन वैरागनियोंके नामसे पुकारी जाती थी। एक तो म दुसरे मेरे माताजी और तीसरी मेरे संसार पक्षमें मेरे

बहनकी नणंद। सयमी क्रियापात्र श्री घोर तपस्वीजीने फरमाया, " ले लो मैं तुम तीनोको दीक्षा दे देता हूँ "। परन्तु अुस समय हमें दीक्षाकी आज्ञा नहीं मिली थी। दिल तो बहुत लुभाया, परतु चारित्र मोहनीय कर्मका क्षय नही हुवा था। वचनसिद्ध श्री तपस्वीजी की वाणी कब खाली जानेवाली थी ? तीनोकीभी दीक्षा एक वर्षके अदरहि हो गयी। दर्शनका यह लाभ प्राप्त हुआ या शिष्या होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।

ज्योंही दीक्षा हुअी तबसे गुरुदेवके दर्शनकी अभिलाषा लग रही थी। परतु दीक्षा के बाद करीबन् १८ वर्ष बाद यह इच्छा पूर्ण हुई। मेरी दर्शन की उत्कट भावना जानकर प्रवर्तनीजी श्री जीने हमें ५ शिष्याओको दर्शनार्थ विहार करवाया। अुनकी स्वयकी भी दर्शनकी उत्कृष्ट भावना थी। परतु वे शरीर से अस्वस्थ थे। अत वे न पधार सके।

हम पाँचो 'ढाणकीमें' आये, अुस दिन गुरुदेवको मौन थी। अतः पहले दिनही सब श्रावक-श्राविकाओमे फरमाया " कल सतियाँजी म० सा० आरहे है "। सब श्रावक–श्राविका दूसरे दिन महावीर का पट्टा लगाकर, 'सद्‌गुरुनाथकी जय' का नारा लगाते हुये सामने आये। हम लोग सिधे गुरुदेवके दर्शन करने गये। गुरुदेवके दर्शन करके जो आनदका अनुभव हुवा, वह लेखनी वर्णन नही कर सकती। वह तो हमारी आत्मा अथवा सर्वज्ञही जान सकते है। वह दिन जीवनका सुवर्ण-दिन था। वह दिन तो वही था।

दूसरे दिन सद्‌गुरुनाथके चरणोमें शीष झुकाया तो पूज्य गुरुदेवने सब जनोकी सुख-साता पूछी, तो मानो कोई दरिद्रीको राज्य मिला हो ऐसा प्रतित हुआ। पूज्य गुरुदेवने शीघ्रहि मुझसे पूछा "क्या तूही प्रभा है"? गुरुदेव के दर्शन १९ वर्षके बादमे हुये थे। परतु फिरभी गुरुदेवने शीघ्रही पहचान लिया। धन्य है ऐसी स्मरणशक्ति को। मुझे जीवन में सर्वप्रथम उस दिन ही पितृप्रेम का अनुभव हुआ है। फिर पुज्य गुरुदेव मुझे त्यागकी, सयमकी शिक्षा देने लगे। फरमाते " प्रभा, व्यक्ति की कोई महिमा नही है, त्याग ही महान है। पहले मै जिस गाव में जाता तो श्रोताओकी बाट जोहता था। पुकारनेपरभी कोई नही आना चाहता था।

आज मे जिनसे कहता हूँ कि म वद्ध हो गया हू मुझे आत्म-साधना करने दो तो जनता मुझे नही छोडती है। यह सारी त्यागकी महिमा है। प्रभा सयम को अच्छा पालना त्याग बढाना । इत्यादि जो शिक्षा देते थ वे हृदयमें अंकित हो जाती थी। जसे कोई पुत्र गांवको जाता है, पिता अपने पुत्रको शिक्षा देता है वसे ही प्रेमपूर्ण अमतमय वाणीसे शिक्षा फरमाते थ। शास्त्रोंके प्रश्नोत्तरोसे शास्त्रीय ज्ञानका रहस्य दर्शाते थ। कभी भी अपनी प्रशंसा नही करते थ। प्रवर्तनीजी श्री गरुणीजी म सा के लिये फरमाते कि जिनकी शिष्यायें इतनी विद्वान है तो वे तो बहुतहि विद्वान होंगे। गुरुणीजी म सा ने दर्शन किय थ परन्तु उसको २१ २२ वर्ष हो चुके थ। हिम्मत और धर्यता उनके रोम रोम में झलकती थी। हमेशा यही फरमाते थे साधुको किसीभी हालतमें कायर नही होना चाहिए । मझ ' साधुकी चौरासी उपमा सिखाई और साथमें फरमाते देखो! जैसा मेरु पर्वत कभीभी कपायमान नही होता है एसे साधुको कभीभी संयम मार्गसे चलायमान नही होना चाहिए। ५६३ जीवोंकी मार्गणाके बोल सीखने को फरमाया। पन्नवणा सूत्रके थोकडे मुझसे सुनते और जहांभी कही गल्ती हो तो फरमाते जा पक्का पाठ करना '। गरुदेव का त्याग धैर्य सहिष्णुता स्पष्टवक्तापन के साथ अद्वितीय प्रेम सतशिक्षा ज्ञानका मान समदर्शिता तथा कठिन क्रिया सभी व्यक्तिपर प्रभाव डालेबिना नही रहते थे।

विनोदमूर्ती गुरुदेव – मने गरुदेव से पूछा कि अपनेंसे जो दीक्षा में बडे है उनको कसे पुकारना चाहिए? गांवका नाम लेना चाहिए या उनके नामसे? तो गुरुदेव फरमाते म तो तुम्ह प्रभाहि कहता हूँ। और क्या कहू? फिर फरमाया या तो उनके गोत्रसे तथा गुणानुसार नामसे। पूज्य गुरुदेवकी सेवाका सौभाग्य मझ तो करीबन १ मासकाहि मिला था। परन्तु वह मास मेरी जीवन नया का पतवार बन गया था। आजभी वह तपस कृश और तेजसे देदिप्यमान मूर्ति आंखोंके सामने आती है तो हृदय आनंद विभोर हो उठता है। अबभी वह प्रेमकी पुकार कानोंमें गूंज रही है। फिरसे प्रवर्तनीजी गुरुणीजी म सा के साथ दर्शन की अमर आशासे आ रही थी परन्तु भाग्यने कुछ औरही सोचा। बीचमेंही आशाकी माला तोड डाली। कहा भी है–

It lies not in our power to love or hate for will in us is over ruled

by Fate.

कार्य यह अपनी शक्ति, प्रेम तथा द्वेष पर अवलंबित नहीं है। इन सबपर अपना भाग्य राज्य करता है, दिलकी आशा दिलमेंही विलीन हो गयी।

प्रकरण २५ वाँ

उपसहार

पाठक गण! पूज्य श्री गुरुदेव, सम्यक्त्व प्रचारक, स्याद्वी प्रिय तपस्वी श्री कर्नाटक गज केसरीजी का जीवन-चरित्र समाप्त हो रहा है। क्योंकि हो गया कहूँ तो गुण तो बहुत है। उनका पूर्णतया वर्णन करना, यह मेरी बुद्धिके बाहरका कार्य है। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य जैसे विद्वानने अन्ययोगव्यच्छेदिकामें स्तुति करते हुये फरमाया है "स्वगम्य स्तोतुमह यतिष्ये" अर्थात स्वय ज्ञानको प्राप्त ऐसे भगवानकी मै स्तुति करनेका प्रयत्न करता हूँ। अत मेरे जैसी साधारण लेखिका जीवन-चरित्र पूर्ण लिखनेमें समर्थही कैसे सकती है?

पूज्य सद्‌गुरुनायके बाल्य जीवनपर हम दृष्टिपात करते हैं तो, उसमें मुख्यत दो गुण दृष्टिगोचर होते है। (१) स्वाभिमान और (२) निस्पृहता। गोद लेनेवालेके लालाइत होनेपरभी किसीके गोद न जाना, अपने पिताका नाम न गमाना। आगे चलकर धैर्यता साकार रूप लेकर आती है। माता पिता तथा भाई का वियोग होनेपरभी धैर्य नहीं छोडना। त्यागके मूलस्थान यही है, जोकि उनको त्यागकी ओर अग्रसर करते हैं, क्योंकि लग्न को छोडकर, वीतराग देवसे लगनी लगाते है।

दीक्षा लेनेके बाद त्यागका स्रोत ही बहाते है। परतु ऐसा नही।
"सज्जा दढ्ढा पाउरणम्मि अत्थि उप्पज्जई भोत्तु तहेव पाऊ"

कितनेक दीक्षा लेनेके बाद प्रमादी बन जाते हैं। परतु चरित्रनायकजी एकातर तप, स्वाध्याय तप, रसपरित्याग तप, इत्यादिक १७ प्रकारका सयम और १२ प्रकारका तप करके कर्मोंकी महान निर्जरा करते है। यह अन्य साधुओंके लिये एक महान आदर्श है।

'साध्नोति स्वपरकार्यमिति साधु

स्व और परका कार्य सिद्ध करता है उसे साधु कहा जाता है। कथा नायकजीने जनकल्याण के लिय कई एसे ठोस कार्य किये कि जिससे समाज उनका महान ऋणी है। जसे खादी प्रचार शांति आप गौ-शालाएँ और सम्यक्त्व प्रचार ये कार्य उनके जीवनको और राष्ट्रको, समाजको तथा धर्मको प्रगतिशील बनाया है। अन्य महा मुनियोंसे उनकी यह महान विशेषताएँ है। षटकायके प्रतिपालक गुरुदेवने वायुकाय पत्लाके लिए महावीर के पट्टकाभी जन-जनतरोंमें खूबही प्रचार किया है। उनका सम्य प्रचारभी धर्म—अनभिज्ञ जनता में ही विशेष रहा है। क्योंकि अन्धे को दृष्टि देना यह साधारण काम नही है।

उनकी चारित्रोज्वलता के कारण उनमें महान महान् शक्तियाँ भी प्राप्त हो गयी थी। जो कि भूत प्रेत व्यंतर उनके दर्शन मात्रसेही भाग जाते थे। स्पष्ट वक्तत्व उनका अनुपम गुण था। वे किसीसे भी नहीं संकुचाते थे। जो खरी बात होती वे स्पष्ट फरमा देते थे। हर तो उनसे डरता था। डरते थे सिर्फ कर्म बंधनसे। सूर्यके समान तीव्र और तेजस्वी होनेपरभी प्रेम प्रकाशकी कमी नही थी। वे फरमाते थे मैं तुम्हारे भले के लिए करता हूँ। तुम्हे एसी खरी खरी बात सुनानेवाले मेरे बाद क्वचित्‌ही मिलेंगे। कुंभकार के भाव उनमे पूर्णतया भरे हुए थे। जसे कुंभार कच्चे बर्तनको ऊपरसे ठोकता है पर अंदरसे हाथ का सहारा रखता है। बस इसी तरहसे वे स्पष्ट बोलते थे परंतु साथमें प्रेम का झरणा भी बहता रहता था। जन कल्याण के लिय वे शरीरकी पर्वा नही करते थे। वे अन्तिम समय तक विचरते रहे। और जनताका उद्धार करते रहे। धन्य है एसी महान आत्माको।

One crowded hour of glorious life
Is worth an age without a name.

मुहूर्तं ज्वलितं श्रेयो न च धूमायितं चिरम्

जीवन चाहे थोडा हो परतु उज्वलित हो। युगोंतक जीये परंतु जिस जीवनमें प्रकाश नही वह जीवन व्यर्थ है। सच्चा जीवनका अर्थ महामुनिसे समझ।

परिशिष्ट

१. पूज्य श्री गुरुदेवकी संक्षिप्त जीवनी

मातापिताका नाम	घुलीबाई, पुनमचदजी
जन्मभूमि	राजस्थानमें बिलाडा
गुरु और सम्प्रदाय	तपस्वी श्री प्रेमराजजी म० सा०, कोटा सम्प्रदाय
जन्मसवत्	: विक्रम स १९३६ कार्तिक शुक्ल षष्ठी
दीक्षा सवत	१९७० मिगसर सुद नवमी
रचनात्मक कार्य	खादी प्रचार, सम्यक्त्व प्रचार, गौशाला, धर्मप्रचार
शिष्य समुदाय	: त खेमराजजी म० सा०, राजमलजी म० सा०, अगरचदजी म० सा० और मिश्रीलालजी म० सा०
वर्तमानमें मौजूद शिष्य	श्री तपस्वी मिश्रीलालजी म सा, सपतलालजी म सा.
तप	एकान्तर तप अतिम समय तक चालु था ।
अतिम प्रयाणका क्षेत्र और सवत	जालना स २०१८ माघ वदी अमावस्या रवीवार, ता ४-२-६२, रातमें ८-४५ को हुवा ।
मृत्यु सस्कार	ता ५-२-६२, माघ सुदी १, सोमवार को ४ वजे को

२. नांदेड चातुर्मासके संस्करण

(द्वारा – श्री मिश्रीलालजी सकलेचा "नादेड")

गुरुदेवकी कृपासे जैन और अजैन लोगोपर त्यागका कितना प्रभाव पडा, उसे सक्षिप्तमे आपके सामने रख रहा हूँ ।

प्रथम यदि गुरुदेवका चातुर्मास 'नादेड' नही हुवा होता तो मेरे पिताजी 'मन्नालालजी सकलेचा' की कौनसी गति होती वह तो ज्ञानीही

जान सकते है। मेरे पिताजी को कॅन्सर की बिमारी थी। उसके उनको बहुत वेदनायें होती थी। वेदनायें न सहनके कारण वे विष पिनके लिये तयार हो गये थे और विष मगवानके लिये एक आदमीको पैसेभी दे दिये थे। परन्तु गुरुदेवकी असीम कृपा से उनके विचारमें परिवर्तन हो गया। उन्होंने अपने भाव प्रगट किये कि मै खुद ऐसा आत्माके पतन का कार्य करनेको उतारू हो गया था। गुरुदेवने अपने अमृतमय वाणी द्वारा उपदेश देकर इस प्रकार महान कार्य किया कि एकदम अपने विचारोंमें परिवर्तन करके त्यागमय जीवनके साथ वे अंतिम समयमें, संथारा करके पंडित-मरणके साथ स्वर्ग सिधारे।

२ अजैन भाईयोंकी गुरुदेवके प्रति श्रद्धा

(लेखक–मिश्रीलालजी सकलेचा नांदेड)

नांदेड नगरमें डा० श्रीनिवासजी शर्मा नामक एक ब्राह्मण रहते है। आपकी गुरदेवके प्रति अपार श्रद्धा है। एक दिन श्री गुरुदेव आपके यहाँ आहार पानी के लिये पधारे। उस दिन आपको उपवास का पारणा था। आपकी पत्नी मैके को जानेकी वजहसे आप लॉज (भोजनालय) में पारणा करने गये थे। लौट आने पर आपको ज्ञात हुवा की गुरुदेव आहार पानीके लिये पधारे थे और उसी परों वापस चले गये। यह सुनतेहि आपकी आँखोसे आँसू बहने लगे। आपकी आत्माको अत्यंत दुःख हुवा। (आप रुदन करने लगे मेरे हतभाग्य है कि ऐसे महान पुरुष मेरे द्वारसे खालीपात्र वापस गये। मै कितना पापी हूँ। किस जन्ममें मैंने किसीको इतना दुःख दिया जिसका फल मुझे भुगतना पडा।) उसी समय आपने प्रतिज्ञा कर ली कि जब तक गुरुदेव के पवित्र चरण मेरे घरपर नही पडेंगे तबतक मै जलपान नही करूंगा। गुरुदेव उस दिन तो आपके यहाँ नही पधारे। दुसरे दिन गुरुदेवको उपवास था। इस प्रकार आपने तीन दिनतक कुछभी ग्रहण नही किया। यह गुरुदेव के त्यागमय जीवन के प्रति अजैन भाईकी श्रद्धा का एक उदाहरण।

---

४. महा प्रयाण

(लेखक - डॉ पारसकुमार सोनी B. A., D. H. B.)

माघ वद्य ३० सवत् २०१८, तदनुसार दि. ४-२-६२ रविवार की रात, ससारी जीवोके लिये, सम्यकत्व-धारियोके लिये, दु खमय होनेवाली है, यह कौन जानता था ? उस दिन सायकाल से ही जालना-निवासी जैन-अजैन जनता अति चिन्तातुर थी। कारण नियती ने यह निश्चय कर लिया था कि आज के रात को ठीक ८-४५ को एक महान् आत्मा को पार्थिव शरीरसे अलग करना है। यह वही महान् आत्मा थी जो इस असार ससार मे 'कर्नाटक गज केसरी' श्री. पू. १००८ गणेशमलजी महाराज के नामसे प्रख्यात थी। किसे मालूम था कि आजका गुरुदेवका दर्शन यह अतिम दर्शन ठहरने वाला है ? कौन जानता था कि सवत् २०१७ का नादेड का चतुर्मास यह अतिम चातुर्मास ठहरनेवाला है ? कौन जानता था कि मिथ्यात्व-तिमिर नष्ट करनेवाला रवि अस्त होनेवाला है ? लेकिन काल के सामने किसीकी चली !

शरीर में तापमान तेजीसे वढ रहा था। प्रकृति के सभी सभाव्य विकारोने, इस दिव्य आत्म ज्योति को नश्वर प्रकृतिसे अलग करनेका ठाम लिया था। दृढ निश्चय करके वे आगे बढ रहे थे। उनका दोस्त मृत्यु भी समीप आरहा था। लेकिन वो म्लान-वदन था। कुछ घबरायासा था। वो तो आखिर नियती का नौकर ही तो था ! उसे इच्छा-अनिच्छा से आना ही पडा।

श्री गुरुदेव शात थे। उन्होने मृत्युपर विजय पा ली थी। त्रयोदशी को ही स्वय स्वमुखसे सथारा ग्रहण कर लिया था। गुरुदेव जानते थे कि मृत्यु भी जीवन की एक पर्याय है। मृत्यु का अर्थ है मर गया याने मरकर, यहांसे बिदा होकर गया - दूसरी जगह। आत्मा अमर है। जो बदलती वो पर्याय ! गुरुदेव रत्नत्रय धारक थे इसलिये वो मृत्युको भी जीत सके। जो मिथ्यात्वी रहता है वही मृत्युसे घबराता है। लेकिन जिसने जीवनमें मिथ्यात्व-तिमिर नष्ट करनेका व्रत ग्रहण किया है वह अ. किससे डरतो ?

औरंगाबाद नभोवाणीने गुरुदेव के स्वर्गवास की खबर जाहीर करते ही दूसरे दिन श्री गुरुदेव के पार्थिव देहके दर्शनार्थ हजारो लोग भिन्नभिन्न स्थानोंसे जालनामें आकर एकत्रित हुय। सोमवार के दिन प्राय २०।२५ हजार जनसमदाय के साक्षी में ३६ मन चंदन जो कि बॅगलोर से आया था उसमें उस निर्जीव देह पुद्‌गल को अग्नि सस्कार दिया गया।

महाप्रयाण के समय गुरुदेव के समीप सेवाभावी तपस्वी महान् साधक श्री १० ८ बसतीलालजी मुनि तथा शास्त्रपारगत सेवाभावी गुणनिधि महासतीयाँजी श्री श्री १० ७ हिराकवरजी (म मानकवरजी महाराज की सुशिष्या) १००७ चपाकँवरजी एव १००७ जगत्‌कवरजी (महासतीजी जडावकवरजी महाराज की सुशिष्या) उपस्थित थ। स्व गुरुदेव की अतिम सेवा करनेका महाभाग्य आपहि को प्राप्त हुआ। आपमें से श्री १ ०७ जगतकवरजी न महाप्रयाण के समय आगम शास्त्र पढकर सुनाया। कारण इच्छा होते हुअे भी प्रवर्तिनीजी महासती १ ८ मानकवरजी महाराजसा अपन अन्य पाच सुशिष्या सहित तथा सरल स्वभावी आगम पारगत श्रमण निग्गथो गुण सपन श्री १ ०७ म सतीजी जडावकवरजी तथा खादीधारी १ ०७ एलमकवरजी (म मान कवरजी म की सुशिष्या) समयपर गुरुदेवके अतिम दर्शन करनको स्थानपर पहुँच न पाय। इसी को कहते मानव सोचता कुछ और होता कुछ। आपको (म जडावकवरजीको) गुरुदेव के समीप रहकर सेवा करनका सद्‌भाग्य प्राप्त हुआ था तथा सब आगमोंमें पारगत होन के कारण गुरुदेवसे शास्त्रीय चर्चा करनका सुअवसर आपन खोया नही।

गुरुदेव समाज–सुधारका – धर्मोवरणमें पवित्रता लानेका – कार्य अधूरा छोडकर गय। काय प्रचारके लिये गुरुदेव म य समय नि शक थ। कारण सुशिष्य श्री श्री १ ०८ मिसरीलालजी महाराज तथा १० ८ प्रवर्तिनीजी मानकंवरजी एव १० ७ जडावकवरजी १ ७ पुष्पाकंवरजी १० ७ चपाकवरजी १००७ हिराकवरजी १ ७ एलमकवरजी एव १००७ प्रभाकवरजी पर अटल विश्वास था कि रहा हुआ अधूरा कार्य यह साधु–साध्वीयाँ पुरा करेंगे। आनवाला समय ही इसकी साक्ष दगा।

श्री गुरुदेव के आज्ञामे विचरनेवाले संत सतियोंकी नामावली

श्री कर्णाटक गजकेसरीजीके अज्ञामें विचरनेवाले संत

बाल ब्रह्मचारी, आतापना लनेवाले, महान घोर तपस्वी स्पष्ट वक्ता, दृढ़ प्रतिज्ञ, पंडित खद्दरधारी गुरुदेव के प्रधान शिष्य श्री श्री १००८ श्री मिश्रीलालजी महाराज साहाब

बा ब्र. सरल स्वभावी गुरु आज्ञाकारी विनयी श्री संपतलालजी म सा

बा. ब्र. विद्याभिलाषि नव दिक्षित श्री खुशालचंदजी म सा

और भी– घोर तपस्वी उत्तम साधक क्रियापात्र सुर्य। श्री बसंतीलालजी म सा

सतियोंकी नामावली प्रवर्तनी पद अलंकृता सर्व शास्त्र पारगत पंडित रत्ना, प्रिय वक्ता सागरवत गंभिरा, क्षमा मूर्ती श्रीमान कुंवरजी महासतिजी म सा

विदुषि पंडिता व्याख्यान दात्री श्री जडाव कुँवरजी म सा

सेवाभावी श्री धन कुँवरजी म. सा

विदुषि वैर्यशाली श्री वृद्धि कुँवरजी म सा.

बा. ब्र. विनय शील शास्त्र विशारद श्री पुष्पा कुँवरजी म सा

स्पष्ट वक्ता श्री हिरा कुंवरजी म. सा.

सेवाभावी श्री सदाकुंवरजी म. सा

सेवाभावी श्री एलम कुंवरजी म सा.

वैर्यशाली श्री विरज कुँवरजी म सा.

बा ब्र सिद्धान्ताचार्य श्री प्रभाकुंवरजी म सा

बा ब्र न्यायतीर्थ प्रथमा श्री रोशनकुंवरजी म. सा.

श्री चपाकुंवरजी म सा.

विद्याभिलाषी सिद्धान्तशास्त्री श्री प्रमोद कुँवरजी म. सा

सेवाभावी श्री जगत कुँवरजी म सा.

सिद्धान्त विशारद विद्याभिलाषी श्री दिलिप कुंवरजी म सा.

१॥ श्री गुरुदेवाय नमः ।

श्री गणेशलालजी महाराजका सिलोका लिख्यते :-

सरस्वती माता तुम पाय लागूँ देव गुरुतणी अज्ञा मागु ।।
जीभ अग्रेतु बेसजे आय, वाणी तणी तू करजे सवाय ।।१।।
आघो पाछो कोई अक्षर थाय, माफ करजे दोष जो थाय ।।
कविजन आगल मारी शीमती, दोष टालजो माता सरस्वती ।।२।।
तपस्वीजी केरो कहूँ श्लोको, अेक चित्तथी साभलजो लोको ।।
विलाडापूरते जन्म भूवास, वीसा ओसवाल, ललवाणी खास।।३।।
पिता पुनमचदजीना नद, माता घुलीबाई आनद ।।
ललवाणी कुटुबे जन्म जो लिया, माता-पिताना मनोरथ फलिया ।।४।।

अनुक्रमें गुरुजी मोटा थाय, गुरु प्रेमराजजीने शरणे जाय ।।
पैतीस वर्ष वयमे प्रवेशी, गुरुजीना हृदय दिधा संतोषि ।।५।।
त्यागी कुटुम्बने त्याग्यो है गाम, माता-पिताको राख्यो है नाम ।।
नगर शूलमे सयम लिध, उत्तम काम कर्युछे सिद्ध ।।६।।
एकांतर तपमा बाँधीछे वृत्ति, तपस्वीजी ये किधी शुभज मति ।।
स्वादिष्ट वस्तु सर्वे त्यागी, द्रव्य सहु मेलवी भोगे वैरागी ।।७।।
दही, शक्कर लेवानो जाणो, तेना तपस्वीजी किना पच्छक्खाणो ।।
लुक्ष वृत्ति थई सुखडी मेली, मेवा मिष्ठान्न दिधाछे ठेली ।।८।।
ग्रामोगाममा जाप करावे पापना वृन्द शिघ्र अुडावे ।।
ज्यां जावे त्या आनद वर्तावि, तपना प्रभावे विघ्न विरलावे ।।९।।
"खटकालमा" खटकी छे वात, सम्यक्त्व रत्न देवे छे हाथ,
मोक्ष नगरनी बतावे चावी, ज्ञान जेहनो एवो प्रभावी ।।१०।।

ज्यां त्यां गोशाला करी तयार, गो मातानी सुनी पुकार ॥
केटली गायोंना प्राण बचाई, कसाओ पासेथी लिनी छुडाई ॥११॥
वीर वाणीने खुब गजावी मिथ्यात्विने दिधा हटावी ॥
अुपदेश आपनो अमत तुल्य, तेनुन थाय कोई थी मुल्य ॥१२॥
अधम उद्धारण गुरुजी आप, चारो सघमें मुक्यो ते कांप ॥
आशा तृष्णाना तारज तोडी, मोह ममताने दिधाछे छोडी ॥१३॥
करुणाना गुरुजी गुणनिधी, क्रिया करिछे बहुज विधि ॥
कला केलवणी खूब कहाय पुनित पगले तपस्या थाय ॥१४॥
जहुना दर्शन थी रोग विरलाय भूत प्रेतने व्यतर सहु जावे ॥
द्रव्यने भावे सुखी सहु थावे, गुरुना दशन थी आनद पावे ॥१५॥
डगलेने पगले तपस्या बहु थावे, देखी जनता आश्चय पावे ॥
जन धममें सूय सम दीपे, जन जनतर आवे समीपे ॥१६॥
स्वमति अन्यमति कोई न गजे, पाखडी सहु देखीन भजे ॥
पारस लोहाने कचन बनावे, अज्ञानोने गुरु ज्ञान सिखावे ॥१७॥
सहिष्णुतानो गुण अजब उपसग परिग्रह सह्या गजब ॥
कषाय कालीमा किधी दूर क्षमा खडग धायु हजुर ॥१८॥
विजय पताका आपे फरकावी । आत्मा ज्योति दिधि जगावी ॥
कीर्ति फलावी गामोंते गाम, सुधार्या गुरुजी सहुना काम ॥१९॥
एवा अगणित गुरुगुण वन्द केम कथि शकु मति रे मद ॥
गुण गाता तो दु खज जाय, नाम लेता मगल थाय ॥२०॥
तपस्वीओना जण शरणज लीधा, चितित कारज करे छ सिधा॥
नाग विच्छीनी धासज जाय स्थिरता जना मनमा थाय ॥२१॥
शुमभावसे नीलोको गावे राज काजमें फत्त सव पावे ।
ऋद्धि सिद्धि सुखसपति पावे, दु खमारी बिमारी सहु
विरलावे ॥२२॥

दोय हजारने साल अठ्ठारह गुरुजीना गुणनी जोडी माल ॥
भाव सहित जे कठमा धारे, भवसागरसे शीघ्र उबारे ॥२३॥

माघ वदी नवमी सोमवार, अरणी माहि जोडयो है सार ॥
जो कोई प्राणी हृदयमा धारे, मनवछित कार्य सबहि सारे ॥२४॥

आपनी चेली होश थी बोले, नावे कोई तपस्वीजीने तोले ॥
गुणीना गुणनी एह छे माल, निश्चय मानजो बाल गोपाल ॥२५॥

२. जय होवे ।

(तर्ज . श्रीराम का डका लकामे बजवा दिया ।)

जय होवे, हा जय होवे, गुरुराज तुम्हारी जय होवे ।
जय होवे, हा जय होवे, तपसीराज तुम्हारी जय होवे ॥टेर॥

हे पुनमचदके पूर्ण चद्र हो, गुरुराज तुम्हारी जय होवे ।
हे धूली मातके अनुपम रत्न हो, सघ शिरोमणी जय होवे ।१।

हे समकित रत्न के दाता हो, गुरुराज तुम्हारी जय होवे ।
हे मिथ्याधकर मेटन हारे, योगेद्र तुम्हारी जय होवे ।२।

हे अधिव्याधि सब दुःख हर्ता मंगलेश तुम्हारी जय होवे ।
हे आनद घन हो सब जीवोके मगल मुर्तिकी जय होवे ॥३॥

हे जैन सघके ज्योतिधर सूर्येश तुम्हारी जय होवे ।
हे अटल तपस्वी श्रमण संघमे श्रमणेश तुम्हारी जय होवे ।४।

हे ज्ञान कुज के इच्छानिधी, चारित्र चुडामणी जय होवे ।
वदन हम सब मिल करते है, वदनेश तुम्हारी जय होवे । ५ ।

३ अमर जीवो

(तर्ज श्री महावीर स्वामिकी सदा जय हो ।)

गुरुवर घोर तपस्वीजी अमर जीवो, अमर जीवो
शुद्ध सम्यक्त्व दाता हो, अमर जीवो २
पिता पूनमचदजी ह, धूली माताके मोती हो ।
फलाई ज्योति समकित की ।। अमर० ।।१।।

युवा वयमें लिया सयम, त्याग प्रपच दुनियाका ।
गलाई देह तपस्याम ।। अमर० ।। २ ।।

दुःखी रोगी दरिद्रीभी, सताय भूत व्यतरसे ।
दश करके । सुखी होते ।। अमर० ।। ३ ।।

दवा तपस्याकी देते हो नही मन्त्रादि टोना ह
सुरा सुर सिर झुकाते ह ।। अमर० ।। ४ ।।

हटा मिथ्या तीमिर तुमने सूय सम्यक्त्व चमकाया ।
मिले प्रकाश हमकोभी । अमर० । ५ ।

४ पवित्र पावन

(तर्ज पावन पुरुषोत्तम भगवान ।)

पावन घोर तपस्वी महाराज ज्ञान का रग चढाते ह ।
ज्ञानका रग चढाते ह, मिथ्यात्व को दुर भगाते ह ।।टेर।।
दूर दूरसे दशन करन नर नारी मिल आते ह ।
चरण स्पश के भाग्यसराते मुखसे गुरु गुण गाते ह
। पावन ।। १ ।।

गुरुसे मिथ्या अन्धकार को छिनमें हटाते हैं ।
रूसे रोके पाप प्रवृत्ति धर्म बढाते है ॥पावन॥२॥
देसे देते ज्ञान दान का प्रकाश फैलाते है ।
बसे बसो हृदय मन्दिर मे भविजन मन भाते है॥ पावन ॥३॥
गुरु पद को सार्थक करते हो देते तपका दान
ले ले के भवी प्राणी खुश हो पाते अमर विमान ॥पावन॥४॥
मुझ पतित की यही विनती दे दो सम्यक्ज्ञान
चारित्रमे दृढ वन जाऊ, होवे मेरा कल्याण ॥पावन॥५॥

— ५ —

(तर्ज कदम-कदम बढाये जा ।)

सुबे शाम प्रेमसे ध्यान लगाए जा,
गुरुजीके चरणोमे मस्तक झुकाये जा ।सुबे०।
घुलीमाके लाल है, दीनोके दयाल है ।
सब कामोको छोडकर, इन्हीको तू ध्याए जा ।सुबे०।१॥
गुरु आये वर्षाकाल, कितनेहि दूरसे चाल ।
दर्शन करके प्यारे जीया आनद मनाए जा ।सुबे०।२॥
करले जीनवाणीसे प्यार, तब होगा तेरा उद्धार ॥
सच्ची श्रद्धा धारके जनम, मरण मिटाए जा ।सुबे०।३॥
मिथ्यात्व हटायके, शुद्ध समकित को पायके ॥
सच्चा जैनी बनके प्यारे कर्तव्य निभाए जा ।सुबे०।४॥
तपस्वीजी महान है, गुण रतनोकी खान है ॥
करके सेवा प्यारे तू तो, बधन हटाये जा । सुबे०। ५ ॥
२०१८ साल, नादेड सघको किया निहाल ॥
युग-युग जीवो गुरुराज भावना ये भाये जा ।सुबे०।६॥

'मिश्रीलाल'की यही पुकार देना गुरुजी मुझको तार ॥
शरणे आय आपके लाज को रखाये जा । सुबे०।७॥

६ धर्म परिवार

(तर्ज जावो जावो ए मेरे साधु रहो गुरुके संग ।)

प्यारा प्यारा लगता है गुरुवर आपतणा परिवार ॥टेर॥
दृढ धर्य है पिता आपका, कभी न डिगने देता ।
अष्ट प्रवचन माताकी गोदमें, निश दिन खुशी मनाता
॥प्या०॥१॥
मन को संयममें रखना है सग्गा भाई सहाई ।
पुत्र आपका प्रिय सत्य है, दया भगिनी सुखदाई
॥प्या०॥२॥
शांती आपकी प्रिय गृहिनी, तपकी निधि महान ।
ज्ञानामृत नित भोजन करते, और देते यही दान
॥प्या०॥३॥
इतना है परिवार आपके भोले अकेले कहते हैं ।
इस परिवार रहित भवि प्राणी, सौ में रह नहीं तरसे
॥प्यारा०॥४॥
राजाओंके महाराजा हो, झुकते सबके शीश ।
अनाथोंके नाथ आप हो, संयम के हो ईश
॥प्यारा०॥५॥ इति

७ उपकारी

(तर्ज रघपति राघव राजाराम ।)

घोर तपस्वी है गुणवान करते है उपकार महान ।
झुकता है चरणोंमें जहान ॥घोर०॥टेर॥
मिथ्या मत का करते नाश, ज्ञान ज्योतिका है प्रकाश ।
देते समकीत रत्न का दान ॥घोर०॥१॥

त्याग दिया संसार जजाल, तपमे देह दिनी गाल ।
शूर वीर है सिह समान ॥घोर०॥२॥
नभमें तारे होते अपार, तद पिन दूर करे अधकार ।
मुनि मडलमे चद्र समान ॥घोर०॥३॥
"प्रभाकुमारी" करती अरजी, ही जावे गुरुवर की मर्जी ।
छिनमें होवे आत्म कल्याण ॥घोर०॥४॥

— ८ —

(तर्ज : तुमको लाखो प्रणाम ।)

घोर तपस्वी गुरुराज, तुमको लाखो प्रणाम,
तुमको क्रोडो प्रणाम ॥टेर॥
तपका है प्रभाव अनोखा, जनता ने आँखो से देखा ।
तपका तेज अपार,तुमको लाखो प्रणाम ॥१॥
महा वैद्य हो महा उपकारी, रोग शोग देते निवारी ।
तपकी दवा महान, तुमको लाखो प्रणाम ॥२॥
सुई, दवाई डॉक्टर देते, ऑप्रेशन भी है वह करते ।
मरीज सुधारे नाथ, तुमको लाखो प्रणाम ॥३॥
अठ्ठाईका देते इन्जेक्शन, मासखमण का करते ऑप्रेशन ।
आनंद शाती वरताय, तुमको लाखो प्रणाम ॥४॥
तेले, चोलोकी देते दवाई, लेते है सब जन हर्षाई ।
लेने "प्रभा" आई, तुमको लाखो प्रणाम ॥५॥

— ९ —

(तर्ज पन्नजी मुंडे वोल मोहन गारा ।)

मोहन गारा रे, मोहन गारा रे, श्री घोर तपस्वी लागे प्यारा रे,
जग हितकारा रे ॥टेर॥

मरुभूमीमें जन्म लिया है शहर बिलाडामांही रे।
पूर्णचंद्र के लाल कहीजे, मिथ्या नशाया रे ॥ मोहन० ॥ १ ॥

धूली मातने जन्म दिया है तपकी ज्योति जगाई रे।
खंडन कर पाखंड अज्ञान की धूल उडाई रे ॥ मोहन० ॥ २ ॥

सूर्यसदृश है तेज आपका अज्ञान उल्लु भग जावे रे।
ज्ञान रश्मीसे भव्य जनोंके, हृदय कमल विकसावे रे
॥ मोहन० ॥ ३ ॥

बहुत दिनोंकी प्यासी गुरुवर, आप दर्शन तांई रे।
ज्ञानामृत का दान देयकर किजो मुझ भवपारी रे
॥ मोहन० ॥ ४ ॥

— १० —

(तब मन डोले मेरा।)

गुरु ज्ञानी को गुरु ध्यानी को हम
नित उठ करे प्रणाम रे, गुरु गणेश हमारे है ॥ टेर ॥

मुखपर जिनके सोहे मुहपत्ती सादे वस्त्र अंग।
पवित्र निर्मल शरीर जिन्होंका साथ रहे सत्संग ॥ गुरु साथ ॥
शुद्ध आचारी बने ब्रम्हचारी, जपे जीनंदका नाम रे
॥ गुरु० ॥ १ ॥

पुनमचंदजीके पुत्र आप हो माता धुलीके लाल।
ग्राम बिलाडा मरुधर भूमि, जन्मे दीनदयाल
॥ जन्मे दीनदयाल
जो मुख जोवे मन खुश होवे, कहे अति गुलजार रे
॥ गुरु० ॥ २ ॥